उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

अक्तूबर-दिसंबर, 2015

निर्णय-सूची

	पृष्ठ संख्या
इदारा हरिबाबू **बनाम** तुल्लुरी वेंकट नरसिंघम और अन्य	185
कीर्ति पाल **बनाम** पश्चिमी बंगाल राज्य	11
न्यायमूर्ति के. एस. पुट्टास्वामी (सेवानिवृत्त) और एक अन्य **बनाम** भारत संघ और अन्य	153
बिवश चन्द्र देबनाथ **उर्फ** बिवश डी और अन्य **बनाम** पश्चिमी बंगाल राज्य	35
भगत सिंह और एक अन्य **बनाम** हरियाणा राज्य (देखिए – पृष्ठ संख्या 49)	
मध्य प्रदेश राज्य **बनाम** अशोक और अन्य, आदि	96
रमन लाल और एक अन्य **बनाम** हरियाणा राज्य	49
रवीन्द्र **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य	1
विजय शंकर **बनाम** हरियाणा राज्य	137
वी. के. मिश्रा और एक अन्य **बनाम** उत्तराखंड राज्य और एक अन्य	106
शबनम **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य	70
सलीम **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य (देखिए – पृष्ठ संख्या 70)	
सेल्वराज **बनाम** कर्नाटक राज्य	168

संसद् के अधिनियम

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम, 2005 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ	(1) – (19)

अक्तूबर-दिसंबर, 2015 [संयुक्तांक]

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

प्रधान संपादक
अनूप कुमार वार्ष्णेय

संपादक
डा. एम. सी. पांडेय

महत्वपूर्ण निर्णय

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1947 (1947 का 2) – धारा 5(1)(घ) – रिश्वत की स्वीकृति – मामले के तथ्यों और परिस्थितियों, साक्षियों के साक्ष्यों और प्रस्तुत दस्तावेजों से युक्तियुक्त संदेह से परे यह साबित नहीं होता है कि अभियुक्त ने रिश्वत की मांग की और उसे स्वीकार किया, अतः अभियुक्त को रिश्वत की स्वीकृति के अपराध के लिए दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता ।

सेल्वराज बनाम **कर्नाटक राज्य** 168

संसद् के अधिनियम

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम, 2005 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ (1) – (19) क्रमशः

पृष्ठ संख्या 1 – 203 **[2015] 4 उम. नि. प.**

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका – अक्तूबर-दिसंबर, **2015** [संयुक्तांक] [पृष्ठ संख्या **1 – 203**]

संपादक-मंडल

डा. जी. नारायण राजू,
सचिव, विधायी विभाग

डा. एन. आर. बट्टू, संयुक्त सचिव एवं विधायी परामर्शी, विधायी विभाग

डा. बी. एन. मणि,
सेवानिवृत्त अपर विधि सलाहकार, विधि मंत्रालय

प्रो. डा. वैभव गोयल,
सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ
विधि विभाग

डा. सुरेन्द्र कुमार शर्मा, प्रिन्सिपल,
विधि विभाग, डी आई आर डी, गुरु गोविंद सिंह इन्द्रप्रस्थ विश्वविद्यालय

डा. ऋषिपाल सिंह,
सेवानिवृत्त संयुक्त सचिव एवं विधायी परामर्शी, राजभाषा खंड

श्री लालजी प्रसाद,
सेवानिवृत्त प्रधान संपादक, वि.सा.प्र.

श्री कृष्ण गोपाल अग्रवाल,
सेवानिवृत्त संपादक, वि.सा.प्र.

श्री अनूप कुमार वार्ष्णेय,
प्रधान संपादक

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय,
संपादक

श्री विनोद कुमार आर्य,
संपादक

श्री कमला कान्त,
संपादक

सहायक संपादक : सर्वश्री अविनाश शुक्ला, असलम खान, पुण्डरीक शर्मा और जगमाल सिंह

उप-संपादक : सर्वश्री महीपाल सिंह और जसवन्त सिंह

कीमत : डाक-व्यय सहित

एक प्रति : ₹ 57

वार्षिक : ₹ 225

© 2015 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रकाशन और विक्रय प्रबंधक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय (विधायी विभाग), भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा.................................. द्वारा मुद्रित ।

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 16288/68

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं – उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिकाओं में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के क्रमशः चयनित सिविल और दांडिक निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । इन पत्रिकाओं को और अधिक आर्कांक बनाने के लिए इनमें जनवरी, 2010 के अंक से महत्वपूर्ण केन्द्रीय अधिनियमों का प्राधिकृत हिन्दी पाठ पाठकों की सुविधा के लिए शृंखलाबद्ध रूप से प्रकाशित किया जा रहा है । तीनों निर्णय पत्रिकाओं की वार्षिक कीमत केवल ₹ 495/- है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 225/- है, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 135/- है और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 135/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें ।

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

दूरभाा : 011-23387589, 23385259, 23382105

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रय के लिए उपलब्ध विधि पाठ्य पुस्तकों की सूची

	पुस्तक का नाम	लेखक	पृष्ठ सं.	कीमत (₹)
1.	भारत का विधिक इतिहास	श्री सुरेन्द्र मधुकर	410	30.00
2.	माल विक्रय और परक्राम्य लिखत विधि	डा. एन. पी. परांजपे	371	40.00
3.	वाणिज्य विधि	डा. आर. एल. भट्ट	630	108.00
4.	अपकृत्य विधि के सिद्धान्त (तृतीय संस्करण)	श्री शर्मन लाल अग्रवाल	357	40.00
5.	अंतर्राष्ट्रीय विधि के प्रमुख निर्णय (द्वितीय संस्करण)	डा. एस. सी. खरे	273	115.00
6.	मानव अधिकार	डा. शिवदत्त शर्मा	340	120.00
7.	दण्ड प्रक्रिया संहिता	न्या. महावीर सिंह	840	200.00

पुस्तकों की सूची जिन पर छूट देने की स्वीकृति प्राप्त की गई है ।

	पुस्तक का नाम	लेखक	पृष्ठ सं.	मूल दर (₹)	संशोधित दर (₹)
1.	संविदा विधि (द्वितीय संस्करण)	डा. रामगोपाल चतुर्वेदी	552	275.00	137.00
2.	श्रम विधि (तृतीय संस्करण)	श्री गोपी कृष्ण अरोड़ा	658	452.00	226.00
3.	चिकित्सा न्यायशास्त्र और विष विज्ञान (तृतीय संस्करण)	डा. सी. के. पारिख अनुवादक डा. एन. के. पटोरिया	969	293.00	146.00
4.	आधुनिक पारिवारिक विधि	श्री राम शरण माथुर	767	429.00	214.00
5.	भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम (कालजयी निर्णय)	संकलन संपादन – ब्रह्मदेव चौबे	209	225.00	112.00
6.	हिन्दू विधि (द्वितीय संस्करण)	डा. रवीन्द्र नाथ	617	425.00	212.00
7.	भारतीय दंड संहिता	डा. रवीन्द्र नाथ	696	741.00	370.00
8.	भारतीय भागीदारी अधिनियम (द्वितीय संस्करण)	श्री माधव प्रसाद वशिष्ठ	272	165.00	82.00
9.	प्रशासनिक विधि (तृतीय संस्करण)	डा. कैलाश चन्द्र जोशी	635	200.00	100.00
10.	विधिक उपचार (द्वितीय संस्करण)	डा. एस. के. कपूर	414	311.00	155.00
11.	विधि शास्त्र	डा. शिवदत्त शर्मा	501	580.00	377.00

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45)

– धारा 141 और 149 – विधिविरुद्ध जमाव तथा सामान्य उद्देश्य – जहां आरोपित पांच अभियुक्तों में से दो अभियुक्तों को दोषमुक्त किया जाता है वहां जमाव केवल तीन अभियुक्तों का ही माना जाएगा जो स्पष्टतः विधि-विरुद्ध जमाव गठित नहीं करता, अतः अभियुक्तों को विधि-विरुद्ध जमाव के लिए दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता ।

रमन लाल और एक अन्य बनाम **हरियाणा राज्य** 49

– धारा 149 – विधिविरुद्ध जमाव – 27 अभियुक्तों का आरोप से मुक्त हो जाना किंतु शेष अभियुक्तों का संख्या में पांच से अधिक पाया जाना – साक्ष्य से यह साबित होने पर कि तीन अपीलार्थियों के अतिरिक्त अन्य व्यक्तियों ने भी अपराध में भाग लिया था, ऐसी स्थिति में केवल तीन अभियुक्तों को भी धारा 149 के अधीन दोषसिद्ध किया जा सकता है ।

बिवश चन्द्र देबनाथ उर्फ **बिवश डी और अन्य** बनाम **पश्चिमी बंगाल राज्य** 35

– धारा 302 – हत्या – पारिस्थितिक साक्ष्य – अपीलार्थी-अभियुक्त को अंतिम बार मृतक के साथ देखे जाने, उसके द्वारा न्यायिकेतर संस्वीकृति किए जाने और बरामदगी संबंधी परिस्थितियों को अभियोजन पक्ष द्वारा विश्वसनीय साक्ष्य द्वारा सिद्ध नहीं करने के कारण ऐसी पूर्ण शृंखला का गठन नहीं होने पर जो अभियुक्त की दोषिता को इंगित करती हो, अभियुक्त को दोषमुक्त करना उचित होगा ।

विजय शंकर बनाम **हरियाणा राज्य** 137

– धारा 302/34 – सामान्य आशय सहित हत्या – अपीलार्थी-अभियुक्तों (प्रेमी-प्रेमिका) के प्रेम संबंधों का प्रेमिका के परिवार द्वारा विरोध करने के कारण अभियुक्तों द्वारा

पृष्ठ संख्या

प्रेमिका के परिवार के सात सदस्यों की नींद में सोते हुए गला काटकर नृशंसतापूर्वक हत्या – मृत्यु दंडोदश – अपराध की गुरुतरकारी परिस्थितियों से अपराध की योजनाबद्ध, सोची-समझी, नृशंस, निर्दयी प्रकृति उपदर्शित होने पर अभियुक्तों के सुधरने और भविष्य में अपराध न करने की कम संभावना को देखते हुए निचले न्यायालयों द्वारा दिए गए मृत्यु दंडादेश की पुष्टि करना उचित होगा ।

शबनम बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** 70

– धारा 302 और धारा 120ख – हत्या – आपराधिक षड्यंत्र – एक अभियुक्त द्वारा दूसरे अभियुक्त को टेलीफोन किया जाना – साक्ष्य की श्रृंखला का पूर्ण न पाया जाना – टेलीफोन-कॉलों और बरामदगी से अभियुक्त पर संदेह होता है किंतु संदेह सबूत का स्थान नहीं ले सकता, साथ ही साक्ष्य की ऐसी श्रृंखला न बनने से जिससे अभियुक्तों को षड्यंत्र के अपराध से संबद्ध किया जा सके, इन अभियुक्तों की दोषसिद्धि कायम नहीं रखी जा सकती और वह अपास्त की जानी चाहिए ।

कीर्ति पाल बनाम **पश्चिमी बंगाल राज्य** 11

– धारा 302 और 149 – हत्या और सामान्य उद्देश्य – प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के साक्ष्य और मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट से यह स्पष्ट होता है कि अभियुक्तों ने तलवार से आक्रमण किया और जलते हुए टायर पीड़ित व्यक्ति पर फेंके जो उनकी ओर से विधिविरुद्ध जमाव के सदस्य के रूप में सामान्य उद्देश्य के अग्रसरण में की गई तैयारी और अपराध को साबित करता है, अतः, अभियुक्तों को हत्या और सामान्य उद्देश्य के अपराध से दोषमुक्त किया जाना न्यायोचित है ।

मध्य प्रदेश राज्य बनाम **अशोक और अन्य, आदि** 96

– धारा 302 और 304 – हत्या और हत्या की कोटि में न आने वाला मानव वध – अपीलार्थी और मृतक के बीच

पृष्ठ संख्या

अचानक लड़ाई होना – हत्या का कोई पूर्व-चिन्तन न किया जाना – अपीलार्थियों द्वारा बिना किसी पूर्व-चिन्तन के मृतक पर हमला किया गया था, ऐसी स्थिति में अपीलार्थियों को हत्या के लिए नहीं अपितु हत्या की कोटि में न आने वाले मानव वध के अपराध का ही दोषी ठहराया जा सकता है ।

बिवश चन्द्र देबनाथ उर्फ **बिवश डी और अन्य** बनाम **पश्चिमी बंगाल राज्य** 35

– धारा 304 भाग I – हत्या की कोटि में न आने वाला मानव वध – जहां अभियुक्त द्वारा किए गए कार्य का आशय मृत्यु कारित करना न हो किंतु आशय ऐसी शारीरिक क्षति पहुंचाना हो जिससे मृत्यु कारित करने की संभावना हो वहां अभियुक्त धारा 304 भाग I के अर्थान्तर्गत दोषसिद्ध किए जाने का दायी होगा ।

रमन लाल और एक अन्य बनाम **हरियाणा राज्य** 49

– धारा 304ख और 498क – दहेज मृत्यु – शिकायतकर्ता-मृतका के पिता द्वारा दर्ज कराई गई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में अभियुक्त-प्रत्यर्थियों को संदाय किए गए धन का ब्यौरा और मृतका को दहेज के लिए यातना देने और तंग करने का उल्लेख न होना – जब तक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में किए गए अभिकथनों को गढ़ा जाना उपदर्शित न होता हो, अभियोजन के वृत्तांत को केवल इस आधार पर संदेहास्पद नहीं माना जा सकता है कि उसमें सभी ब्यौरे अंतर्विष्ट नहीं हैं और उसमें अभियोजन पक्षकथन के मोटे-मोटे तथ्यों का उल्लेख होना ही पर्याप्त होगा ।

वी. के. मिश्रा और एक अन्य बनाम **उत्तराखंड राज्य और एक अन्य** 106

– धारा 304ख और 498क – दहेज मृत्यु – स्त्री के साथ क्रूरता और उसे तंग किया जाना – साक्ष्य की विश्वसनीयता

पृष्ठ संख्या

– शिकायतकर्ता-मृतका के पिता के कथन में अभियुक्तों द्वारा मृतका से दहेज की मांग करने और उसे तंग करने का उल्लेख न होना – मृतका के पिता द्वारा अपीलार्थियों-अभियुक्तों को किए गए धन के संदाय का साक्ष्य सटीक और संगत होने और उसकी पुष्टि बैंक-विवरणी द्वारा किए जाने पर उसके कथन की विश्वसनीयता प्रभावित नहीं होती है क्योंकि एक पिता जो अपनी युवा पुत्री की मृत्यु के कारण स्वयं मानसिक पीड़ा में हो, उससे अपने कथन में प्रत्येक बात का उल्लेख करने की प्रत्याशा नहीं की जा सकती है ।

वी. के. मिश्रा और एक अन्य बनाम **उत्तराखंड राज्य और एक अन्य** 106

– धारा 304ख और 498क [सपठित साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 113क और 113ख और दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 3 और 4] – दहेज मृत्यु – अभियोजन पक्ष द्वारा यह साबित कर दिए जाने पर कि मृतका के साथ उसके पति और ससुराल के अन्य व्यक्तियों द्वारा उसकी मृत्यु के कुछ पूर्व क्रूरता की गई थी और उसे तंग किया गया और अभियुक्तों द्वारा उनके विरुद्ध उद्भूत उपधारणा का खंडन करने में असफल रहने पर निचले न्यायालयों द्वारा उनको दोषसिद्ध करते हुए अभिलिखित किए गए एक जैसे निष्कर्षों में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है ।

वी. के. मिश्रा और एक अन्य बनाम **उत्तराखंड राज्य और एक अन्य** 106

– धारा 304ख और 498क [सपठित दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 3 और 4] – दहेज मृत्यु – दंडादेश – घटना 18 वर्ष पहले की होने और अभियुक्त-पति द्वारा पहले ही पांच वर्ष से अधिक का कारावास भुगत लेने तथा सास-ससुर की वृद्ध आयु होने की बात पर विचार करते

पृष्ठ संख्या

हुए उनको दिए आजीवन कारावास को कम करके क्रमशः 10 वर्ष और 7 वर्ष करने से न्याय की पूर्ति हो जाएगी ।

वी. के. मिश्रा और एक अन्य बनाम **उत्तराखंड राज्य और एक अन्य** 106

– धारा 376 – बलात्संग – अभियोक्त्री द्वारा तत्काल रिपोर्ट दर्ज कराया जाना – आहत के साक्ष्य की विश्वसनीयता – वस्त्रों पर पाए गए वीर्य की मात्रा का परीक्षण के लिए अपर्याप्त पाया जाना – योनिक लेप में शुक्राणुओं का अभाव – अभियोक्त्री द्वारा तत्काल रिपोर्ट दर्ज कराए जाने और उसका साक्ष्य विश्वसनीय पाए जाने पर, अन्य साक्ष्य से संपुष्टि की जानी आवश्यक नहीं है, अतः बलात्संग के अपराध के लिए की गई अपीलार्थी की दोषसिद्धि न्यायोचित है ।

रवीन्द्र बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** 1

– धारा 376(2) – बलात्संग – घटना को 20 वर्ष बीत जाना – अभियोक्त्री और अपीलार्थी का अपने-अपने जीवन साथी के साथ वैवाहिक जीवन बिताना – अभियोक्त्री और अपीलार्थी के बीच कार्यवाही न किए जाने का समझौता – अभियोक्त्री और अपीलार्थी के बीच कोई कार्यवाही न किए जाने का समझौता होने पर और दोनों का अपने-अपने जीवन साथी के साथ वैवाहिक जीवन बिताए जाने की स्थिति में अपीलार्थी को कम दंड अभिनिर्धारित किया जा सकता है ।

रवीन्द्र बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** 1

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1947 (1947 का 2)

– धारा 5(1)(घ) – रिश्वत की स्वीकृति – मामले के तथ्यों और परिस्थितियों, साक्षियों के साक्ष्यों और प्रस्तुत दस्तावेजों से युक्तियुक्त संदेह से परे यह साबित नहीं होता है कि अभियुक्त ने रिश्वत की मांग की और उसे स्वीकार

पृष्ठ संख्या

किया, अतः अभियुक्त को रिश्वत की स्वीकृति के अपराध के लिए दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता ।

सेल्वराज बनाम **कर्नाटक राज्य** 168

संविधान, 1950

– अनुच्छेद 21 – एकांतता का अधिकार – आधार कार्ड स्कीम – संविधान के अनुच्छेद 21 के अधीन एकांतता का अधिकार मूल अधिकार के रूप में उपवर्णित नहीं है बल्कि अनुच्छेद 21 से परिलक्षित किया गया है – सरकार उक्त स्कीम के अधीन निवासियों के जन सांख्यिकी और जीव सांख्यिकी दोनों के आंकड़े एकत्रित और संगृहीत कर रही है जिसका उपयोग विभिन्न प्रयोजनों के लिए किया जाना है – निवासियों के जन सांख्यिकी और जीव सांख्यिकी आंकड़ों का संग्रहण उनके एकांतता के मूल अधिकार का अतिक्रमण है या नहीं – मामला वृहत्तर न्यायपीठ को निर्दिष्ट किया गया ।

न्यायमूर्ति के. एस. पुट्टास्वामी (सेवानिवृत्त) और एक अन्य बनाम **भारत संघ और अन्य** 153

साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1)

– धारा 3 [सपठित दंड संहिता, 1860 की धारा 302] – हत्या – पारिस्थितिक साक्ष्य – साक्ष्य की श्रृंखला का पूर्ण पाया जाना – चूंकि साक्ष्य पूर्णतया पारिस्थितिक है और परिस्थितियों से अभियुक्त के दोषी होने का निष्कर्ष युक्तियुक्त संदेह के परे निकलता है और बिना किसी त्रुटि के अभियुक्त का दोषी होना इंगित होता है, इसलिए हत्या के अपराध के लिए की गई अभियुक्त की दोषसिद्धि न्यायोचित है ।

कीर्ति पाल बनाम **पश्चिमी बंगाल राज्य** 11

– धारा 106 – साबित करने का भार – अभियुक्त के मृतका के साथ अंतिम बार देखे जाने और मृतका के मृत पाए

पृष्ठ संख्या

जाने की बीच समयान्तराल का कम पाया जाना – अभियुक्त द्वारा स्पष्टीकरण न दिया जाना – अभियुक्त ने यह स्पष्ट नहीं किया है कि वह मृतका से कब, कैसे तथा किस रीति में अलग हुआ था, अतः वह सबूत के भार का वहन करने में असफल रहा, इसलिए हत्या के अपराध के लिए की गई दोषसिद्धि न्यायोचित है ।

कीर्ति पाल बनाम **पश्चिमी बंगाल राज्य** 11

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5)

– आदेश 39, नियम 1 और 2 तथा आदेश 41, नियम 5 [सपठित आंध्र प्रदेश मंडल परिषद् सदस्य (सहयोजित), अध्यक्ष और उपाध्यक्ष और जिला परिषद् सदस्य (सहयोजित), सभापति और उप सभापति निर्वाचन संचालन नियम, 2006 – नियम 22(1)] – अधिकारिता का वर्जन – आंध्र प्रदेश जिला परिषद् के सभापति को निरर्हता के आधार पर पद से हटाने का निदेश देकर उप सभापति को सभापति का प्रभार ग्रहण करने के लिए कहना विधि के सुस्थिर सिद्धांतों के विरुद्ध है, अतः सभापति को निर्वाचन अर्जियों के निष्कर्ष के आधार पर ही हटाया जा सकता है ।

इदारा हरिबाबू बनाम **तुल्लुरी वेंकट नरसिंघम और अन्य** 185

तुलनात्मक सारणी
उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका
[2015] 4 उम. नि. प.
अक्तूबर-दिसम्बर, 2015

क्र. सं.	निर्णय का नाम व तारीख	उम. नि. प.		ए. आई. आर. (एस. सी.)		एस. सी. सी.	
1	2	3		4		5	
1.	रवीन्द्र **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य (26.2.2015)	[2015] 4	1	2015	1369	(2015) 4	491
2.	कीर्ति पाल **बनाम** पश्चिमी बंगाल राज्य (16.4.2015)		11		-	11	178
3.	बिवश चन्द्र देबनाथ **उर्फ** बिवश डी और अन्य **बनाम** पश्चिमी बंगाल राज्य (16.4.2015)		35		-	11	283
4.	रमन लाल और एक अन्य **बनाम** हरियाणा राज्य (15.5.2015)		49		-	11	1
5.	शबनम **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य (15.5.2015)		70		-	6	632
6.	मध्य प्रदेश राज्य **बनाम** अशोक और अन्य, आदि (1.7.2015)		96		-	12	92

1	2	3	4	5
7.	वी. के. मिश्रा और एक अन्य **बनाम** उत्तराखंड राज्य और एक अन्य (28.7.2015)	[2015] 4 106	2015 3043	(2015) 9 588
8.	विजय शंकर **बनाम** हरियाणा राज्य (4.8.2015)	137	3686	12 644
9.	न्यायमूर्ति के. एस. पुट्टास्वामी (सेवानिवृत्त) और एक अन्य **बनाम** भारत संघ और अन्य (11.8.2015)	153	3081	8 735
10.	सेल्वराज **बनाम** कर्नाटक राज्य (18.8.2015)	168	3834	10 230
11.	इदारा हरिबाबू **बनाम** तुल्लुरी वेंकट नरसिंघम और अन्य (15.9.2015)	185	–	– –

[2015] 4 उम. नि. प. 1

रवीन्द्र

बनाम

मध्य प्रदेश राज्य

26 फरवरी, 2015

न्यायमूर्ति एम. वाई. इकबाल और न्यायमूर्ति पिनाकी चन्द्र घोष

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 376 – बलात्संग – अभियोक्त्री द्वारा तत्काल रिपोर्ट दर्ज कराया जाना – आहत के साक्ष्य की विश्वसनीयता – वस्त्रों पर पाए गए वीर्य की मात्रा का परीक्षण के लिए अपर्याप्त पाया जाना – योनिक लेप में शुक्राणुओं का अभाव – अभियोक्त्री द्वारा तत्काल रिपोर्ट दर्ज कराए जाने और उसका साक्ष्य विश्वसनीय पाए जाने पर, अन्य साक्ष्य से संपुष्टि की जानी आवश्यक नहीं है, अतः बलात्संग के अपराध के लिए की गई अपीलार्थी की दोषसिद्धि न्यायोचित है ।

दंड संहिता, 1860 – धारा 376(2) – बलात्संग – घटना को 20 वर्ष बीत जाना – अभियोक्त्री और अपीलार्थी का अपने-अपने जीवन साथी के साथ वैवाहिक जीवन बिताना – अभियोक्त्री और अपीलार्थी के बीच कार्यवाही न किए जाने का समझौता – अभियोक्त्री और अपीलार्थी के बीच कोई कार्यवाही न किए जाने का समझौता होने पर और दोनों का अपने-अपने जीवन साथी के साथ वैवाहिक जीवन बिताए जाने की स्थिति में अपीलार्थी को कम दंड अभिनिर्धारित किया जा सकता है ।

इस मामले में अपीलार्थी रवीन्द्र ने शिकायतकर्ता नर्मदाबाई के साथ उसकी सहमति के बिना उसके साथ मैथुन किया । अभियुक्त को बलात्संग के अपराध के लिए गिरफ्तार किया गया और उसका विचारण दंड संहिता की धारा 376 के अधीन अपर सेशन न्यायाधीश, खरगोन, मध्य प्रदेश द्वारा किया गया और उसे इस अपराध का दोषी अभिनिर्धारित किया गया । विचारण न्यायालय के इस आदेश से व्यथित होकर अपीलार्थी ने मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, इन्दौर के समक्ष अपील फाइल की । उच्च न्यायालय ने भी विचारण न्यायालय के आदेश की पुष्टि करते हुए अभियुक्त-अपीलार्थी को

दोषी ठहराया । उच्च न्यायालय के इस आदेश से व्यथित होकर अपीलार्थी ने उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । उच्चतम न्यायालय ने अपीलार्थी की दोषसिद्धि कायम रखी किंतु उसे अधिनिर्णीत दंड की मात्रा को कम करते हुए अपील का निपटारा किया । अपील का निपटारा करते हुए,

अभिनिर्धारित – यह सुस्थापित है कि ऐसी महिला जो बलात्संग का शिकार हुई है, वह सह-अपराधी नहीं हो सकती । उसके साक्ष्य पर सह-अपराधी के साक्ष्य के रूप में संदेह के साथ विचार नहीं किया जा सकता । वास्तव में, उसका साक्ष्य, आहत शिकायतकर्ता या आहत साक्षी के साक्ष्य जैसा है । अभियोक्त्री का परिसाक्ष्य, यदि स्वयं में विश्वसनीय पाया जाता है, अपराधी को दोषसिद्ध करने के लिए पर्याप्त हो सकता है और उसके साक्ष्य की सम्पुष्टि अन्य साक्ष्य से करना आवश्यक नहीं है । द्वितीयतः, बलात्संग के अभियोजन के मामले में विधि के अधीन सम्पुष्टि अपेक्षित नहीं है । अभियोक्त्री के साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि की जा सकती है । यह केवल अत्यंत सतर्कता के साथ ही किया जा सकता है कि न्यायालय साक्ष्य की शुद्धता को परखने के लिए थोड़ा ध्यान सम्पुष्टि की ओर भी लगाए और मिथ्या अभियोगों को खारिज करे । इस प्रकार, न्यायालय का यह मत है कि विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को दंड संहिता की धारा 376 के अधीन दोषसिद्ध करने में कोई त्रुटि नहीं की है । अभियोक्त्री का कथन विश्वसनीय है । अभियोक्त्री द्वारा तत्काल प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई गई है और उसके कथन की पुनः पुष्टि किया जाना अपेक्षित नहीं है । (पैरा 4)

न्यायालय का यह मत है कि अपीलार्थी का मामला दंड संहिता की धारा 376(2)(छ) के परंतुक का अवलंब लिए जाने के लिए एक उचित मामला है जिसमें कम दंड अधिनिर्णीत किया जा सकता है क्योंकि इस घटना को 20 वर्ष बीत चुके हैं और यह तथ्य समुचित है और इसके लिए विशेष कारण उपलब्ध हैं कि पक्षकार विवाहित हैं और उन्होंने समझौता कर लिया है । अतः, यद्यपि न्यायालय ने अपीलार्थी की दोषसिद्धि कायम रखी किंतु अपीलार्थी के दंड को कम करके उसे पहले से भोगे गए कारावास की अवधि जितना दंड अधिनिर्णीत करते हैं । (पैरा 18)

अवलंबित निर्णय

		पैरा
[1994]	(1994) 5 एस. सी. सी. 728 : **नारायणम्मा** बनाम **कर्नाटक राज्य और अन्य** ।	14

निर्दिष्ट निर्णय

[2014]	(2014) 2 एस. सी. सी. 395 : **हेम राज** बनाम **हरियाणा राज्य ;**	13
[2012]	(2012) 7 एस. सी. सी. 171 : **नरेन्द्र कुमार** बनाम **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली) ;**	15
[2011]	ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 697 : **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **छोटेलाल ;**	6
[2011]	(2011) 13 एस. सी. सी. 705 : **बलदेव सिंह और अन्य** बनाम **पंजाब राज्य ;**	17
[2006]	(2006) 10 एस. सी. सी. 92 : **सदाशिव रामराव हडबे** बनाम **महाराष्ट्र राज्य और एक अन्य ;**	15
[2004]	(2004) 3 एस. सी. सी. 106 : **दस्तगीर साब और एक अन्य** बनाम **कर्नाटक राज्य ;**	12
[1983]	ए. आई. आर. 1983 एस. सी. 911 : **शेख जाकिर** बनाम **बिहार राज्य ।**	6

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2013 की दांडिक अपील सं. 1410.

1997 की दांडिक अपील सं. 1275 में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय की इंदौर न्यायपीठ के तारीख 12 मार्च, 2013 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से — सर्वश्री सुशील कुमार जैन (ज्येष्ठ अधिवक्ता) और (सुश्री) खुशबू जैन (सुश्री प्रतिभा जैन की ओर से)

प्रत्यर्थी की ओर से — सर्वश्री (सुश्री) आयशा चौधरी, मुशर्रफ चौधरी और सी. डी. सिंह

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति पिनाकी चन्द्र घोष ने दिया ।

न्या. घोष – यह अपील 1997 की दांडिक अपील सं. 1275 में मध्य

प्रदेश उच्च न्यायालय की इंदौर न्यायपीठ द्वारा पारित किए गए तारीख 12 मार्च, 2013 के उस निर्णय और आदेश के विरुद्ध विशेष इजाजत द्वारा फाइल की गई है जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने सेशन विचारण मामला सं. 288/94 में अपर सेशन न्यायाधीश, खरगोन द्वारा अपीलार्थी को अधिनिर्णीत दंडादेश की पुष्टि की । विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता, 1860 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "दंड संहिता" कहा गया है) की धारा 376(1) के अधीन दोषसिद्ध किया और 2,000/- रुपए के जुर्माने के साथ 10 वर्ष का कठोर कारावास भोगने तथा जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम किए जाने पर 6 मास का अतिरिक्त साधारण कारावास भोगने का दंडादेश दिया ।

2. मामले के तथ्यों का सार इस प्रकार है कि तारीख 24 अगस्त, 1994 को शिकायतकर्ता नर्मदाबाई अभियुक्त रवीन्द्र के खेत पर मजदूरी करने गई । जब वह लगभग दोपहर 12.00 बजे मूंग के दाने तोड़ रही थी, अभियुक्त रवीन्द्र उसके निकट आया, उसने उसका हाथ पकड़ा, उसे नीचे गिरा लिया और उसकी सहमति के बिना उसके साथ मैथुन किया । शिकायतकर्ता चिल्लाई किन्तु उसके निकट कोई भी व्यक्ति मौजूद नहीं था । शिकायतकर्ता के पेटीकोट पर अभियुक्त के वीर्य के धब्बे लग गए । बलात्संग कारित करने के पश्चात् अभियुक्त घटनास्थल से भाग गया । अभियोक्त्री (अभि. सा. 1) अपने घर पर आई और उसने अपने माता-पिता को घटना के बार में बताया । उसकी माता ने अभियोक्त्री के मामा शंकर सिंह (अभि. सा. 4), पहाड़ सिंह (अभि. सा. 5) और अभियोक्त्री के पिता को बुलाया । उसी दिन अभियोक्त्री द्वारा पुलिस थाना भीकागांव में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई । श्रीमती वंदना सरकानूनगो (अभि. सा. 3) द्वारा शिकायतकर्ता और अभियुक्त की चिकित्सा परीक्षा की गई और उसने इस संबंध में रिपोर्ट प्रस्तुत की । तारीख 1 सितंबर, 1994 को गिरफ्तारी ज्ञापन के अनुसार अभियुक्त को गिरफ्तार किया गया । अभियोक्त्री और अभियुक्त के कपड़ों को न्यायालयिक प्रयोगशाला भेजा गया । अन्वेषण पूरा किए जान के पश्चात्, न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, भीकागांव के समक्ष दंड संहिता की धारा 376 के अधीन अभियुक्त के विरुद्ध आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया जिसे आपराधिक मामला सं. 590/94 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया ।

3. निचले न्यायालय द्वारा निकाले गए निष्कर्ष, जैसाकि आक्षेपित निर्णय में कथन किया गया है, इस प्रकार हैं कि घटना के समय

अभियोक्त्री (अभि. सा. 1) की आयु 16 वर्ष से अधिक थी । अभि. सा. 1 ने अपने कथन में अत्यंत स्पष्ट रूप से वर्तमान अपीलार्थी के विरुद्ध यह अभिकथन किया है कि जब वह अपीलार्थी-अभियुक्त के खेत में अकेली थी, वह उसके पास आया और अभियुक्त ने बलपूर्वक उसके दोनों हाथ पकड़ लिए और इसके पश्चात् उसके कपड़े उतार दिए और बलात्संग किया । डा. (श्रीमती) वंदना सरकानूनगो (अभि. सा. 3) ने अभियोक्त्री के आंतरिक और बाह्य अंगों पर कोई भी क्षति नहीं पाई और यह राय दी कि अभियोक्त्री मैथुन के लिए अभ्यस्थ थी । अपीलार्थी को मिथ्या आलिप्त किए जाने पर, अभिलेख पर अभियोक्त्री के पिता नंद किशोर (अभि. सा. 2) के कथन में यह उल्लेख है कि नंद किशोर ने अपीलार्थी से 500/- रुपए उधार लिए थे । किंतु अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 ने यह अभिसाक्ष्य नहीं दिया है कि उपर्युक्त कारण से उनके बीच पहले से शत्रुता चली आ रही थी । उच्च न्यायालय द्वारा आक्षेपित निर्णय में इस पहलू पर यह निष्कर्ष निकाला गया कि यदि कोई शत्रुता थी, तब अपीलार्थी-अभियुक्त अपने खेत में काम करने के लिए अभियोक्त्री को बुलाने नहीं जा सकता था । अपीलार्थी-अभियुक्त को चिकित्सक ने मैथुन करने के लिए सक्षम पाया है । अभियोक्त्री के अंतःवस्त्रों पर वीर्य पाया गया है ।

4. पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्यों पर विचार करने के पश्चात् उच्च न्यायालय का यह मत है कि यह सुस्थापित है कि ऐसी महिला जो बलात्संग का शिकार हुई है, वह सह-अपराधी नहीं हो सकती । उसके साक्ष्य पर सह-अपराधी के साक्ष्य के रूप में संदेह के साथ विचार नहीं किया जा सकता । वास्तव में, उसका साक्ष्य, आहत शिकायतकर्ता या आहत साक्षी के साक्ष्य जैसा है । अभियोक्त्री का परिसाक्ष्य, यदि स्वयं में विश्वसनीय पाया जाता है, अपराधी को दोषसिद्ध करने के लिए पर्याप्त हो सकता है और उसके साक्ष्य की सम्पुष्टि अन्य साक्ष्य से करना आवश्यक नहीं है । द्वितीयतः बलात्संग के अभियोजन के मामले में विधि के अधीन सम्पुष्टि अपेक्षित नहीं है । अभियोक्त्री के साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि की जा सकती है । यह केवल अत्यंत सतर्कता के साथ ही किया जा सकता है कि न्यायालय साक्ष्य की शुद्धता को परखने के लिए थोड़ा ध्यान सम्पुष्टि की ओर भी लगाए और मिथ्या अभियोगों को खारिज करे । इस प्रकार, उच्च न्यायालय का यह मत है कि विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को दंड संहिता की धारा 376 के अधीन दोषसिद्ध करने में कोई त्रुटि नहीं की है । अभियोक्त्री का कथन विश्वसनीय है । अभियोक्त्री द्वारा तत्काल

प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई गई है और उसके कथन की पुनः पुष्टि किया जाना अपेक्षित नहीं है ।

5. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय ने नर्मदाबाई (अभि. सा. 1) और नंद किशोर (अभि. सा. 2) के कथनों में आए इन विरोधाभासों को अनदेखा किया है कि अभियोक्त्री को खेत में प्रातःकाल बुलाया गया था या दोपहर में या एक दिन पूर्व । उच्च न्यायालय ने बिना किसी साक्ष्य के विचारण न्यायालय के इस निष्कर्ष को स्वीकार करने में त्रुटि की है कि अभियोक्त्री के शरीर पर कोई भी क्षति इसलिए नहीं पाई गई है कि बलात्संग रेत पर कारित किया गया था । काउंसेल ने यह दलील दी है कि अभियोक्त्री के कपड़ों पर कुछ रेत पाए जाने के सिवाय अभियोक्त्री द्वारा ऐसा कोई भी कथन नहीं दिया गया है कि यह घटना सादा मिट्टी पर घटित हुई थी, इससे क्षति पहुंचने की संभावना समाप्त हो जाती है । अभियोक्त्री की चिकित्सा परीक्षा के संबंध में डा. वंदना ने, जिसने अभियोक्त्री की चिकित्सा परीक्षा की थी, ऐसी कोई भी निश्चित राय नहीं दी है जिससे यह पता चल सके कि अभियोक्त्री के साथ बलात्संग किया गया और अभियोक्त्री के गुप्तांगों या शरीर के अन्य भाग में कोई भी क्षति नहीं पाई गई । यद्यपि, अभियोक्त्री का यह कथन है कि उस खेत में बलात्संग किया गया जहां पर ज्वार की पांच फुट ऊंची और मूंग की चार फुट ऊंची फसल खड़ी हुई थी । अभियोक्त्री ने यह भी कथन किया है कि अभियुक्त ने उसे खेत में 15-20 मिनट तक जकड़े रखा था किंतु न तो अभियोक्त्री के शरीर पर और न ही अपीलार्थी के शरीर पर क्षति का कोई चिह्न पाया गया । अपीलार्थी का कथन भी चिकित्सीय साक्ष्य से मेल नहीं खाता है ।

6. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल के अनुसार उच्च न्यायालय ने **शेख जाकिर** बनाम **बिहार राज्य**[1] वाले मामले का अवलंब लेने में त्रुटि की है और यह अभिनिर्धारित किया है कि दंड संहिता की धारा 376 के अधीन अभियुक्त को दोषसिद्ध करने के लिए किसी भी सम्पुष्टि की आवश्यकता नहीं है, न्यायिक विनिश्चयों की एक ऐसी लंबी पंक्ति है जिनमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि जब किसी मामले में एक ही न्यायाधीश द्वारा विचारण किया जाता है और मामला अभियोक्त्री के ऐसे साक्ष्य पर आधारित होता है जिसकी अन्य साक्ष्य से सम्पुष्टि न की गई हो, तब ऐसी

[1] ए. आई. आर. 1983 एस. सी. 911.

स्थिति में मात्र इस आधार पर दोषसिद्ध करना अवैध नहीं होगा । एक वयस्क और विवाहित महिला के मामले में उसके साक्ष्य की सम्पुष्टि किए जाने पर बल देना उचित होगा । इसके अतिरिक्त, अपीलार्थी के काउंसेल द्वारा यह दलील दी गई है कि उच्च न्यायालय ने **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **छोटेलाल**[1] वाले मामले का अवलंब लेने में त्रुटि की है क्योंकि यह मामला वर्तमान मामले को लागू नहीं होगा ।

7. अपीलार्थी के काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि यह ऐसा मामला है जिसमें अभियोक्त्री द्वारा सहमति दिए जाने की संभावना है । अभियोक्त्री ने यह साबित करने का प्रयास किया है कि उसकी आयु 16 वर्ष से कम है और यह तथ्य वर्तमान मामले में मिथ्या पाया गया है । चिकित्सीय साक्ष्य से यह दर्शित होता है कि अभियोक्त्री की योनिच्छद पहले से विदीर्ण थी और वह विरोपण के प्रक्रम पर थी । बलात्संग के संबंध में चिकित्सा-परीक्षा रिपोर्ट में कोई भी निश्चित राय नहीं दी गई है । डा. वंदना (अभि. सा. 3) के कथन से भी यह पुष्टि होती है कि नर्मदाबाई के शरीर पर या उसके गुप्तांगों पर कोई भी क्षति नहीं पाई गई थी । उसकी योनिच्छद पहले से विदीर्ण थी और विरोपण की अवस्था में थी । अभियोक्त्री और अभियुक्त दोनों में किसी के भी शरीर पर कोई क्षति नहीं पहुंची थी जबकि यह घटना ऐसे खेत में घटित हुई थी जिसमें ज्वार की फसल पांच फुट और मूंग की फसल चार फुट ऊंची खड़ी हुई थी और वे 15-20 मिनट तक लिपटे हुए थे ।

8. अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 के इन स्वीकृत कथनों को दृष्टिगत करते हुए कि रिपोर्ट दर्ज कराने के पूर्व उन्होंने अपीलार्थी के पिता के समक्ष समझौते का प्रस्ताव रखा था और जब अपीलार्थी का पिता समझौता करने के लिए सहमत नहीं हुआ तब उन्होंने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई । नंद किशोर (अभि. सा. 2) ने स्वयं यह स्वीकार किया है कि उसने अपीलार्थी के पिता से 3-4 वर्ष पूर्व 500/- रुपए प्राप्त किए थे और आज तक वापस नहीं किए हैं । इस प्रकार, मिथ्या मामला दर्ज कराया गया है क्योंकि उस रकम को वापस करने की मांग की गई थी । अभि. सा. 4 और अभि. सा. 5 ने, जो दोनों ही अभियोक्त्री के मामा हैं, उसके साक्ष्य का समर्थन नहीं किया है और उन्हें पक्षद्रोही घोषित किया गया है ।

9. इसके अतिरिक्त, विद्वान् काउंसेल ने विचारण न्यायालय के निर्णय

---

[1] ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 697.

का अवलंब लेते हुए यह दलील दी है कि अभियोक्त्री यह सिद्ध करने में असफल रही है कि उसकी आयु 16 वर्ष से कम है और तथ्य को दृष्टिगत करते हुए कि अभियोक्त्री के शरीर पर कोई भी चिह्न या क्षति नहीं पाई गई थी, वर्तमान मामला यदि मैथुन का है तो वह सहमति से किया गया है ।

10. इसके प्रतिकूल राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने अभियोक्त्री के पेटीकोट पर वीर्य पाए जाने के तथ्य का अवलंब लिया है । यह निवेदन किया गया है कि रासायनिक परीक्षण रिपोर्ट से यह पता चलता है कि वस्त्रों पर पाए गए वीर्य के नमूने का साक्ष्य अभियुक्त से संबद्ध किए जाने के लिए पर्याप्त नहीं था ।

11. अब हम इस प्रश्न पर विचार करेंगे कि यह मामला दंड संहिता की धारा 376 के परंतुक के अधीन आता है या नहीं ताकि "समुचित और विशेष कारणों" के आधार पर कम दंड अधिनिर्णीत किया जा सके । वर्तमान मामले में, यह घटना 20 वर्ष पूर्व घटित हुई थी और अब समय बीत जाने के साथ-साथ आहत और अभियुक्त दोनों ही का विवाह (किंतु एक-दूसरे के साथ नहीं) हो चुका है और उन्होंने समझौता कर लिया है । इस प्रकार, दंड संहिता की धारा 376 के परंतुक के निबंधनों में कम दंड अधिनिर्णीत किए जाने के लिए विशेष कारण विद्यमान हैं ।

12. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने प्रतिरक्षा में चार प्राथमिक आधार लिए हैं । पहला आधार यह है कि आहत के शरीर पर क्षति का कोई भी चिह्न नहीं पाया गया है और बलात्संग किए जाने की अभि. सा. 3 द्वारा कोई भी निश्चित राय नहीं दी गई है यद्यपि अभियुक्त और अभियोक्त्री 15-20 मिनट तक एक-दूसरे के साथ लिपटे रहने की अवस्था में थे । तथापि, आहत ने यह कथन किया है कि उसने अभियुक्त को खरोंचा नहीं था और अभियुक्त ने उसके हाथ बलपूर्वक पकड़ रखे थे और उसे खेत में नीचे लिटा रखा था और उसके साथ बलात्संग किया । इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि बलात्संग खेत की भूमि पर किया गया था किंतु यह अत्यंत असम्भावी है कि उनके वस्त्र नहीं फटे और आहत के शरीर पर कोई भी क्षति नहीं पहुंची । **दस्तगीर साब और एक अन्य** बनाम **कर्नाटक राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि आहत के शरीर पर क्षति का पाया जाना बलात्संग के आरोप को साबित करने के लिए अनिवार्य नहीं है । इस मामले में, तथ्यों से यह दर्शित होता

---

[1] (2004) 3 एस. सी. सी. 106.

है कि चिकित्सा परीक्षा अभिकथित अपराध कारित किए जाने के एक मास के पश्चात् कराई गई थी । चिकित्सा राय यह दी गई है कि हिंसा किए जाने के चिह्न या खरोंच केवल 24 घंटे तक ही दृश्यमान रह सकते हैं और इस अवधि के पश्चात् वे लुप्त हो जाते हैं । वर्तमान मामले में, चिकित्सा परीक्षा अपराध कारित किए जाने वाले दिन ही कराई गई थी, और चिकित्सा परीक्षा रिपोर्ट और अभि. सा. 3 के कथन का परिशीलन करने पर यह असम्भावी हो जाता है कि बलात्संग किया गया था ।

13. प्रतिरक्षा पक्ष द्वारा लिया गया दूसरा आधार यह है कि आहत के यौनिक फोहे में शुक्राणु नहीं पाए गए हैं और रासायनिक परीक्षण की रिपोर्ट से यह पता चलता है कि आहत के वस्त्रों पर पाए गए वीर्य का नमूना अभियुक्त से मेल खाने के लिए अपर्याप्त है । संदेह के लाभ के पहलू पर विचार करते हुए इस न्यायालय ने **हेम राज** बनाम **हरियाणा राज्य**[1] वाले मामले में यह मत व्यक्त किया है कि अभियोजन पक्ष ने अभिलेख पर न्यायालयिक प्रयोगशाला की रिपोर्ट प्रस्तुत की है जिससे यह दर्शित होता है कि अभियोक्त्री की सलवार और अभियुक्त के जांघिए पर मानव वीर्य लगा हुआ था । तथापि, इससे यह निष्कर्ष निकालना कठिन है कि अभियुक्त द्वारा अभियोक्त्री के साथ बलात्संग किया गया है । उस मामले में अपीलार्थी को संदेह का लाभ दिया गया था ।

14. वर्तमान मामले में, रासायनिक परीक्षक की रिपोर्ट से यह पता चलता है कि वीर्य का नमूना अभियुक्त से मेल खाने के लिए पर्याप्त नहीं है, इस बात के होते हुए भी कि यौनिक लेप में शुक्राणु नहीं पाए गए, अभियोक्त्री के कथन के विरुद्ध निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता जैसाकि **नारायणम्मा** बनाम **कर्नाटक राज्य और अन्य**[2] वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया है ।

15. अभियुक्त द्वारा अपनी प्रतिरक्षा में लिया गया तीसरा आधार यह है कि महत्वपूर्ण पहलुओं को लेकर अभियोजन पक्षकथन में कोई सम्पुष्टि नहीं की गई है और उनमें विरोधाभास हैं, यद्यपि अभियोक्त्री के परिसाक्ष्य जैसे साक्ष्य का मूल्यांकन किए जाने के पहलू पर इस न्यायालय ने **नरेन्द्र कुमार** बनाम **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली)**[3] वाले मामले में यह

---

[1] (2014) 2 एस. सी. सी. 395.
[2] (1994) 5 एस. सी. सी. 728.
[3] (2012) 7 एस. सी. सी. 171.

अभिनिर्धारित किया है कि साक्षियों के साक्ष्य में आए छोटे-मोटे विरोधाभास या तुच्छ फर्क महत्वपूर्ण नहीं होते । तथापि, **सदाशिव रामराव हडबे** बनाम **महाराष्ट्र राज्य और एक अन्य**[1] वाले मामले में, जिसमें किसी भी चिकित्सीय साक्ष्य से परिसाक्ष्य का समर्थन नहीं होता है या अभियोक्त्री द्वारा दिए गए वृत्तांत को अविश्वसनीय ठहराने के लिए सम्पूर्ण पृष्ठभूमिक परिस्थितियां अत्यंत असम्भावी हों, इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है कि न्यायालय अभियोक्त्री के एकमात्र साक्ष्य के आधार पर कार्यवाही नहीं करेगा । इस प्रकार, उपरोक्त बातों को ध्यान में रखते हुए न्यायालय को अभियोक्त्री के केवल परिसाक्ष्य का अवलंब नहीं लेना चाहिए । वर्तमान मामले में दिए गए कथन की सम्पुष्टि की जानी चाहिए क्योंकि इसमें छोटे-मोटे विरोधाभास हैं और इस कथन की सम्पुष्टि अभियोजन पक्ष के अन्य साक्षियों द्वारा नहीं की गई है । अभियोक्त्री के दोनों मामाओं (अभि. सा. 4 और अभि. सा. 5) ने उसके साक्ष्य का समर्थन नहीं किया है और उन्हें पक्षद्रोही घोषित किया गया है ।

16. अपीलार्थी द्वारा अपनी प्रतिरक्षा में लिया गया चौथा आधार यह है कि दंड संहिता की धारा 376(2) के परंतुक के अधीन विधान-मंडल ने न्यायालय को ऐसी स्थिति में कम दंड अधिनिर्णीय करने के लिए सशक्त बनाया है जहां "समुचित और विशेष कारण" विद्यमान हों । वर्तमान मामले में बलात्संग की घटना 20 वर्ष पूर्व घटित हुई थी । अभियोक्त्री और अभियुक्त के बीच यह समझौता हो गया है कि अभियोक्त्री अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही करना नहीं चाहती है और वह इस मामले को बंद करना चाहती है । दोनों ही विवाहित हैं (किंतु एक-दूसरे के साथ नहीं) और अपना-अपना जीवन बिता रहे हैं । अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि कम दंड अधिनिर्णीत किए जाने का यह एक "समुचित और विशेष कारण" है ।

17. **बलदेव सिंह और अन्य** बनाम **पंजाब राज्य**[2] वाले मामले में इस न्यायालय ने दंड संहिता की धारा 376(2)(छ) के परंतुक का अवलंब इस विचार के साथ लिया है कि इस मामले को काफी समय बीत गया है । उपरोक्त मामले के तथ्यों से यह पता चलता है कि पक्षकारों के बीच समझौता किया गया था ।

---

[1] (2006) 10 एस. सी. सी. 92.

[2] (2011) 13 एस. सी. सी. 705.

18. पूर्वगामी पैराओं की चर्चा को दृष्टिगत करते हुए, हमारा यह मत है कि अपीलार्थी का मामला दंड संहिता की धारा 376(2)(छ) के परंतुक का अवलंब लिए जाने के लिए एक उचित मामला है जिसमें कम दंड अधिनिर्णीत किया जा सकता है क्योंकि इस घटना को 20 वर्ष बीत चुके हैं और यह तथ्य समुचित है और इसके लिए विशेष कारण उपलब्ध हैं कि पक्षकार विवाहित हैं और उन्होंने समझौता कर लिया है । अतः, यद्यपि न्यायालय ने अपीलार्थी की दोषसिद्धि कायम रखी किंतु अपीलार्थी के दंड को कम करके उसे पहले से भोगे गए कारावास की अवधि जितना दंड अधिनिर्णीत करते हैं । तद्नुसार अपील का निपटारा किया जाता है ।

अपील का निपटारा किया गया ।

अस.

[2015] 4 उम. नि. प. 11

कीर्ति पाल

बनाम

पश्चिमी बंगाल राज्य

16 अप्रैल, 2015

न्यायमूर्ति टी. एस. ठाकुर और न्यायमूर्ति आर. बानुमति

साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) – धारा 3 [सपठित दंड संहिता, 1860 की धारा 302] – हत्या – पारिस्थितिक साक्ष्य – साक्ष्य की श्रृंखला का पूर्ण पाया जाना – चूंकि साक्ष्य पूर्णतया पारिस्थितिक है और परिस्थितियों से अभियुक्त के दोषी होने का निष्कर्ष युक्तियुक्त संदेह के परे निकलता है और बिना किसी त्रुटि के अभियुक्त का दोषी होना इंगित होता है, इसलिए हत्या के अपराध के लिए की गई अभियुक्त की दोषसिद्धि न्यायोचित है ।

साक्ष्य अधिनियम, 1872 – धारा 106 – साबित करने का भार – अभियुक्त के मृतका के साथ अंतिम बार देखे जाने और मृतका के मृत पाए जाने की बीच समयान्तराल का कम पाया जाना – अभियुक्त द्वारा

स्पष्टीकरण न दिया जाना – अभियुक्त ने यह स्पष्ट नहीं किया है कि वह मृतका से कब, कैसे तथा किस रीति में अलग हुआ था, अतः वह सबूत के भार का वहन करने में असफल रहा, इसलिए हत्या के अपराध के लिए की गई दोषसिद्धि न्यायोचित है ।

दंड संहिता, 1860 – धारा 302 और धारा 120ख – हत्या – आपराधिक षड्यंत्र – एक अभियुक्त द्वारा दूसरे अभियुक्त को टेलीफोन किया जाना – साक्ष्य की शृंखला का पूर्ण न पाया जाना – टेलीफोन कॉलों और बरामदगी से अभियुक्त पर संदेह होता है किंतु संदेह सबूत का स्थान नहीं ले सकता, साथ ही साक्ष्य की ऐसी शृंखला न बनने से जिससे अभियुक्तों को षड्यंत्र के अपराध से संबद्ध किया जा सके, इन अभियुक्तों की दोषसिद्धि कायम नहीं रखी जा सकती और वह अपास्त की जानी चाहिए ।

इस मामले में अपीलार्थी कीर्ति पाल को दो अन्य अभियुक्तों सहित धारा 376 और धारा 302 के अधीन अपराध के लिए और चौथे अभियुक्त का धारा 302 के अधीन सेशन न्यायालय द्वारा विचारण किया गया । विचारण न्यायालय ने अभियुक्त-1 से अभियुक्त-3 को दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषी पाते हुए मृत्यु दंडादेश दिया और उन्हें बलात्संग के अपराध का भी दोषी पाया । विचारण न्यायालय के आदेश से व्यथित होकर अभियुक्त सं. 1 से अभियुक्त सं. 3 ने कलकत्ता उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की और राज्य ने भी मृत्यु दंडादेश की पुष्टि के लिए मृत्यु-निर्देश फाइल किया । उच्च न्यायालय ने मृत्यु-निर्देश खारिज कर दिया और बलात्संग के अपराध के लिए की गई अभियुक्त-1 से अभियुक्त-3 की दोषसिद्धि को खारिज करते हुए हत्या के अपराध के लिए की गई दोषसिद्धि कायम रखी किंतु मृत्यु दंड को आजीवन कारावास में परिवर्तित कर दिया । उच्च न्यायालय ने दंड संहिता की धारा 302 और धारा 120ख के अधीन चौथे अपीलार्थी की दोषसिद्धि और आजीवन कारावास की पुष्टि की । उच्च न्यायालय के इस आदेश से व्यथित होकर इन चारों अभियुक्तों ने उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपीलें फाइल कीं । उच्चतम न्यायालय ने अभियुक्त-1 की अपील खारिज करते हुए दंडादेश की पुष्टि की । अभियुक्त-2, अभियुक्त-3 और अभियुक्त-4 की ओर से फाइल की गई अपीलें मंजूर करते हुए उन्हें सभी आरोपों से मुक्त किया । इस प्रकार अपीलों का निपटारा करते हुए,

अभिनिर्धारित – कीर्ति पाल के विरुद्ध अभियोजन पक्षकथन इस प्रकार है

कि उसने सिद्दीक मियां, मुश्ताक मियां और दुर्गा सूत्रधर के साथ मिलकर मृतका अंजली गोस्वामी की हत्या करने का आपराधिक षड्यंत्र रचा । अभियोजन पक्षकथन पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित है । यह सुस्थापित है कि ऐसे मामलों में जिनमें साक्ष्य पूर्णतया पारिस्थितिक प्रकृति का होता है, वहां परिस्थितियां ऐसी होनी चाहिए जिनसे दोषी होने का निष्कर्ष किसी भी युक्तियुक्त संदेह के परे पूर्णतया सिद्ध हो जाए और ये परिस्थितियां संगत होनी चाहिए और इन परिस्थितियों से साक्ष्य की ऐसी शृंखला बननी चाहिए जिनसे बिना किसी त्रुटि के अभियुक्त का दोषी होना इंगित हो और परिस्थितियों की शृंखला अभियोजन पक्ष द्वारा सिद्ध की जानी चाहिए । (पैरा 7)

चूंकि यह समय अंतराल बहुत कम है, इसलिए अपीलार्थी कीर्ति पाल को इन परिस्थितियों को स्पष्ट करना होगा कि कैसे, कहां और किस रीति में वह अंजली से अलग हुआ था । इस प्रकार, इस सिद्धांत के आधार पर कि वह व्यक्ति जिसको उस अपराधी के साथ अंतिम बार देखा गया था जो अब मृत या लापता है तब ऐसी स्थिति में उस अपराधी को यह स्पष्ट करना होगा कि वह मृत या लापता व्यक्ति से कैसे या किस रीति में अलग हुआ था जैसाकि विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय द्वारा मत व्यक्त किया गया है, अपीलार्थी कीर्ति पाल साबित करने के इस भार का वहन करने में असफल रहा है और वह यह स्पष्ट नहीं कर सका है कि कब और कैसे तथा किस रीति में वह अंजली से अलग हुआ था, यह परिस्थिति अपीलार्थी कीर्ति पाल के विरुद्ध एक ठोस परिस्थिति है । राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल की दलील में बल है कि अपीलार्थी कीर्ति पाल कोई भी स्पष्टीकरण देने में असफल रहा है, यह अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए कि अपीलार्थी भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 106 के अधीन सबूत का भार वहन करने में असफल रहा है । उत्तर प्रदेश राज्य बनाम सतीश वाले मामले में इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है कि अंतिम बार देखे जाने का सिद्धांत तब प्रभावी होता है जब अभियुक्त को मृतक के साथ अंतिम बार जीवित देखे जाने और मृतक के पाए जाने के बीच इतना कम समय हो कि इस बात की कोई संभावना न रहे कि अन्य किसी व्यक्ति ने मृतक की हत्या की है । (पैरा 15)

इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कि अभियुक्त-अपीलार्थी ने एक-साथ मिलकर इस अपराध को कारित करने का षड्यंत्र रचा है, निचले न्यायालयों ने मुख्य रूप से फोन से की गई कॉलों का अवलंब लिया है । प्रदर्श-30 कीर्ति पाल के मोबाइल नं. 9232589186 से की गई कॉलों का

अभिलेख है जिससे यह दर्शित होता है कि कीर्ति पाल ने तारीख 7 दिसंबर, 2008 से 15 जनवरी, 2009 तक दुर्गा सूत्रधर को 41 कॉलें की थीं । प्रदर्श-31 सिद्दीक मियां द्वारा की गई कॉलों का अभिलेख है । प्रदर्श-31 से यह उपदर्शित होता है कि मुश्ताक मियां के फोन से सिद्दीक मियां को 144 कॉलें की गई थीं । इनमें से कुछ कॉलें, इनकमिंग कॉलें हैं जो सिद्दीक मियां के फोन से मुश्ताक मियां को की गई हैं । प्रदर्श-31 से यह भी उपदर्शित होता है कि अभियुक्त मुश्ताक मियां और अभियुक्त सिद्दीक मियां के बीच फोन पर बातचीत हुई है । प्रदर्श-32 से यह दर्शित होता है कि कीर्ति पाल ने तारीख 11 जुलाई, 2008 से 9 नवंबर, 2008 तक अंजली के मोबाइल फोन से 7 कॉलें की थीं । प्रदर्श-34 से यह दर्शित होता है कि 11 नवंबर, 2008 से 14 नवंबर, 2008 तक सरस्वती ने सिद्दीक मियां के फोन पर 7 कॉलें की थीं । दस्तावेजी साक्ष्य से यह उपदर्शित होता है कि सिद्दीक मियां ने तारीख 10 नवंबर, 2008 से 27 नवंबर, 2008 तक सरस्वती को 13 कॉलें की थीं । प्रदर्श-35 से यह दर्शित होता है कि सरस्वती ने तारीख 11 नवंबर, 2008 से 20 नवंबर, 2008 तक दुर्गा सूत्रधर को 38 कॉलें की थीं । दस्तावेजी साक्ष्य से यह भी उपदर्शित होता है कि सभी अभियुक्त एक-दूसरे के साथ फोन पर सम्पर्क बनाए हुए थे । इन कॉलों के ब्यौरों की संवीक्षा से यह स्पष्ट होता है कि तारीख 11 नवंबर, 2008 को सरस्वती ने अंजली को 2 कॉलें की थीं जिनमें से एक कॉल 12.55 बजे अपराह्न में और दूसरी कॉल 12.58 बजे अपराह्न में की थी और 4 कॉलें सिद्दीक मियां को की थीं जिनमें से पहली कॉल 9.55 बजे पूर्वाह्न में की थी और अंतिम कॉल 5.20 बजे अपराह्न में की थी । दस्तावेजी साक्ष्य से यह भी उपदर्शित होता है कि तारीख 11 नवंबर, 2008 को सिद्दीक मियां की बातचीत मुश्ताक मियां से लगभग 7.19 बजे अपराह्न में फोन पर हुई थी और सिद्दीक मियां ने सरस्वती से भी फोन पर बात की थी जिसमें पहली कॉल 9.55 बजे पूर्वाह्न में की गई थी और अंतिम कॉल 9.42 बजे अपराह्न में की गई थी । सरस्वती ने भी दुर्गा सूत्रधर से कुछ दिन फोन पर बात की थी और उस दिन छह इनकमिंग और आउटगोइंग कॉलें की गई थीं । पहली कॉल लगभग 10.57 बजे पूर्वाह्न में और अंतिम कॉल 5.57 बजे अपराह्न में की गई थी । टेलीफोन पर की गई बातचीत के अतिरिक्त अभियोजन पक्ष द्वारा अन्य कोई भी साक्ष्य यह साबित करने के लिए प्रस्तुत नहीं किया गया है कि प्रथम अभियुक्त ने षड्यंत्र रचा था । यह साबित करने के लिए कोई भी साक्ष्य नहीं है कि अपीलार्थी-2 और अपीलार्थी-3 घटनास्थल पर कैसे गए थे और उसके पश्चात् उन्होंने क्या

किया । घटनास्थल के निकट उनकी मौजूदगी अभियोजन पक्ष द्वारा कुछ ऐसे अन्य साक्षियों की परीक्षा करने से सिद्ध की जा सकती थी जो घटनास्थल के निकट मौजूद थे या उनकी फोन-कॉलों की स्थिति (लोकेशन) नेटवर्क से पता करके भी घटनास्थल के निकट उनके मौजूद होने की स्थिति का पता लगाया जा सकता था । कॉल-अभिलेख से निकाले गए निष्कर्ष के अतिरिक्त षड्यंत्र सिद्ध करने के लिए अन्य कोई भी साक्ष्य अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत नहीं किया गया है । टेलीफोन पर की गई बातचीत के अतिरिक्त अभियोजन पक्ष ने अपीलार्थी 2 और अपीलार्थी 3 के संस्वीकृति कथनों के अनुसरण में की गई बरामदगी का भी अवलंब लिया है । सिद्दीक मियां के कथन के अनुसरण में प्रदर्श-17/3 के अंतर्गत टीवीएस फियरो नामक ब्रांड की एक लाल रंग की मोटरसाइकिल नं. डब्ल्यू बी 54बी 8245, चाबी, मोबाइल सेट (नोकिया ब्रांड, कनेक्शन नं. 9932705533), एक सोने की अंगूठी जिसकी आकृति फूल जैसी थी और उस पर "अंजली" लिखा हुआ था और चांदी की जंजीर जिसमें नीलम और लाल मूंगे के नग जड़े हुए थे प्रदर्श 18/3 के अंतर्गत अभिगृहीत किए गए । उत्तम मंडल की परीक्षा किए जाने पर इन वस्तुओं की बरामदगी और इस संबंध में तैयार की गई अभिग्रहण सूची सिद्ध किए जाने की ईप्सा की गई । अभि. सा. 17 ने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि वह मृतका अंजली को जानता था । इसके पश्चात् अंजली के स्वामित्वाधीन होटल में अभि. सा. 17 को नियोजित किया गया था और यह होटल भाग्यधर धीबर द्वारा चलाया जा रहा था । अभि. सा. 17 ने अपने साक्ष्य में यह कथन किया है कि जनवरी, 2009 में दो या तीन व्यक्ति उसके होटल पर आए और उन्होंने उसके हस्ताक्षर लिए और उसे यह नहीं मालूम कि उन व्यक्तियों ने अभि. सा. 17 के हस्ताक्षर क्यों लिए थे । यद्यपि अभि. सा. 17 ने अभिग्रहण सूची पर किए गए अपने हस्ताक्षरों की शनाख्त की है फिर भी अभि. सा. 17 के साक्ष्य से किसी भी प्रकार से यह सिद्ध नहीं होता है कि अभियुक्त 2 और अभियुक्त 3 के कहने पर बरामदगी की गई थी । अभि. सा. 17 का साक्ष्य स्वीकार किए जाने योग्य नहीं है और इससे अभियोजन पक्ष को अधिक सहायता नहीं मिल सकती क्योंकि इस साक्षी ने बरामदगी और अभिग्रहण सूची के संबंध में स्पष्ट साक्ष्य नहीं दिया है । अन्य साक्षियों को सोने की अंगूठी और चांदी की जंजीर शनाख्त किए जाने के लिए नहीं दिखाई गई है कि वे अंजली की हैं या नहीं । अभियोजन पक्ष द्वारा अन्य साक्ष्य भी इन वस्तुओं की बरामदगी और अभिग्रहण सूची को सिद्ध करने के लिए प्रस्तुत नहीं किया गया है । जहां तक अभियुक्त दुर्गा सूत्रधर की

सहअपराधिता का संबंध है, अभियोजन पक्ष ने मुख्य रूप से कॉल-अभिलेख और न्यायिक मजिस्ट्रेट, द्वितीय न्यायालय, सूरी, बीरभूमि द्वारा अभिलिखित दुर्गा के न्यायिक संस्वीकृति कथन (प्रदर्श-26) का अवलंब लिया है । अभियोजन पक्ष ने अपीलार्थी सूत्रधर के कब्जे से बरामद और अभिगृहीत की गई टिप्पण पुस्तिका का अवलंब लिया है जिसमें अपीलार्थी दुर्गा ने कीर्ति पाल का फोन नम्बर रहस्यमय रूप से "दादू" के नाम से लिखा है । प्रदर्श-30 कीर्ति पाल के फोन से संबंधित कॉल-अभिलेख हैं जिससे दर्शित होता है कि कीर्ति पाल ने चतुर्थ अपीलार्थी को कई कॉलें की थीं । अपीलार्थी 2 और अपीलार्थी 3 की भांति टेलीफोन-कॉलों के अतिरिक्त अभियोजन पक्ष द्वारा कोई भी साक्ष्य चतुर्थ अभियुक्त अर्थात् दुर्गा सूत्रधर का दोष साबित करने के लिए प्रस्तुत नहीं किया गया है । जहां तक दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 164 के अधीन अभिलिखित न्यायिक संस्वीकृति कथन का संबंध है, यह कोई अभिशंसी कथन नहीं है किंतु इससे कीर्ति पाल का केवल पश्चात्वर्ती यह आचरण दर्शित होता है कि उसने दुर्गा सूत्रधर को यह धमकी दी थी कि वह इस संबंध में पुलिस को कुछ न बताए । हमारे मतानुसार न तो कीर्ति पाल और दुर्गा सूत्रधर के बीच की गईं टेलीफोन-कॉलें और न ही संस्वीकृति कथन चतुर्थ अपीलार्थी का दोष सिद्ध करने के लिए पर्याप्त हैं । पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित मामले में न्यायालय को अत्यंत भानपूर्ण दृष्टिकोण अपनाना चाहिए और दोषसिद्धि केवल तभी अभिलिखित करना चाहिए जब साक्ष्य की श्रृंखला की सभी कड़ियां पूर्ण हों और उनसे अभियुक्त का दोषी होना इंगित होता हो । अभियोजन पक्ष द्वारा साक्ष्य की पूर्ण श्रृंखला दृढ़तापूर्वक सिद्ध की जानी चाहिए । साक्ष्य की प्रत्येक कड़ी पर प्रथक् रूप से विचार करने पर संदेह हो सकता है और ऐसा संदेह सबूत का स्थान नहीं ले सकता और यह अभियुक्त की दोषसिद्धि के लिए पर्याप्त नहीं होगा । सभी परिस्थितियां दृढ़तापूर्वक सिद्ध की जानी चाहिए और वे अभियुक्त के दोषी होने की परिकल्पना के साथ संगत होनी चाहिए । किंतु इसका यह अर्थ नहीं है कि अभियोजन पक्ष प्रत्येक परिकल्पना पर विचार करे जो अभियुक्त द्वारा प्रस्तुत की गई है चाहे वह कितनी भी दूरस्थ क्यों न हो । जैसाकि पहले ही विचार किया गया है, टेलीफोन-कॉलों और बरामदगी से अभियुक्त पर संदेह होता है किंतु मात्र संदेह सबूत का स्थान नहीं ले सकता । न्यायालय के मतानुसार अपीलार्थी 2 और अपीलार्थी 3 के विरुद्ध अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य से साक्ष्य की ऐसी कोई श्रृंखला नहीं बनती है जिससे अभियुक्त को अपराध के साथ संबद्ध किया जा सके और दंड संहिता की धारा 120ख के साथ

पठित धारा 302 के अधीन अपीलार्थियों की दोषसिद्धि कायम नहीं रखी जा सकती और यह अपास्त की जानी चाहिए । इसी प्रकार, दुर्गा सूत्रधर की दोषसिद्धि दंड संहिता की धारा 120ख के अधीन कायम नहीं रखी जा सकती और अपास्त की जानी चाहिए । (पैरा 24, 25, 26, 27 और 28)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2014]	(2014) 12 एस. सी. सी. 439 : **विवेक कालरा** बनाम **राजस्थान राज्य** ;	21
[2011]	(2011) 5 एस. सी. सी. 317 : **मोहम्मद मन्नान** उर्फ **अब्दुल मन्नान** बनाम **बिहार राज्य** ;	7
[2011]	(2011) 5 एस. सी. सी. 509 : **पुलिस निरीक्षक, तमिलनाडु** बनाम **जॉन डेविड** ;	7
[2007]	(2007) 9 एस. सी. सी. 315 : **गीजागंदा सोमैय्या** बनाम **कर्नाटक राज्य** ;	7
[2007]	(2007) 12 एस. सी. सी. 288 : **स्वामी श्रद्धानंद** उर्फ **मुरली मनोहर मिश्रा** बनाम **कर्नाटक राज्य** ;	7
[2006]	(2006) 12 एस. सी. सी. 254 : **राजस्थान राज्य** बनाम **काशी राम** ;	15
[2006]	(2006) 13 एस. सी. सी. 516 : **गगन कनौजिया और एक अन्य** बनाम **पंजाब राज्य** ;	7
[2005]	(2005) 3 एस. सी. सी. 114 : **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **सतीश** ।	15

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2014 की दांडिक अपील सं. 50. (इसके साथ 2014 की दांडिक अपील सं. 1725 और 2012 की दांडिक अपील सं. 1841 की भी सुनवाई की गई)

2011 की दांडिक पुनरीक्षण आवेदन सं. 471 में कलकत्ता उच्च न्यायालय के तारीख 20 जून, 2012 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से — सर्वश्री ई. आर. सुमति (सहायक अधिवक्ता), सुनील कुमार जैन, परमात्मा जैन, कौशिक चौधरी और पवनश्री अग्रवाल

प्रत्यर्थी की ओर से — सर्वश्री चंचल कुमार गांगुली, कबीर शंकर बोस, (सुश्री) नर्मदा, साकार सरदाना और अनीप सचदे

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति आर. बानुमति ने दिया ।

न्या. बानुमति – यह अपीलें विशेष इजाजत द्वारा 2011 की दांडिक अपील सं. 471 और 484 में फाइल किए गए मृत्यु निर्देश सं. 3/2011 में कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 20 जून, 2012 को पारित किए गए निर्णय से उद्भूत हुई हैं और 2011 की दांडिक अपील सं. 471 और 484 में भारतीय दंड संहिता, 1860 (जिसे संक्षेप में "दंड संहिता" कहा गया है) की धारा 302/120(ख) के अधीन दोषसिद्धि की पुष्टि की गई और मृत्यु दंडादेश को आजीवन कारावास में उपांतरित किया गया है और साथ ही आयुध अधिनियम, 1959 की धारा 25(i)(क)(ख) के अधीन अपीलार्थी-अभियुक्तों की दोषसिद्धि की गई और उन पर दंडादेश अधिरोपित किया गया ।

2. संक्षेप में अभियोजन पक्षकथन इस प्रकार है कि मृतका अंजली गोस्वामी का विवाह करुणा सिंधु गोस्वामी के साथ हुआ था । उसका पति मोहम्मद बाजार में एक होटल चलाता था और वर्ष 2000 में एक सड़क दुर्घटना में उसकी मृत्यु हो गई थी । उसकी पुत्री ने वर्ष 2006 में आत्महत्या कर ली और वर्ष 2008 में एक सड़क दुर्घटना में उसके पुत्र की भी मृत्यु हो गई थी । अंजली ने अपने पति के होटल का कार्यभार संभाल लिया किंतु इसके पश्चात् उसने इस होटल को भाग्यधर धीबर (अभि. सा. 14) को पट्टे पर दे दिया और उसने मोहम्मद बाजार में ब्यूटी पार्लर का काम आरंभ कर लिया और कपड़ा बेचने की दुकान भी खोल ली और अंजली ने यह दुकान सूरी इलाके में स्थित मानस चक्रवर्ती (अभि. सा. 10) की सम्पत्ति में किराए पर जगह लेकर स्थानांतरित कर ली । अंजली ने चौथे

अपीलार्थी-अभियुक्त अर्थात् दुर्गा सूत्रधर को ब्यूटी पार्लर चलाने पर लगा दिया । अंजली ने सूरी स्थित नूतन पल्ली में एक मकान क्रय किया और वहीं रहने लगी । जब अंजली वहां रहती थी तब प्रथम अभियुक्त कीर्ति पाल की अंजली के साथ जान पहचान और मित्रता हो गई और उनके बीच संबंध गहरे हो गए और कीर्ति पाल अंजली के निवास पर प्रायः आने लगा ।

3. तारीख 11 नवंबर, 2008 को हुई घटना के दिन मृतका अंजली यह कह कर प्रथम अभियुक्त के साथ उसकी मोटरसाइकिल पर रवाना हुई कि उसे राजनगर में एक कार्यक्रम में उपस्थित होने जाना है और अगले दिन अर्थात् 12 नवंबर, 2008 को वह मृत पाई गई । तारीख 12 नवंबर, 2008 को स्वपन मंडल (अभि. सा. 1) द्वारा शिकायत दर्ज किए जाने के आधार पर अंजली के मकान से 25 किलोमीटर दूर बाबुईबोना नामक जंगल में एक अज्ञात महिला की मृत्यु हो गई जिसके संबंध में तारीख 12 नवंबर, 2008 को लगभग 9.45 बजे पूर्वाह्न में दंड संहिता की धारा 302 के अधीन मामला सं. 74/2008 पुलिस थाना सदाईपुर में रजिस्ट्रीकृत किया गया । उस महिला की गर्दन उसकी साड़ी के एक छोर से बंधी हुई थी और साड़ी का दूसरा छोर सोनाजहूरी वृक्ष के साथ बंधा हुआ था जिससे यह पता चल रहा था कि उसकी मृत्यु मानव वध से हुई है । पुलिस उप-निरीक्षक संतोष कुमार घोष (अभि. सा. 37) ने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की और अन्वेषण की आरंभिक कार्यवाही पूरी की । अभि. सा. 37 ने घटनास्थल का निरीक्षण किया और फोटोचित्र लिए और उन्हें अभिगृहीत किया तथा घटनास्थल से, जहां पर शव पड़ा हुआ था, तात्विक वस्तुएं बरामद कीं । अरुणाशीष गोस्वामी (अभि. सा. 8) मृतका का भतीजा है जिसने उसके शव की शनाख्त की । अभि. सा. 37 ने मृत्युसमीक्षा की कार्यवाही पूरी की और शव को शवपरीक्षण के लिए भेज दिया । डा. देबाशीष सरकार (अभि. सा. 29) ने अंजली के शव का शवपरीक्षण किया और पार्श्वकपालीय तथा बाएं ललाटीय भाग में विदीर्ण घाव देखे और मृतका के शरीर पर अन्य क्षतियां भी देखीं और इस संबंध में शवपरीक्षण प्रमाणपत्र (प्रदर्श-27) जारी किया जिसमें यह उल्लेख किया कि ये क्षतियां मृत्युपूर्व प्रकृति की हैं और प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त हैं । अभि. सा. 29 ने यह भी राय दी कि लघु भगौष्ठ में क्षति पाई गई है जो इस महिला के साथ बलपूर्वक मैथुन किए जाने से कारित हो सकती है ।

4. खुफिया विभाग के निरीक्षक अर्धेन्दु शेखर पहाड़ी ने मामले का

कार्यभार संभाला और उसमें आगे अन्वेषण किया । प्रथम अभियुक्त अर्थात् कीर्ति पाल को तारीख 15 जनवरी, 2009 को गिरफ्तार किया गया और उसके संस्वीकृति कथन के आधार पर अन्वेषण अधिकारी ने कुछ अन्य वस्तुओं के साथ काले रंग की हीरो होन्डा मोटरसाइकिल नं. डब्ल्यू बी 54 डी 8148 अभिगृहीत की । अभियुक्त के संस्वीकृति कथन के आधार पर द्वितीय अभियुक्त सिद्दीक मियां और तृतीय अभियुक्त मुश्ताक मियां को तारीख 16 जनवरी, 2009 को गिरफ्तार किया । सिद्दीक मियां के कथन के अनुसरण में अन्वेषण अधिकारी ने लाल रंग की मोटरसाइकिल टीवीएस फियरो नं. डब्ल्यू बी 54 8245, उसकी चाबी और नोकिया मोबाइल सेट (प्रदर्श-17/3) अभिगृहीत किए । अभियुक्त 2 के कथन के अनुसरण में मुश्ताक मियां (अभियुक्त 3) ने नोकिया मोबाइल हैंड सेट, सोने की अंगूठी जिस पर "अंजली" लिखा हुआ था, चांदी की जंजीर जिसमें नीलम और मूंगा जड़ा हुआ था, (प्रदर्श-18/3) के अनुसार अभिगृहीत किए गए । अन्वेषण के दौरान अन्वेषण अधिकारी ने अभियुक्त और सरस्वती पाल पत्नी कीर्ति पाल द्वारा फोन सेट से की गई कॉलों के ब्यौरे प्राप्त किए । अन्वेषण से यह स्पष्ट हुआ कि यह हत्या चारों अभियुक्तों के बीच षड्यंत्र के परिणामस्वरूप हुई है । अन्वेषण पूरा होने के पश्चात् तीन अभियुक्तों अर्थात् अभियुक्त 1 से अभियुक्त 3 के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 302/120ख/ 34/376(2)(च) और आयुध अधिनियम की धारा 25, 27 और 35 के अधीन आरोप पत्र फाइल किया गया । चतुर्थ अभियुक्त दुर्गा सूत्रधर को दंड संहिता की धारा 302 के साथ पठित धारा 120ख के अधीन आरोपित किया गया ।

5. अभियुक्तों को सेशन न्यायालय के सुपुर्द किया गया, जहां पर उनके विरुद्ध आरोप विरचित किए गए और अपीलार्थी-अभियुक्तों ने दोषी न होने का अभिवाक् किया । अभियुक्तों का दोष साबित करने के लिए अभियोजन पक्ष ने 38 साक्षियों की परीक्षा कराई और बहुत से दस्तावेज तथा तात्विक वस्तुएं प्रदर्शित कीं । साक्ष्य का मूल्यांकन करने पर, विद्वान् सेशन न्यायालय ने अपने तारीख 26 जुलाई, 2011 और 29 जुलाई, 2011 के निर्णय द्वारा अपीलार्थी अर्थात् अभियुक्त 1 से अभियुक्त 3 को दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया और उन्हें मृत्यु दंडादेश दिया । अपीलार्थी 1 से अपीलार्थी 3 को दंड संहिता की धारा 376(2)(च) के अधीन अपराध के लिए भी दोषसिद्ध किया गया और प्रत्येक अपीलार्थी को आजीवन कारावास तथा 5,000/- रुपए के जुर्माने का

संदाय करने जिसका व्यतिक्रम किए जाने पर अतिरिक्त कारावास भोगने का दंडादेश दिया गया । दंड संहिता की धारा 120(ख) के अधीन हत्या का षड्यंत्र रचने के अपराध के लिए दोषसिद्ध करने के संबंध में सभी अपीलार्थियों को आजीवन कारावास और 5,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने जिसका व्यतिक्रम किए जाने पर अतिरिक्त कारावास भोगने का दंडादेश दिया गया । आयुध अधिनियम की धारा 25(1)(क)(ख) के अधीन दोषसिद्ध किए जाने पर अपीलार्थी 1 से 3 को तीन वर्ष का कारावास भोगने और 5,000/- रुपए जुर्माने का संदाय करने जिसका व्यतिक्रम किए जाने पर अतिरिक्त कारावास भोगने का दंडादेश दिया गया ।

6. अपीलार्थी सं. 1 से 3 को अधिरोपित मृत्यु दंडादेश की पुष्टि के लिए राज्य ने कलकत्ता उच्च न्यायालय के समक्ष 2011 का मृत्यु निर्देश सं. 3 फाइल किया । अभियुक्त 1 से 3 ने अपनी दोषसिद्धि और दंडादेश की शुद्धता को चुनौती देते हुए 2011 की दांडिक अपील सं. 471 प्रस्तुत की और चतुर्थ अभियुक्त ने 2011 की दांडिक अपील सं. 484 प्रस्तुत की । उच्च न्यायालय ने दंड संहिता की धारा 376(2)(च) के अधीन की गई दोषसिद्धि को अपास्त करते हुए अपील भागतः मंजूर की और दंड संहिता की धारा 302 के अधीन की गई दोषसिद्धि को उपांतरित करते हुए मृत्यु दंड को आजीवन कारावास में परिवर्तित कर दिया । उच्च न्यायालय ने दंड संहिता की धारा 120(ख) के अधीन चतुर्थ अभियुक्त दुर्गा सूत्रधर की दोषसिद्धि तथा उसको अधिरोपित आजीवन कारावास के दंडादेश की पुष्टि की । इन अपीलों में अपीलार्थी-अभियुक्त 1 से 4 ने उच्च न्यायालय के आक्षेपित निर्णय की शुद्धता को चुनौती दी है ।

अभियुक्त 1 का अपराध में आलिप्त होना और उसकी दोषसिद्धि

7. कीर्ति पाल (अपीलार्थी 1) के विरुद्ध अभियोजन पक्षकथन इस प्रकार है कि उसने सिद्दीक मियां (अपीलार्थी 2), मुश्ताक मियां (अपीलार्थी 3) और दुर्गा सूत्रधर (अपीलार्थी 4) के साथ मिलकर मृतका अंजली गोस्वामी की हत्या करने का आपराधिक षड्यंत्र रचा । अभियोजन पक्षकथन पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित है । यह सुस्थापित है कि ऐसे मामलों में जिनमें साक्ष्य पूर्णतया पारिस्थितिक प्रकृति का होता है, वहां परिस्थितियां ऐसी होनी चाहिए जिनसे दोषी होने का निष्कर्ष किसी भी युक्तियुक्त संदेह के परे पूर्णतया सिद्ध हो जाए और ये परिस्थितियां संगत होनी चाहिए और इन परिस्थितियों से साक्ष्य की ऐसी शृंखला बननी चाहिए जिनसे बिना किसी त्रुटि के अभियुक्त का दोषी होना इंगित हो और परिस्थितियों की

श्रृंखला अभियोजन पक्ष द्वारा सिद्ध की जानी चाहिए । इस न्यायालय के अनेक पूर्ववर्ती विनिश्चयों को **गीजागंदा सोमैय्या** बनाम **कर्नाटक राज्य**[1] वाले मामले में निर्दिष्ट करते हुए पैरा 15 में इस प्रकार अभिनिर्धारित किया गया है :–

> "15. सर अलफ्रेड विल्स ने अपनी प्रशंसनीय पुस्तक विल्स सरकम्स्टांशियल एविडेन्स (अध्याय VI) में निम्न नियम अधिकथित किए हैं विशेषकर पारिस्थितिक साक्ष्य के संबंध में – (1) ऐसे तथ्य जिन्हें अभिकथित रूप से विधिक निष्कर्ष का आधार माना गया है, स्पष्ट रूप से साबित किए जाने चाहिए और वे युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध किए जाने वाले तथ्य से संबद्ध होने चाहिए ; (2) सबूत का भार सदैव उस पक्षकार पर होता है जो किसी तथ्य की विद्यमानता का प्रकथन करता है और जिसके आधार पर विधिक दायित्व बनता हो; (3) सभी मामलों में, चाहे वे प्रत्यक्ष साक्ष्य से संबंधित हों या पारिस्थितिक साक्ष्य से, ऐसा साक्ष्य प्रस्तुत किया जाना चाहिए जो मामले की प्रकृति को दृष्टिगत करते हुए उत्तम साक्ष्य हो ; (4) दोषी होने के निष्कर्ष को उचित ठहराने के लिए अपराध से संबंधित तथ्य अभियुक्त की निर्दोषिता के साथ असंगत होने चाहिए और किसी भी युक्तियुक्त परिकल्पना के आधार पर अभियुक्त के दोषी होने के सिवाय उनसे कोई भी निष्कर्ष न निकले ; और (5) यदि अभियुक्त के दोषी होने में कोई युक्तियुक्त संदेह है तब वह दोषमुक्त किए जाने के लिए हकदार होगा ।"

ऐसा ही सिद्धांत **स्वामी श्रद्धानंद** उर्फ **मुरली मनोहर मिश्रा** बनाम **कर्नाटक राज्य**[2]; **गगन कनौजिया और एक अन्य** बनाम **पंजाब राज्य**[3]; **मोहम्मद मन्नान** उर्फ **अब्दुल मन्नान** बनाम **बिहार राज्य**[4]; **पुलिस निरीक्षक, तमिलनाडु** बनाम **जॉन डेविड**[5] और अन्य मामलों में दोहराया गया है ।

8. कीर्ति पाल के विरुद्ध अभियोजन पक्ष ने अपराध में फंसाने वाली निम्न परिस्थितियों का अवलंब लिया है :–

> "(i) कीर्ति पाल की अंजली गोस्वामी से घनिष्ठता थी ;

---

[1] (2007) 9 एस. सी. सी. 315.
[2] (2007) 12 एस. सी. सी. 288.
[3] (2006) 13 एस. सी. सी. 516.
[4] (2011) 5 एस. सी. सी. 317.
[5] (2011) 5 एस. सी. सी. 509.

(ii) मृतका अंजली गोस्वामी को कीर्ति पाल (अपीलार्थी 1) के साथ अंतिम बार जीवित देखा गया था ;

(iii) अंजली गोस्वामी की मृत्यु के संबंध में अभियुक्त द्वारा कोई भी संतोषजनक स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है ;

(iv) कीर्ति पाल (अपीलार्थी 1) का पश्चात्‌वर्ती आचरण ; और

(v) प्रथम अपीलार्थी के कहने पर की गई बरामदगी ।"

इस पर विचार करना होगा कि क्या उपर्युक्त परिस्थितियां जिनसे अभियुक्त के दोषी होने का निष्कर्ष निकालना ईप्सित है पूर्णतया सिद्ध की गई हैं और क्या इन परिस्थितियों से ऐसी शृंखला पूर्ण होती जिससे अभियुक्त का दोषी होना इंगित हो और क्या ये परिस्थितियां अभियुक्त के दोषी होने की परिकल्पना के साथ संगत हैं ।

9. करुणा सिंधू गोस्वामी के पति की मृत्यु के पश्चात् अंजली अपने पति का होटल मोहम्मद बाजार में चला रही थी और इसके पश्चात् उसने उस होटल को भाग्यधर धीबर (अभि. सा. 14) को पट्टे पर दे दिया । अंजली ने अपने पुत्र और पुत्री की मृत्यु के पश्चात् अपना निवास सूरी में बना लिया और वह एक किराए के परिसर में, जिसका स्वामी, मानस चक्रवर्ती है, ब्यूटी पार्लर चलाने लगी । साक्ष्य में यह उल्लेख है कि अंजली सुंदर थी और उसकी अभिनय में रूचि थी और वह फिल्मों में काम करने का अवसर पाने के लिए लोगों के संपर्क में रहती थी । अंजली ने नूतनपल्ली, सूरी में एक मकान क्रय किया और वह प्रथम तल पर रहती थी । उसने अपने मकान का भूतल अंजू माझी (अभि. सा. 6) और बीरेन माझी (अभि. सा. 7) नामक दंपत्ति को किराए पर दे रखा था ।

10. कीर्ति पाल (अपीलार्थी 1) ने विवाहित पुरुष होते हुए स्वयं को किसी विद्यालय का अध्यापक बताया और अविवाहित दर्शाया तथा उसने अंजली के साथ अपने घनिष्ठ संबंध बनाए । मृतका अंजली ने कीर्ति पाल (अपीलार्थी 1) पर विश्वास किया और उसने अपीलार्थी को अपने नूतनपल्ली, सूरी स्थित मकान में रातें बिताने के लिए अनुज्ञात किया । अभि. सा. 6 ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह कथन किया है कि उसने प्रथम अभियुक्त अर्थात् कीर्ति पाल को अंजली के कमरे में कई बार देखा था । कीर्ति पाल ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 313 के अधीन प्रश्न पूछे जाने के दौरान यह स्वीकार किया कि अंजली के साथ उसकी मित्रता और घनिष्ठता थी । तरुण मुखर्जी (अभि. सा. 3) अर्थात् अंजली के देवर

और अंजली के किराएदार (अंजू माझी और बीरेन माझी) ने प्रथम अभियुक्त के साथ अंजली के घनिष्ठ संबंधों के बारे में बताया । यह उल्लेखनीय है कि असित डे (अभि. सा. 11) ने यह कथन किया है कि उनके विद्यालय में कभी भी कीर्ति पाल नाम का कोई अध्यापक कार्यरत नहीं था ।

11. श्रीमती चमेली बनर्जी (अभि. सा. 9) ने, जो अंजली की बहिन है, यह कथन किया है कि घटना से कुछ दिन पूर्व अंजली ने कटवा स्थित अभि. सा. 9 के घर पर रहने की इच्छा प्रकट की थी । अभि. सा. 3 के साक्ष्य के अनुसार तारीख 7 नवंबर, 2008 को अंजली ने अपनी माता प्रतिमा चटर्जी को अपने मामा के घर जाने के लिए शिबलून पहुंचाया । अभि. सा. 9 के साक्ष्य के अनुसार तारीख 7 नवंबर, 2008 को सायंकाल अंजली को फोन पर सूचना मिली जिसके पश्चात् वह व्याकुल हो गई । अभि. सा. 9 द्वारा पूछे जाने पर अंजली ने बताया कि उसे राजनगर हाई स्कूल में किसी सांस्कृतिक कार्यक्रम में भाग लेना है और इसी कारण वह अभि. सा. 9 के घर से प्रातःकाल ही चली गई । तरुण मुखर्जी (अभि. सा. 3) ने अभि. सा. 9 के परिसाक्ष्य के उक्त पहलू की सम्पुष्टि की है ।

12. घटना के दिन अर्थात् तारीख 11 नवंबर, 2008 को सायंकाल अंजली कीर्ति पाल (अपीलार्थी 1) की मोटरसाइकिल पर अपने ब्यूटी पार्लर से आई । वह अपने कमरे में गई और अंजू माझी (अभि. सा. 6) को साड़ी बंधवाने में सहायता करने के लिए बुलाया और उसके पश्चात् उसने कुछ सोने के आभूषण पहने, अंजली कीर्ति पाल के साथ उसकी मोटरसाइकिल से चली गई । अंजू माझी (अभि. सा. 6) इस मकान के भूतल पर किराएदार के रूप में रहती थी जिसने मृतका अंजली के बारे में बताया है कि अंजली साड़ी पहने हुए थी और वह अपीलार्थी 1 के साथ उसकी मोटरसाइकिल पर घर से रवाना हुई थी । अभि. सा. 6 ने अपने साक्ष्य में यह कथन किया है कि उसने अंजली से मालूम किया था कि वह कहां जा रही है और अंजली ने उसे बताया कि वह प्रोसेनजीत और चिरंजीब के कार्यक्रम में सम्मिलित होने राजनगर जा रही है । जब अभि. सा. 6 ने अंजली से वापस आने के समय के बारे में पूछा तब अंजली ने उसे यह बताया कि वह रात्रि 9.00-9.30 बजे वापस आएगी । अभि. सा. 6 ने यह कथन किया है कि अंजली 10.00-10.30 बजे रात्रि तक वापस नहीं आई । मोटरसाइकिल के हार्न की आवाज सुनकर अभि. सा. 6 ने घर का मुख्य द्वार खोला और उसने देखा कि केवल कीर्ति पाल ही वापस आया है । अभि. सा. 6 ने यह भी कथन किया है कि अपीलार्थी कीर्ति पाल ने उससे

आते ही यह पूछा कि उसके पास अंजली के कमरे की चाबी है या नहीं और अभि. सा. 6 ने कहा कि उसके पास चाबी नहीं है । अभि. सा. 6 ने अपीलार्थी से तुरंत अंजली के बारे में पूछा और अपीलार्थी ने उसे बताया कि "दीदी किसी व्यक्ति के साथ बातचीत कर रही है । वह उसे बाद में ले आएगा ।" यह कह कर अपीलार्थी कीर्ति पाल वहां से चला गया ।

13. अंजली को अंतिम बार प्रथम अपीलार्थी से साथ मानस चक्रवर्ती (अभि. सा. 10) द्वारा देखा गया था जिसने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि तारीख 11 नवंबर, 2008 को लगभग 5.35 बजे अपराह्न में जब वह कार्यालय से अपने घर वापस आया था, उसने देखा अंजली मकान के प्रथम तल पर बरामदे में बैठी हुई है और अभि. सा. 10 उससे किराया मांग रहा था । मकान में अंदर जाने के पश्चात् उसने देखा कि अभि. सा. 10 बरामदे में चाय पी रहा था और अंजली ब्यूटी पार्लर से उतर कर नीचे आ रही थी और मानस चक्रवर्ती (अभि. सा. 10) ने पुनः किराया मांगा और अंजली ने उसे हाथ से इशारा किया कि "मैं आ रही हूं" । अभि. सा. 10 ने यह कथन किया है कि उसने अंजली को मोटरसाइकिल पर पीछे बैठे हुए देखा था और यह भी कथन किया है कि वह मोटरसाइकिल ऐसा व्यक्ति चला रहा था जिसकी आयु लगभग 50 वर्ष थी और उसकी कद-काठी औसत थी और उसके सिर पर बहुत कम बाल थे ।

14. अभि. सा. 6, अभि. सा. 7 और अभि. सा. 10 के साक्ष्य से अभियोजन पक्ष ने यह सिद्ध किया है कि अंजली को तारीख 11 नवंबर, 2008 को सायंकाल अपीलार्थी कीर्ति पाल के साथ अंतिम बार जीवित देखा गया था और लगभग 10.00/10.30 बजे अपराह्न में अपीलार्थी कीर्ति पाल अकेला वापस आया था । "अंतिम बार जीवित देखे जाने" का सिद्धांत तब प्रभावी होता है जब अभियुक्त और मृतक को एक साथ देखे जाने और मृतक को मृत पाए जाने के बीच इतना कम समय रहता है कि अन्य किसी व्यक्ति द्वारा हत्या किए जाने की संभावना न रह सके । अगले दिन प्रातःकाल लगभग 9.30 बजे मृतका अंजली का शव बाबुईबोना जंगल में पाया गया था जो कि अंजली के निवास स्थान से 25 किलोमीटर दूर एक एकाकी स्थान है । जिस स्थान पर शव पाया गया था वह राजनगर, सूरी से लगा हुआ है । जिस समय अंजली अपीलार्थी कीर्ति पाल के साथ गई थी और वह समय जब उसे मृत पाया गया है, के बीच समयान्तराल से हमारी राय में अपीलार्थी कीर्ति पाल का दोषी होना इंगित होता है ।

15. चूंकि यह समय अंतराल बहुत कम है, इसलिए अपीलार्थी कीर्ति

पाल को इन परिस्थितियों को स्पष्ट करना होगा कि कैसे, कहां और किस रीति में वह अंजली से अलग हुआ था । इस प्रकार, इस सिद्धांत के आधार पर कि वह व्यक्ति जिसको उस अपराधी के साथ अंतिम बार देखा गया था जो अब मृत या लापता है तब ऐसी स्थिति में उस अपराधी को यह स्पष्ट करना होगा कि वह मृत या लापता व्यक्ति से कैसे या किस रीति में अलग हुआ था जैसाकि विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय द्वारा मत व्यक्त किया गया है, अपीलार्थी कीर्ति पाल साबित करने के इस भार का वहन करने में असफल रहा है और वह यह स्पष्ट नहीं कर सका है कि कब और कैसे तथा किस रीति में वह अंजली से अलग हुआ था, यह परिस्थिति अपीलार्थी कीर्ति पाल के विरुद्ध एक ठोस परिस्थिति है । राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल की दलील में बल है कि अपीलार्थी कीर्ति पाल कोई भी स्पष्टीकरण देने में असफल रहा है, यह अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए कि अपीलार्थी भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 106 के अधीन सबूत का भार वहन करने में असफल रहा है । **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **सतीश**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है कि अंतिम बार देखे जाने का सिद्धांत तब प्रभावी होता है जब अभियुक्त को मृतक के साथ अंतिम बार जीवित देखे जाने और मृतक के पाए जाने के बीच इतना कम समय हो कि इस बात की कोई संभावना न रहे कि अन्य किसी व्यक्ति ने मृतक की हत्या की है । **राजस्थान राज्य** बनाम **काशी राम**[2] वाले मामले के पैरा 23 में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है :–

> "अत्यधिक निर्णयज विधि प्रस्तुत करना आवश्यक नहीं है । इस संबंध में सिद्धांत सुस्थापित है । साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 के उपबंध स्वयं स्पष्ट और सटीक हैं जिनमें यह अधिकथित किया गया है कि जब कोई तथ्य किसी व्यक्ति की जानकारी में होता है तब उस तथ्य को साबित करने का भार उसी व्यक्ति पर होता है । इस प्रकार, जब किसी व्यक्ति को मृतक के साथ अंतिम बार देखा जाता है तब उसे यह स्पष्ट करना चाहिए कि वह कैसे और कब मृतक से अलग हुआ था । उसे ऐसा स्पष्टीकरण देना चाहिए जो न्यायालय की दृष्टि से संभावी और समाधानप्रद हो । यदि वह ऐसा करता है तब यह अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए कि उसने सबूत के भार का निर्वहन कर दिया है । यदि वह व्यक्ति उस तथ्य के आधार पर स्पष्टीकरण

---

[1] (2005) 3 एस. सी. सी. 114.
[2] (2006) 12 एस. सी. सी. 254.

देने में असफल रहता है जिसकी उसे विशेष जानकारी थी, तब उसे साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 के अंतर्गत सबूत के भार का निर्वहन करने के लिए असफल माना जाएगा । पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित मामले में यदि अभियुक्त उस पर पड़ने वाले सबूत के भार का निर्वहन करने के लिए युक्तियुक्त स्पष्टीकरण देने में असफल रहता है तब इससे उसके विरुद्ध परिस्थितियों की शृंखला में साक्ष्य की एक अतिरिक्त कड़ी जुड़ जाती है । धारा 106 के अंतर्गत दांडिक विचारण में सबूत का भार एक पक्ष से दूसरे पक्ष पर स्थानांतरित नहीं होता है और यह भार सदैव अभियोजन पक्ष पर ही होता है । यह नियम अधिकथित किया गया है कि जब अभियुक्त ऐसे तथ्यों को स्पष्ट नहीं करता है जो विशेषकर उसकी जानकारी में थे और जिनसे ऐसे किसी भी सिद्धांत या परिकल्पना का समर्थन नहीं होता हो जो उसकी निर्दोषिता के साथ संगत हों, अभियुक्त द्वारा ऐसे किसी भी स्पष्टीकरण दिए जाने में उसकी असफलता पर न्यायालय विचार कर सकता है और अभियुक्त की यह असफलता उसके विरुद्ध साक्ष्य की शृंखला में एक अतिरिक्त कड़ी बन जाती है । इस सिद्धांत का उल्लेख **नैना मोहम्मद**, ए. आई. आर. 1960 मद्रास 218 वाले मामले में संक्षिप्त रूप से किया गया है ।"

सम्पूर्ण अभियोजन पक्षकथन पर विचार करते हुए और परिस्थितियों को दृष्टिगत करते हुए तथा अंतिम बार देखे जाने के सिद्धांत का अनुसरण करते हुए, हमारी राय में अपीलार्थी के विरुद्ध उसे अपराध में फंसाने वाली ठोस परिस्थितियां हैं जिनसे साक्ष्य की शृंखला पूर्ण होती है और अपीलार्थी का दोषी होना निश्चित रूप से इंगित होता है ।

16. अभि. सा. 6 के परिसाक्ष्य से यह स्पष्ट होता है कि तारीख 11 नवंबर, 2008 अर्थात् घटना के दिन सायंकाल अंजली अपने घर से अभि. सा. 6 से यह कह कर गई थी कि वह प्रोसेनजीत और चिरंजीब के कार्यक्रम में सम्मिलित होने राजनगर जा रही है । असित डे (अभि. सा. 11) राजनगर हाई स्कूल का प्राचार्य है जिसने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि तारीख 11 नवंबर, 2008 को इस विद्यालय के मैदान में प्रोसेनजीत या चिरंजीब या अन्य किसी फिल्म कलाकार का कोई भी कार्यक्रम निर्धारित नहीं किया गया था । यह तथ्य कि राजनगर हाई स्कूल में कोई भी कार्यक्रम आयोजित किए जाने के लिए निर्धारित नहीं किया गया था, एक और अन्य परिस्थिति प्रथम अपीलार्थी के विरुद्ध सामने आती है ।

17. आपराधिक अन्वेषण विभाग के पुलिस निरीक्षक अर्धेन्दू शेखर पहाड़ी (अभि. सा. 38) ने यह कथन किया है कि अपीलार्थी कीर्ति पाल ने अपीलार्थी दुर्गा सूत्रधर को तारीख 26 दिसंबर, 2008 को 7 बजकर 47 मिनट और 50 सेकेंड पर अपने मोबाइल नम्बर 9232589186 से कॉल की थी और यह धमकी दी थी कि वह अंजली की हत्या के बारे में सी. आई. डी. पुलिस को न बताए । बीरेन माझी (अभि. सा. 7) ने भी अपीलार्थी द्वारा दी गई इस धमकी के बारे में साक्ष्य दिया है कि उसने अभि. सा. 7 को इस संबंध में धमकाया था कि वह पुलिस को कुछ न बताए और अपीलार्थी ने अभि. सा. 7 से मकान खाली करने को भी कहा था । चौथे अपीलार्थी अर्थात् दुर्गा सूत्रधर और बीरेन माझी (अभि. सा. 7) को प्रथम अपीलार्थी कीर्ति पाल द्वारा धमकाए जाने का यह पश्चात्वर्ती आचरण एक सुसंगत परिस्थिति है जिससे अपीलार्थी का अपराध के साथ संबद्ध होना उपदर्शित होता है ।

18. प्रथम तीन अभियुक्तों के गिरफ्तार होने के पश्चात् उनके प्रकटीकरण कथन के आधार पर एक देशी सिंगल शॉटर पाइपगन जिसकी नाल की लंबाई 10 इंच थी, ट्रिगर फायरिंग पिन और लोहे की बट के साथ बरामद की गई । अभिग्रहण ज्ञापन प्रदर्श-23/4 और 23/2 में यह कथन किया गया है कि बंदूक की बट से यह प्रतीत होता है कि इसका लकड़ी वाला भाग हटा दिया गया है । चन्द्र भाग नदी के किनारे पर चट्टानों के बीच से पुल के नीचे सालुका ग्राम के निकट पुलिस थाना राजनगर, जिला बीरभूमि के क्षेत्राधिकार के अधीन ये बरामदगियां की गई थीं । अभिग्रहण सूची प्रदर्श-25/2 के अनुसार तारीख 28 जनवरी, 2009 को अभि. सा. 38 ने लकड़ी की बट का रक्त-रंजित भाग बरामद किया जो उस बंदूक की बट का भाग प्रतीत होता है जिसकी माप लगभग 8 से. मी. है जिसके मध्य में पेच लगाने के लिए छिद्र बना हुआ है; लकड़ी की बट का रक्त-रंजित भाग करमकाल मौजा के अंतर्गत बाबुईबोना जंगल से भी बरामद किया गया है जो उस बंदूक से निकला प्रतीत होता है जिसकी माप लगभग 8 से. मी. है और उसमें लगभग 2.5 से. मी. माप का एक पेच बट के मध्य में लगा हुआ है । खलील (अभि. सा. 22) और अर्धेन्दू शेखर पहाड़ी (अभि. सा. 38) अर्थात् अन्वेषक अधिकारी ने इस बरामदगी के बारे में साक्ष्य दिया है । डा. डी. सरकार (अभि. सा. 29) ने अंजली गोस्वामी के शव का शवपरीक्षण किया है और यह रिपोर्ट दी है कि क्षति सं. 6 किसी कुंद वस्तु द्वारा कारित की गई है और यह क्षति बंदूक जैसे अग्न्यायुध की बट से प्रहार करके पहुंचाई जा सकती है । प्रथम अपीलार्थी-अभियुक्त के

कहने पर जो बरामदगी की गई है वह साक्ष्य की शृंखला में जुड़ने वाली एक और अपराधजन्य परिस्थिति है जिससे यह निष्कर्ष निकलता है कि प्रथम अपीलार्थी दोषी है ।

19. तारीख 28 जनवरी, 2009 को बरामद की गई लकड़ी की बटों को न्यायालयिक प्रयोगशाला भेजा गया । अभिगृहीत की गई लकड़ी की बटों पर रक्त लगा हुआ पाया गया; किंतु रक्त की मात्रा सीरम संबंधी परीक्षण (प्रदर्श-56) के लिए पर्याप्त नहीं थी । लकड़ी की बटों पर जो रक्त पाया गया है उसे इस आधार पर अनदेखा नहीं किया जा सकता है कि रक्त की मात्रा सीरम संबंधी परीक्षण के लिए पर्याप्त नहीं थी । ऐसी कोई भी विधिक प्रतिपादना नहीं है कि रक्त का पाया जाना साक्ष्य में इस आधार पर स्वीकार नहीं किया जा सकता कि सीरम संबंधी परीक्षण के लिए उसकी मात्रा अपर्याप्त है और इस आधार पर अभियोजन पक्षकथन पर संदेह नहीं किया जा सकता ।

20. दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 164 के अधीन अभिलिखित दुर्गा सूत्रधर (अभियुक्त 4) का कथन अभियुक्त कीर्ति पाल के विरुद्ध अपराध में फंसाने वाली एक अन्य परिस्थिति है । दुर्गा सूत्रधर (अभियुक्त 4) ने यह कथन किया है कि अभियुक्त कीर्ति पाल ने उससे फोन पर बात की थी और उसे यह धमकी दी थी कि वह पुलिस को कुछ न बताए, यह परिस्थिति अभियुक्त कीर्ति पाल के विरुद्ध उसे अपराध में फंसाने वाली तथा उसका दोष इंगित करने वाली एक ठोस परिस्थिति है ।

21. प्रथम अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि अभियुक्त का कोई भी हेतु प्रतीत नहीं होता है और मात्र इस कारण से कि प्रथम अपीलार्थी के अंजली गोस्वामी के साथ संबंध थे और घनिष्ठता थी, निचले न्यायालयों ने किसी भी हेतु के अभाव में प्रथम अपीलार्थी को दोषसिद्ध करने में त्रुटि की है । यह सत्य है कि हेतु ऐसे मामलों में एक महत्वपूर्ण संघटक है जिनमें दोषसिद्धि पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित होती है किंतु इसका यह अर्थ नहीं है कि पारिस्थितक साक्ष्य के सभी मामलों में यदि अभियोजन पक्ष समाधानप्रद रूप से हेतु साबित करने में असफल रहता है, तब अभियोजन पक्षकथन असफल हो जाएगा । इस मामले में, निःसंदेह, अभियोजन पक्ष ने यह साबित करने के लिए साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है कि अंजली की हत्या करने के संबंध में अभियुक्त का हेतु क्या था । किंतु यह सामान्य ज्ञान का मामला है कि हत्याएं किसी भी

स्पष्ट हेतु के बिना की जाती हैं । यह सुस्थापित है कि मात्र यह तथ्य कि अभियोजन पक्ष अभियुक्त की मानसिक स्थिति को साक्ष्य के रूप में स्पष्ट करने में असफल रहा है, इसका यह अर्थ नहीं है कि अभियुक्तों के मन में ऐसी बात नहीं आई होगी । ऐसा ही मत **विवेक कालरा** बनाम **राजस्थान राज्य**[1] वाले मामले में दोहराया गया है जो निम्न प्रकार है :–

> "17. जहां अभियोजन पक्ष केवल पारिस्थितिक साक्ष्य का अवलंब लेता है, वहां हेतु एक सुसंगत तथ्य होता है और इस पर भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 8 के अधीन विचार किया जा सकता है किंतु जहां परिस्थितियों की श्रृंखला से संदेह के परे यह सिद्ध हो जाता है कि अभियुक्त और केवल अभियुक्त ही वह व्यक्ति है जिसने अपराध कारित किया है और यह एक ऐसा मामला है जिसमें न्यायालय यह अभिनिर्धारित नहीं कर सकता है कि अभियुक्त का हेतु अभियोजन पक्ष द्वारा सिद्ध न किए जाने पर उसे अपराध का दोषी अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है । उजागर सिंह **बनाम** पंजाब राज्य, (2007) 13 एस. सी. सी. 90 वाले मामले के पृष्ठ सं. 99 के पैरा 17 में यह मत व्यक्त किया गया है –
>
> > 17. .... यह सत्य है कि पारिस्थितिक साक्ष्य से संबंधित मामले मे हेतु को अधिक महत्व तो दिया जाता है किंतु यह कहना कि हेतु के साबित न होने पर सम्पूर्ण अभियोजन वृत्तांत निष्फल हो जाएगा, एक ऐसा संघटक है जिसे ऐसा महत्व दिया जाता है जो सम्यक् रूप से आवश्यक नहीं है, हेतु अभियुक्त के मन में होता है और कभी-कभी किसी भी सीमा तक सटीक हो सकता है ।"

22. प्रथम अपीलार्थी अर्थात् कीर्ति पाल के विरुद्ध अभियोजन पक्ष द्वारा जिन परिस्थितियों का अवलंब लिया गया है वे पूर्णतया सिद्ध की गई हैं । साक्ष्य का मूल्यांकन करने पर विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय ने ठीक ही अभिनिर्धारित किया है कि अपीलार्थी कीर्ति पाल को अपराध में फंसाने वाली परिस्थितियां दृढ़तापूर्वक सिद्ध की गई हैं और साक्ष्य की ऐसी पूर्ण श्रृंखला बनती है जिससे अभियुक्त का दोषी होना इंगित होता है और ये परिस्थितियां उसके दोषी होने की परिकल्पना के साथ संगत हैं । हमें दंड संहिता की धारा 302 के अधीन प्रथम अपीलार्थी कीर्ति पाल की

---

[1] (2014) 12 एस. सी. सी. 439.

दोषसिद्धि के मामले में हस्तक्षेप करने का कोई भी सारभूत् आधार दिखाई नहीं देता है । जहां तक बलात्संग के आरोप का संबंध है, हम उच्च न्यायालय के मत से सहमत हैं कि दंड संहिता की धारा 376(2)(छ) के अधीन दोषसिद्धि कायम रखने के लिए कोई भी सकारात्मक साक्ष्य नहीं है । आयुध अधिनियम, 1959 की धारा 25(i)(क)(ख) के अधीन प्रथम अपीलार्थी की दोषसिद्धि और उसे अधिरोपित दंडादेश की पुष्टि की जाती है ।

अपीलार्थी-2, अपीलार्थी-3 और अपीलार्थी-4 का अपराध में आलिप्त होना और उनकी दोषसिद्धि

23. अपीलार्थी-2, अपीलार्थी-3 और अपीलार्थी-4 की दोषसिद्धि के लिए निचले न्यायालयों ने दो परिस्थितियों का अवलंब लिया है जो इस प्रकार हैं – (i) घटना के कुछ पूर्व और घटना के तत्काल पश्चात् सभी अभियुक्त फोन पर एक-दूसरे के साथ सम्पर्क बनाए हुए थे और इस प्रकार अपराध करने में षड्यंत्र रचा था; (ii) अपीलार्थी-2 और अपीलार्थी-3 से अपराध में फंसाने वाली वस्तुओं की बरामदगी हुई है ।

24. इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कि अभियुक्त-अपीलार्थी ने एक-साथ मिलकर इस अपराध को कारित करने का षड्यंत्र रचा है, निचले न्यायालयों ने मुख्य रूप से फोन से की गई कॉलों का अवलंब लिया है । प्रदर्श-30 कीर्ति पाल के मोबाइल नं. 9232589186 से की गई कॉलों का अभिलेख है जिससे यह दर्शित होता है कि कीर्ति पाल ने तारीख 7 दिसंबर, 2008 से 15 जनवरी, 2009 तक दुर्गा सूत्रधर को 41 कॉलें की थीं । प्रदर्श-31 सिद्दीक मियां द्वारा की गई कॉलों का अभिलेख है । प्रदर्श-31 से यह उपदर्शित होता है कि मुश्ताक मियां के फोन से सिद्दीक मियां को 144 कॉलें की गई थीं । इनमें से कुछ कॉलें, इनकमिंग कॉलें हैं जो सिद्दीक मियां के फोन से मुश्ताक मियां को की गई हैं । प्रदर्श-31 से यह भी उपदर्शित होता है कि अभियुक्त मुश्ताक मियां और अभियुक्त सिद्दीक मियां के बीच फोन पर बातचीत हुई है । प्रदर्श-32 से यह दर्शित होता है कि कीर्ति पाल ने तारीख 11 जुलाई, 2008 से 9 नवंबर, 2008 तक अंजली के मोबाइल फोन से 7 कॉलें की थीं । प्रदर्श-34 से यह दर्शित होता है कि 11 नवंबर, 2008 से 14 नवंबर, 2008 तक सरस्वती ने सिद्दीक मियां के फोन पर 7 कॉलें की थीं । दस्तावेजी साक्ष्य से यह उपदर्शित होता है कि सिद्दीक मियां ने तारीख 10 नवंबर, 2008 से 27 नवंबर, 2008 तक सरस्वती को 13 कॉलें की थीं । प्रदर्श-35 से यह दर्शित होता है कि सरस्वती ने तारीख 11 नवंबर, 2008 से 20 नवंबर, 2008 तक दुर्गा

सूत्रधर को 38 कॉलें की थीं । दस्तावेजी साक्ष्य से यह भी उपदर्शित होता है कि सभी अभियुक्त एक-दूसरे के साथ फोन पर सम्पर्क बनाए हुए थे । इन कॉलों के ब्यौरों की संवीक्षा से यह स्पष्ट होता है कि तारीख 11 नवंबर, 2008 को सरस्वती ने अंजली को 2 कॉलें की थीं जिनमें से एक कॉल 12.55 बजे अपराह्न में और दूसरी कॉल 12.58 बजे अपराह्न में की थी और 4 कॉलें सिद्दीक मियां को की थीं जिनमें से पहली कॉल 9.55 बजे पूर्वाह्न में की थी और अंतिम कॉल 5.20 बजे अपराह्न में की थी । दस्तावेजी साक्ष्य से यह भी उपदर्शित होता है कि तारीख 11 नवंबर, 2008 को सिद्दीक मियां की बातचीत मुश्ताक मियां से लगभग 7.19 बजे अपराह्न में फोन पर हुई थी और सिद्दीक मियां ने सरस्वती से भी फोन पर बात की थी जिसमें पहली कॉल 9.55 बजे पूर्वाह्न में की गई थी और अंतिम कॉल 9.42 बजे अपराह्न में की गई थी । सरस्वती ने भी दुर्गा सूत्रधर से कुछ दिन फोन पर बात की थी और उस दिन छह इनकमिंग और आउटगोइंग कॉलें की गई थीं । पहली कॉल लगभग 10.57 बजे पूर्वाह्न में और अंतिम कॉल 5.57 बजे अपराह्न में की गई थी ।

25. टेलीफोन पर की गई बातचीत के अतिरिक्त अभियोजन पक्ष द्वारा अन्य कोई भी साक्ष्य यह साबित करने के लिए प्रस्तुत नहीं किया गया है कि प्रथम अभियुक्त ने षड्यंत्र रचा था । यह साबित करने के लिए कोई भी साक्ष्य नहीं है कि अपीलार्थी-2 और अपीलार्थी-3 (सिद्दीक मियां और मुश्ताक मियां) घटनास्थल पर कैसे गए थे और उसके पश्चात् उन्होंने क्या किया । घटनास्थल के निकट उनकी मौजूदगी अभियोजन पक्ष द्वारा कुछ ऐसे अन्य साक्षियों की परीक्षा करने से सिद्ध की जा सकती थी जो घटनास्थल के निकट मौजूद थे या उनकी फोन-कॉलों की स्थिति (लोकेशन) नेटवर्क से पता करके भी घटनास्थल के निकट उनके मौजूद होने की स्थिति का पता लगाया जा सकता था । कॉल-अभिलेख से निकाले गए निष्कर्ष के अतिरिक्त षड्यंत्र सिद्ध करने के लिए अन्य कोई भी साक्ष्य अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत नहीं किया गया है ।

26. टेलीफोन पर की गई बातचीत के अतिरिक्त अभियोजन पक्ष ने अपीलार्थी-2 और अपीलार्थी-3 (सिद्दीक मियां और मुश्ताक मियां) के संस्वीकृति कथनों के अनुसरण में की गई बरामदगी का भी अवलंब लिया है । सिद्दीक मियां के कथन के अनुसरण में प्रदर्श-17/3 के अंतर्गत टीवीएस फियरो नामक ब्रांड की एक लाल रंग की मोटर साइकिल नं. डब्ल्यू बी 54 बी 8245, चाबी, मोबाइल सेट (नोकिया ब्रांड, कनेक्शन नं. 9932705533), एक

सोने की अंगूठी जिसकी आकृति फूल जैसी थी और उस पर "अंजली" लिखा हुआ था और चांदी की जंजीर जिसमें नीलम और लाल मूंगे के नग जड़े हुए थे प्रदर्श-18/3 के अंतर्गत अभिगृहीत किए गए । उत्तम मंडल (अभि. सा. 17) की परीक्षा किए जाने पर इन वस्तुओं की बरामदगी और इस संबंध में तैयार की गई अभिग्रहण सूची सिद्ध किए जाने की ईप्सा की गई । अभि. सा. 17 ने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि वह मृतका अंजली को जानता था । इसके पश्चात् अंजली के स्वामित्वाधीन होटल में अभि. सा. 17 को नियोजित किया गया था और यह होटल भाग्यधर धीबर द्वारा चलाया जा रहा था । अभि. सा. 17 ने अपने साक्ष्य में यह कथन किया है कि जनवरी, 2009 में दो या तीन व्यक्ति उसके होटल पर आए और उन्होंने उसके हस्ताक्षर लिए और उसे यह नहीं मालूम कि उन व्यक्तियों ने अभि. सा. 17 के हस्ताक्षर क्यों लिए थे । यद्यपि अभि. सा. 17 ने अभिग्रहण सूची पर किए गए अपने हस्ताक्षरों की शनाख्त की है फिर भी अभि. सा. 17 के साक्ष्य से किसी भी प्रकार से यह सिद्ध नहीं होता है कि अभियुक्त-2 और अभियुक्त-3 के कहने पर बरामदगी की गई थी । अभि. सा. 17 का साक्ष्य स्वीकार किए जाने योग्य नहीं है और इससे अभियोजन पक्ष को अधिक सहायता नहीं मिल सकती क्योंकि इस साक्षी ने बरामदगी और अभिग्रहण सूची के संबंध में स्पष्ट साक्ष्य नहीं दिया है । अन्य साक्षियों को सोने की अंगूठी और चांदी की जंजीर शनाख्त किए जाने के लिए नहीं दिखाई गई हैं कि वे अंजली की हैं या नहीं । अभियोजन पक्ष द्वारा अन्य साक्ष्य भी इन वस्तुओं की बरामदगी और अभिग्रहण सूची को सिद्ध करने के लिए प्रस्तुत नहीं किया गया है ।

27. जहां तक अभियुक्त दुर्गा सूत्रधर की सह-अपराधिता का संबंध है, अभियोजन पक्ष ने मुख्य रूप से कॉल-अभिलेख और न्यायिक मजिस्ट्रेट, द्वितीय न्यायालय, सूरी, बीरभूमि द्वारा अभिलिखित दुर्गा के न्यायिक संस्वीकृति कथन (प्रदर्श-26) का अवलंब लिया है । अभियोजन पक्ष ने अपीलार्थी सूत्रधर के कब्जे से बरामद और अभिगृहीत की गई टिप्पण पुस्तिका का अवलंब लिया है जिसमें अपीलार्थी दुर्गा ने कीर्ति पाल का फोन नम्बर रहस्यमय रूप से "दादू" के नाम से लिखा है । प्रदर्श-30 कीर्ति पाल के फोन से संबंधित कॉल-अभिलेख है जिससे दर्शित होता है कि कीर्ति पाल ने चतुर्थ अपीलार्थी को कई कॉलें की थीं । अपीलार्थी-2 और अपीलार्थी-3 (सिद्दीक मियां और मुश्ताक मियां) की भांति टेलीफोन-कॉलों के अतिरिक्त अभियोजन पक्ष द्वारा कोई भी साक्ष्य चतुर्थ अभियुक्त अर्थात्

दुर्गा सूत्रधर का दोष साबित करने के लिए प्रस्तुत नहीं किया गया है । जहां तक दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 164 के अधीन अभिलिखित न्यायिक संस्वीकृति कथन का संबंध है, यह कोई अभिशंसी कथन नहीं है किंतु इससे कीर्ति पाल का केवल पश्चात्‌वर्ती यह आचरण दर्शित होता है कि उसने दुर्गा सूत्रधर को यह धमकी दी थी कि वह इस संबंध में पुलिस को कुछ न बताए । हमारे मतानुसार न तो कीर्ति पाल (प्रथम अपीलार्थी) और दुर्गा सूत्रधर (चतुर्थ अपीलार्थी) के बीच की गईं टेलीफोन-कॉलें और न ही संस्वीकृति कथन चतुर्थ अपीलार्थी का दोष सिद्ध करने के लिए पर्याप्त हैं ।

28. पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित मामले में न्यायालय को अत्यंत भानपूर्ण दृष्टिकोण अपनाना चाहिए और दोषसिद्धि केवल तभी अभिलिखित करना चाहिए जब साक्ष्य की शृंखला की सभी कड़ियां पूर्ण हों और उनसे अभियुक्त का दोषी होना इंगित होता हो । अभियोजन पक्ष द्वारा साक्ष्य की पूर्ण शृंखला दृढ़तापूर्वक सिद्ध की जानी चाहिए । साक्ष्य की प्रत्येक कड़ी पर प्रथक् रूप से विचार करने पर संदेह हो सकता है और ऐसा संदेह सबूत का स्थान नहीं ले सकता और यह अभियुक्त की दोषसिद्धि के लिए पर्याप्त नहीं होगा । सभी परिस्थितियां दृढ़तापूर्वक सिद्ध की जानी चाहिए और वे अभियुक्त के दोषी होने की परिकल्पना के साथ संगत होनी चाहिए । किंतु इसका यह अर्थ नहीं है कि अभियोजन पक्ष प्रत्येक परिकल्पना पर विचार करे जो अभियुक्त द्वारा प्रस्तुत की गई है चाहे वह कितनी भी दूरस्थ क्यों न हो । जैसाकि पहले ही विचार किया गया है, टेलीफोन-कॉलों और बरामदगी से अभियुक्त पर संदेह होता है किंतु मात्र संदेह सबूत का स्थान नहीं ले सकता । हमारे मतानुसार अपीलार्थी-2 और अपीलार्थी-3 (सिद्दीक मियां और मुश्ताक मियां) के विरुद्ध अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य से साक्ष्य की ऐसी कोई शृंखला नहीं बनती है जिससे अभियुक्त को अपराध के साथ संबद्ध किया जा सके और दंड संहिता की धारा 120ख के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपीलार्थियों की दोषसिद्धि कायम नहीं रखी जा सकती और यह अपास्त की जानी चाहिए । इसी प्रकार, दुर्गा सूत्रधर (चतुर्थ अपीलार्थी) की दोषसिद्धि दंड संहिता की धारा 120ख के अधीन कायम नहीं रखी जा सकती और अपास्त की जानी चाहिए ।

29. परिणामतः, अभियुक्त कीर्ति पाल द्वारा फाइल की गई दांडिक अपील सं. 50/2014 खारिज की जाती है और कीर्ति पाल (प्रथम अपीलार्थी)

को उच्च न्यायालय द्वारा दंड संहिता की धारा 302 और धारा 120ख तथा आयुध अधिनियम, 1959 की धारा 25(i)(क)(ख) के अधीन की गई दोषसिद्धि और दिए गए दंडादेश की पुष्टि की जाती है । अभियुक्त सिद्दीक मियां और मुश्ताक मियां द्वारा फाइल की गई दांडिक अपील सं. 1841/2012 और अपीलार्थी दुर्गा सूत्रधर द्वारा फाइल की गई दांडिक अपील सं. 1725/2014 मंजूर की जाती हैं । अपीलार्थी-2 से अपीलार्थी-4 (सिद्दीक मियां, मुश्ताक मियां और दुर्गा सूत्रधर) को सभी अपराधों से दोषमुक्त किया जाता है और यदि वे अन्य किसी मामले में वांछित नहीं हैं तब उन्हें तत्काल छोड़े जाने का निदेश दिया जाता है ।

अपीलों का निपटारा किया गया ।

अस.

[2015] 4 उम. नि. प. 35

बिवश चन्द्र देबनाथ उर्फ बिवश डी और अन्य

बनाम

पश्चिमी बंगाल राज्य

16 अप्रैल, 2015

न्यायमूर्ति दीपक मिश्र और न्यायमूर्ति प्रफुल्ल सी. पंत

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 149 – विधिविरुद्ध जमाव – 27 अभियुक्तों का आरोप से मुक्त हो जाना किंतु शेष अभियुक्तों का संख्या में पांच से अधिक पाया जाना – साक्ष्य से यह साबित होने पर कि तीन अपीलार्थियों के अतिरिक्त अन्य व्यक्तियों ने भी अपराध में भाग लिया था, ऐसी स्थिति में केवल तीन अभियुक्तों को भी धारा 149 के अधीन दोषसिद्ध किया जा सकता है ।

दंड संहिता, 1860 – धारा 302 और 304 – हत्या और हत्या की कोटि में न आने वाला मानव वध – अपीलार्थी और मृतक के बीच अचानक लड़ाई होना – हत्या का कोई पूर्व-चिन्तन न किया जाना – अपीलार्थियों द्वारा बिना किसी पूर्व-चिन्तन के मृतक पर हमला किया गया था, ऐसी स्थिति में अपीलार्थियों को हत्या के लिए नहीं अपितु हत्या की कोटि में

न आने वाले मानव वध के अपराध का ही दोषी ठहराया जा सकता है ।

इस मामले में अपीलार्थियों ने शिकायतकर्ता के जीजा के खेत में उनकी अनुमति के बिना सिंचाई के लिए खुदाई करानी आरंभ कर दी जिस पर शिकायतकर्ता पक्ष और अपीलार्थियों सहित 30 अभियुक्तों के बीच झगड़ा हो गया जिसके परिणामस्वरूप अजीत राय की हत्या हो गई । मामला दर्ज होने के पश्चात्, अपीलार्थियों सहित तीसों अभियुक्तों को गिरफ्तार किया गया और सेशन न्यायालय द्वारा विचारण किए जाने के पश्चात् 27 अभियुक्तों को सभी आरोपों से दोषमुक्त कर दिया गया और शेष 3 अभियुक्तों को दंड संहिता की धारा 149 के साथ धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध किया । इन तीनों अभियुक्तों ने कलकत्ता उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल करते हुए विचारण न्यायालय के आदेश को चुनौती दी । उच्च न्यायालय ने अपीलार्थियों की अपील खारिज करते हुए विचारण न्यायालय के निर्णय की पुष्टि की । उच्च न्यायालय के इस निर्णय से व्यथित होकर तीनों अपीलार्थियों ने उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । उच्चतम न्यायालय ने अपीलार्थियों की अपील भागतः मंजूर करते हुए दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन उनकी दोषसिद्धि अपास्त कर दी और दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 304 भाग I के अधीन अपीलार्थियों को दोषसिद्ध किया तथा आजीवन कारावास की अवधि को कम करके सात वर्ष कर दिया । अपील भागतः मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – यह न्यायालय निचले न्यायालयों द्वारा व्यक्त किए गए इस मत से सहमत है कि पांच से अधिक व्यक्तियों का जमाव गठित किया गया था जिसका सामान्य उद्देश्य मृतक के विरुद्ध आपराधिक बल का प्रयोग करना था । मात्र इस कारण से कि 27 अभियुक्तों को संदेह के परे आरोप साबित न किए जाने की स्थिति में दोषमुक्त कर दिया गया है, यह नहीं कहा जा सकता है कि जिन व्यक्तियों ने अपराध कारित किया है वे केवल तीन थे या वह जमाव केवल तीन व्यक्तियों द्वारा गठित किया गया था । अभिलेख पर पर्याप्त साक्ष्य है जिससे यह पता चलता है कि अपीलार्थी, जिनकी भूमिका विशेष रूप से अभिलेख पर साबित की गई है, अन्य व्यक्तियों के साथ मौजूद थे । इससे अन्यथा भी चूंकि अपीलार्थियों की भूमिका साबित करने के लिए पर्याप्त साक्ष्य मौजूद है कि उन्होंने ही ऊपर उल्लिखित रूप में मृतक को क्षतियां कारित की हैं जिनसे उसकी मृत्यु हुई है, दंड संहिता की धारा 149 के बिना भी वे दंड संहिता की धारा 34 के

अधीन सामान्य आशय के आधार पर अजीत नाथ की मृत्यु के दोषी अभिनिर्धारित किए जाने के लिए जिम्मेदार हैं । (पैरा 13)

अतः न्यायालय को आशय के सही अर्थ से संबंधित प्रश्न पर विचार सावधानीपूर्वक करना चाहिए ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि मामला दंड संहिता की धारा 302 के अधीन आता है या धारा 304 भाग I या धारा 304 भाग II के अधीन । ऐसे बहुत से छोटे-मोटे आम मामले हैं जिनमें कहा-सुनी के परिणामस्वरूप मृत्यु कारित हो जाती है, जैसे – फल तोड़ना, मवेशियों को इधर-उधर चराना, बच्चों के बीच लड़ाई होना, अभद्र शब्द बोलना या अश्लील दृष्टि से देखना । ऐसे मामलों में प्रतिशोध, लोभ, ईर्ष्या या संदेह से संबंधित पूर्णतया कोई हेतु नहीं होता । अपराध कारित करने का आशय भी नहीं होता है । अपराध कारित करने का कोई पूर्व-चिन्तन भी नहीं होता है । वास्तव में, कृत्य में कोई अपराधिता भी नहीं होती है । इसके प्रतिकूल हत्या के ऐसे मामले भी होते हैं जिनमें अभियुक्त हत्या के दंड से बचने के लिए अपना मामला इस प्रकार प्रस्तुत करने का प्रयास करते हैं कि मृत्यु कारित करने का उनका कोई भी आशय नहीं था । न्यायालय का यह कर्तव्य है कि वह सुनिश्चित करे कि जो मामले दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय हैं वे दंड संहिता की धारा 304 भाग I/ भाग II के अधीन दंडनीय अपराध में परिवर्तित नहीं किए जा सके या ऐसे अपराध जो हत्या की कोटि में न आने वाले मानव वध के अंतर्गत आते हैं वे दंड संहिता की धारा 302 के अंतर्गत आने वाले अपराध में परिवर्तित नहीं किए जा सके । मृत्यु कारित करने का आशय सामान्य रूप से निम्न परिस्थितियों से सृजित किया जा सकता है – (i) अपराध में प्रयोग किए गए हथियार की प्रकृति (ii) अभियुक्त के पास हथियार पहले से मौजूद था या घटनास्थल से लिया गया है (iii) हमला आहत के नाजुक अंग पर किया गया है या नहीं (iv) क्षति कारित करने में कितने बल का प्रयोग किया गया है (v) अपराधी द्वारा किया गया कृत्य अचानक लड़ाई या अचानक झगड़े का परिणाम है या इन सब बातों से भिन्न है (vi) क्या घटना संयोग से घटित हुई है या कोई पूर्व-चिन्तन किया गया था (vii) क्या दोनों पक्षों के बीच कोई पूर्व शत्रुता थी या आहत अभियुक्त के लिए अपरिचित था (viii) क्या झगड़ा गंभीर और अचानक प्रकोपन का परिणाम है और यदि ऐसा है तब प्रकोपन का कारण क्या है (ix) क्या कृत्य आवेग की तीव्रता में किया गया है (x) क्षति कारित करने वाले व्यक्ति ने अचानक प्रकोपन का असम्यक् लाभ उठाया है या उसने क्रोध और असामान्य रीति में कृत्य किया है (xi) अभियुक्त ने एक ही वार किया है या अनेक ।

निःसंदेह, परिस्थितियों की उपर्युक्त सूची स्वयं में संतृप्त नहीं है और अलग-अलग मामलों में बहुत सी अन्य ऐसी परिस्थितियां भी हो सकती हैं जिनसे अपराधी का आशय स्पष्ट हो सकता है । स्थिति कुछ भी हो सकती है । अपीलार्थी और मृतक के बीच अचानक लड़ाई हुई थी और मृतक के साथ सत्य चरन देबनाथ, कार्तिक नाथ, पंचानन देबनाथ और दुलाल नाथ भी थे, और इस बात पर विचार करते हुए कि अपीलार्थियों ने हत्या करने का कोई पूर्व-चिन्तन नहीं किया था, न्यायालय का यह मत है कि इस मामले में यह अभिनिर्धारित करना उचित होगा कि अपीलार्थियों द्वारा कारित किया गया अपराध दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय नहीं अपितु धारा 304 भाग I के अधीन दंडनीय है । (पैरा 19 और 21)

अवलंबित निर्णय

		पैरा
[2006]	(2006) 11 एस. सी. सी. 444 : **पुलिचेरला नागार्जू** उर्फ **नागराजा रेड्डी** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य** ।	19

निर्दिष्ट निर्णय

[2012]	(2012) 10 एस. सी. सी. 256 : **दहारी और अन्य** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ;	16
[2011]	(2011) 5 एस. सी. सी. 423 : **शाजी और अन्य** बनाम **केरल राज्य** ;	17
[1975]	(1975) 2 एस. सी. सी. 596 : **धर्मपाल और अन्य** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ;	15
[1974]	(1974) 4 एस. सी. सी. 603 : **खेम करन और अन्य** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य** ।	14

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2011 की दांडिक अपील सं. 157.

1994 की दांडिक पुनरीक्षण आवेदन सं. 235 में कलकत्ता उच्च न्यायालय के तारीख 2 मार्च, 2010 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से सर्वश्री राम जेठमलानी (ज्येष्ठ अधिवक्ता),

बिजन कुमार घोष, राजीव तिवारी, प्रवण देश, पी. आर. माला, करन कालिया और आशीष दीक्षित

प्रत्यर्थी की ओर से श्री अनीप सचदे, श्री मोहित पॉल और सुश्री शगुन मट्टा

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति प्रफुल्ल सी. पंत ने दिया ।

न्या. पंत – यह अपील 1994 की दांडिक अपील सं. 235 में कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा पारित किए गए तारीख 2 मार्च, 2010 के उस निर्णय और आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है जिसके अनुसार उक्त न्यायालय ने अपील खारिज करते हुए अपर सेशन न्यायाधीश, प्रथम न्यायालय, नाडिया द्वारा सेशन मामला सं. 11(6) 1986/एस.टी. सं. II (3) 1994 में भारतीय दंड संहिता, 1860 (जिसे संक्षेप में "दंड संहिता" कहा गया है) की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अभिलिखित अभियुक्त-अपीलार्थी बिवश चन्द्र देबनाथ, शम्भू घोष और सदानन्द मंडल की दोषसिद्धि और दंडादेश की पुष्टि की है ।

2. हमने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को सुना और अभिलेख पर प्रस्तुत दस्तावेजों का परिशीलन किया ।

3. संक्षेप में, अभियोजन वृत्तांत इस प्रकार है कि सत्य चरन देबनाथ (अभि. सा. 1) और उसकी बहिन के पति गणेश नाथ ने ग्राम गरीबपुर के पंचानन्ताल की उत्तरी दिशा में स्थित भूमि में से दो भू-खंड लगभग इस घटना के एक मास पूर्व क्रय किए । इन दोनों व्यक्तियों ने क्रय की गई इस भूमि पर कृषि करना आरंभ कर दिया और "बारो" नामक धान के पौधे लगा दिए । अभियुक्त बिवश चन्द्र देबनाथ **उर्फ** पातल (अपीलार्थी सं. 1) की भूमि गणेश नाथ द्वारा क्रय की गई भूमि के पश्चिम में थी । तारीख 1 दिसंबर, 1983 को लगभग 8.00 बजे पूर्वाह्न में सत्य चरन देबनाथ (अभि. सा. 1) और उसका जीजा गणेश नाथ को यह पता चला कि अभियुक्त बिवश चन्द्र देबनाथ बहुत से अन्य व्यक्तियों के साथ मिलकर गणेश नाथ की भूमि से होकर अपने खेत में सिंचाई के लिए खुदाई करवा रहा है । इस पर सत्य चरन (अभि. सा. 1) गणेश नाथ और उसके तीन भाई अजीत नाथ, दुलाल नाथ और कार्तिक नाथ तथा उसका पुत्र पंचानन देबनाथ उस भूमि की ओर दौड़े जहां पर खुदाई का कार्य चल रहा था । उन्होंने देखा कि अभियुक्त बिवश चन्द्र देबनाथ **उर्फ** पातल सह-अभियुक्तों अर्थात् सुनील

नाथ, जैमिनी देबनाथ, शम्भू घोष (अपीलार्थी 2), सिधिराम घोष, सदानन्द मंडल (अपीलार्थी 3) और 27 अन्य व्यक्तियों के साथ गणेश नाथ की भूमि में खुदाई करवा रहा था और सिंचाई का चैनल बनवा रहा था । गणेश नाथ ने इस पर आपत्ति की और अपीलार्थी सं. 1 से पूछा कि वह उसकी भूमि पर उसकी अनुमति के बिना खुदाई क्यों करवा रहा है । इस पर तीनों अपीलार्थी और उनके साथी क्रोधित हो गए जो अपने साथ तंगी, भाला, रामदाऊ, तीर कमान, डंडे आदि ग्राम से लेकर आए थे और उन्होंने सत्य चरन देबनाथ (अभि. सा. 1), अजीत नाथ, पंचानन देबनाथ और बसुदेव नाथ का पीछा जीतेन नाथ के खेत तक किया और उन पर हमला किया और हमलावरों ने उन्हें घटनास्थल पर रक्तरंजित अवस्था में छोड़ा । आहत व्यक्तियों में अजीत नाथ की क्षतियों के कारण मृत्यु हो गई और शेष आहत अर्थात् दुलाल नाथ (अभि. सा. 4), कार्तिक नाथ (अभि. सा. 2), पंचानन देबनाथ (अभि. सा. 3) और बासुदेव नाथ को चिकित्सा उपचार के लिए अस्पताल ले जाया गया ।

4. उसी दिन अर्थात् तारीख 1 दिसंबर, 1983 को लगभग 10.30 बजे पूर्वाह्न में पुलिस थाना तेहट्टा में पुलिस उप-निरीक्षक नसरुल इस्लाम को इस घटना की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सत्य चरन देबनाथ (अभि. सा. 1) द्वारा मौखिक रूप से दी गई । उक्त रिपोर्ट प्रदर्श 1 के रूप में अभिलिखित की गई और 11.55 बजे पूर्वाह्न में पुलिस थाने में दंड संहिता की धारा 147, 148, 149, 447, 326 और 302 के अधीन दंडनीय अपराध के संबंध में आपराधिक मामला 30 अभियुक्तों अर्थात् बिवश चन्द्र देबनाथ **उर्फ** पातल (अपीलार्थी सं. 1), सुनील देबनाथ, जैमिनी देबनाथ, शम्भू घोष (अपीलार्थी 2), सिधिराम घोष, बुद्धदेब घोष, सदानन्द मंडल (अपीलार्थी 3), सुरजा मंडल, दयाल मंडल, बिसवा नाथ मंडल, नेमाई मंडल, रंजीत मंडल, जगनाथ मंडल, अद्वेता मंडल, अनिल नाथ, दुलाल मंडल, कार्तिक बिस्वास, गणेश बिस्वास, श्रृष्टिधर बिस्वास, दुलाल बिस्वास, सुनील बिस्वास, संतोष बिस्वास, भीम चन्द्र नाथ, नबा कुमार नाथ, नारायण चन्द्र नाथ, निर्मल कुमार नाथ, गोपाल चन्द्र मंडल, अनिल मंडल, लक्ष्मण मंडल और बिस्वनाथ नाथ के विरुद्ध दर्ज किया गया ।

5. नसरुल इस्लाम (अभि. सा. 6) पुलिस कार्मिकों के साथ उपरोक्त रूप में मामला दर्ज किए जाने के पश्चात् घटनास्थल पर गया, अजीत नाथ का शव अभिरक्षा में लिया, मोहरबंद किया और मृत्युसमीक्षा रिपोर्ट तैयार की । इस पुलिस अधिकारी ने साक्षियों से परिप्रश्न किए । शव को शव-परीक्षण के लिए भेज दिया गया । डा. रबीन्द्र एन. कुंडू (न्यायालय साक्षी-1)

ने तारीख 2 दिसंबर, 1983 को मृतक के शव का शवपरीक्षण किया और उन्होंने मृत्युपूर्व की 8 क्षतियां अभिलिखित कीं जिनमें 6 क्षतियां छिन्न घाव की थीं । चिकित्सा अधिकारी ने शवपरीक्षण रिपोर्ट (प्रदर्श-5) तैयार की और यह राय दी कि मृतक की मृत्यु सदमा और रक्त-स्राव के कारण हुई है और यह सदमा और रक्त-स्राव मृतक को मृत्युपूर्व पहुंची क्षतियों के कारण हुआ था । अन्वेषण अधिकारी ने अभियुक्तों को गिरफ्तार किया और अन्वेषण पूरा होने पर अपीलार्थी बिवश चन्द्र देबनाथ, शम्भू घोष **उर्फ** राम पाडा और सदानन्द मंडल सहित कुल मिलाकर 30 अभियुक्तों के विरुद्ध आरोप पत्र प्रस्तुत किया । यह मामला विचारण के लिए सेशन न्यायालय के सुपुर्द कर दिया गया ।

6. विचारण न्यायालय ने पक्षकारों को सुनने के पश्चात् तीसों अभियुक्तों के विरुद्ध तारीख 4 सितंबर, 1989 को दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 147, 447 और धारा 149 के साथ पठित धारा 326 और धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपराध के लिए आरोप विरचित किए जिस पर अभियुक्तों ने दोषी न होने का अभिवाक् किया और विचारण किए जाने की मांग की । इसके पश्चात् अभियोजन पक्ष ने तीन प्रत्यक्षदर्शी साक्षी अर्थात् सत्य चरन देबनाथ (इत्तिलाकर्ता और प्रत्यक्षदर्शी साक्षी अर्थात् अभि. सा. 1), कार्तिक नाथ (अभि. सा. 2), पंचानन देबनाथ (अभि. सा. 3) और दुलाल नाथ (अभि. सा. 4) की परीक्षा की और इनके साथ उप-निरीक्षक अजय कुमार घोष (अभि. सा. 5) तथा उप-निरीक्षक नसरुल इस्लाम (अभि. सा. 6 जिसने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अभिलिखित की है और मृत्युसमीक्षा रिपोर्ट तैयार की है), निर्मल अधिकारी (अभि. सा. 7 जो पुलिस वाहन का चालक है), संजीब कुमार बिस्वास (अभि. सा. 8 जिसने कुछ अभियुक्तों को गिरफ्तार किया है), दीनबंधु (अभि. सा. 9) और कांस्टेबल जियाउल इस्लाम (अभि. सा. 10) की भी परीक्षा की है ।

7. तारीख 19 जुलाई, 1994 को दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 313 के अधीन अभियुक्तों के समक्ष मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य रखा गया जिसके उत्तर में उन्होंने यह कथन किया कि उन्हें इस घटना के संबंध में कोई जानकारी नहीं है और यह अभिवाक् किया कि उनके समक्ष प्रस्तुत किया गया साक्ष्य मिथ्या है । तथापि, अभियुक्तों ने अपनी प्रतिरक्षा में कोई भी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है ।

8. पक्षकारों को सुनने के पश्चात्, विचारण न्यायालय ने यह निष्कर्ष

निकाला कि अभियुक्त बिवश चन्द्र देबनाथ **उर्फ** पातल, शम्भू घोष और सदानन्द मंडल ने अन्य अभियुक्तों के साथ मिलकर सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करने में अजीत नाथ की हत्या की है और विचारण न्यायालय ने तीनों अभियुक्तों को तारीख 5 अगस्त, 1994 को दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध का दोषी अभिनिर्धारित किया । विचारण न्यायालय ने शेष अभियुक्तों के संबंध में यह निष्कर्ष निकाला कि अभियोजन पक्ष उनके विरुद्ध आरोप साबित करने में असफल रहा है इसलिए उन्हें दोषमुक्त कर दिया गया । इसके पश्चात्, दंडादेश के प्रश्न पर लोक अभियोजक और अभियुक्तों के काउंसेल की सुनवाई की गई और तीनों दोषियों में प्रत्येक को आजीवन कारावास भोगने और 1,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने जिसका व्यतिक्रम किए जाने पर 2 वर्ष का अतिरिक्त कठोर कारावास भोगने का दंडादेश दिया । तारीख 5 अगस्त, 1994 के उक्त निर्णय और आदेश से व्यथित होकर तीनों दोषसिद्ध व्यक्तियों ने इस दंडादेश को उच्च न्यायालय के समक्ष दांडिक अपील सं. 235/1994 फाइल करते हुए चुनौती दी । उच्च न्यायालय ने साक्ष्य का पुनः निर्धारण करने पर विचारण न्यायालय द्वारा व्यक्त किए गए मत से सहमति प्रकट करते हुए अपील खारिज कर दी । इस प्रकार, यह अपील विशेष इजाजत द्वारा फाइल की गई है ।

9. आगे चर्चा करने के पूर्व हम मृतक अजीत नाथ को पहुंची मृत्युपूर्व क्षतियों का उल्लेख करना उचित समझते हैं जिन्हें शवपरीक्षण के उपरांत प्रदर्श-5 के रूप में डा. रबीन्द्र एन. कुंडू (न्यायालय साक्षी-1) द्वारा अभिलिखित किया गया है । शवपरीक्षण रिपोर्ट इस प्रकार है :–

> "(1) दाईं कोहनी के सामने की ओर 5 इंच × 1.5 इंच माप का छिन्न घाव जो मांसपेशी तक गहरा है ।
>
> (2) दाएं कान से परे सिर के दाईं ओर 3 इंच × 1.5 इंच माप का छिन्न घाव जो अस्थि तक गहरा है । घाव को खोलने पर कपोलास्थि में कटाव दिखाई देता है ।
>
> (3) जबड़े के दाईं ओर 2.5 इंच × 0.5 इंच माप का छिन्न घाव है जो मांसपेशी तक गहरा है ।
>
> (4) दाएं घुटने के पार्श्व में 2 इंच × 1 इंच माप का छिन्न घाव है जो मांसपेशी तक गहरा है ।
>
> (5) दाईं टांग के पार्श्व में 4 इंच × 1.5 इंच माप का छिन्न घाव

है जो मांसपेशी तक गहरा है । बहिर्जंघिका दो भागों में कटी हुई है ।

(6) दाईं स्कन्धास्थि में 6 इंच × 2 इंच माप का छिन्न घाव है । स्कन्धास्थि कटी हुई है ।

(7) गर्दन के बाईं ओर 2.5 इंच × 1 इंच माप का छिन्न घाव है जो मांसपेशी तक गहरा है ।

(8) शरीर के विभिन्न अंगों पर अनेक रगड़ मौजूद हैं ।"

चिकित्सा अधिकारी ने यह राय दी है कि मृतक की मृत्यु सदमा और रक्त-स्राव से हुई है जो ऊपर उल्लिखित मृत्युपूर्व कारित घावों के परिणामस्वरूप हुआ था । चिकित्सा अधिकारी ने अपनी रिपोर्ट (प्रदर्श-5) में यह भी उल्लेख किया है कि मृत्युपूर्व की क्षतियां मानव वध प्रकृति की हैं । डा. रबीन्द्र एन. कुंडू (न्यायालय साक्षी-1) ने यह कथन किया है कि मृतक को पहुंची क्षतियां टंगी और दाउ से कारित की जा सकती हैं और प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में ऐसी क्षतियों से मृत्यु हो सकती है । चिकित्सा अधिकारी के साक्ष्य और शवपरीक्षण रिपोर्ट से अभिलेख पर यह साबित हो जाता है कि अजीत नाथ की मृत्यु मानव वध है ।

10. अब हमें इस पर विचार करना है कि निचले न्यायालयों ने यह निष्कर्ष ठीक निकाला है या नहीं कि अपीलार्थी ने अन्य व्यक्तियों के साथ सामान्य उद्देश्य से मृतक को मृत्युपूर्व क्षतियां पहुंचाकर उसकी हत्या की है । इस संबंध में चार प्रत्यक्षदर्शी साक्षी हैं जिन्होंने अपराध कारित करने में अपीलार्थियों की भूमिका के संबंध में अभिसाक्ष्य दिया है । सत्य चरन देबनाथ (अभि. सा. 1) ने सम्पूर्ण अभियोजन वृत्तांत का वर्णन किया है और अपीलार्थी बिवश चन्द्र देबनाथ **उर्फ** पातल, शम्भू घोष और सदानन्द मंडल तथा कुछ अन्य व्यक्तियों की अपराध में भूमिका के संबंध में अभिसाक्ष्य दिया है । इस साक्षी ने यह भी स्पष्ट किया है कि अभियुक्त द्वारा गणेश नाथ के खेत में खुदाई किए जाने को लेकर लड़ाई किस प्रकार आरंभ हुई । इस साक्षी ने अपने अभिसाक्ष्य में विशेष रूप से यह कथन किया है कि अभियुक्त-अपीलार्थियों ने दाउ (धारदार हथियार) से लैस होकर अजीत नाथ पर हमला करके उसकी मृत्यु कारित की है ।

11. कार्तिक नाथ (अभि. सा. 2), पंचानन देबनाथ (अभि. सा. 3) और दुलाल नाथ (अभि. सा. 4) जो कि प्रत्यक्षदर्शी साक्षी हैं, ने सत्य चरन देबनाथ (अभि. सा. 1) के मौखिक परिसाक्ष्य की सम्पुष्टि की है । निःसंदेह, ये प्रत्यक्षदर्शी साक्षी इत्तिलाकर्ता (अभि. सा. 1) के नातेदार हैं किंतु मात्र

इस कारण से इनके परिसाक्ष्य को अविश्वसनीय नहीं ठहराया जा सकता, विशेषकर ऐसी स्थिति में जब अपीलार्थियों के साथ घटनास्थल पर उनकी मौजूदगी नैसर्गिक प्रतीत होती हो । यह उल्लेख करना सुसंगत होगा कि यह घटना ग्राम गरीबपुर में घटित हुई है और चारों साक्षी एक ही ग्राम के निवासी हैं । इन साक्षियों की अपीलार्थियों के साथ कोई भी वैयक्तिक शत्रुता प्रतीत नहीं होती है ।

12. अपीलार्थियों की ओर से यह दलील दी गई है कि अभियुक्तों में से केवल तीन अभियुक्तों को दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध का दोषी पाया गया है और जब तक कि अभिलेख पर यह साबित नहीं हो जाता है कि विधिविरुद्ध जमाव पांच या पांच से अधिक व्यक्तियों द्वारा गठित किया गया था, अपीलार्थियों को दंड संहिता की धारा 149 के अधीन दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता ।

13. हमने निचले न्यायालयों के अभिलेख का परिशीलन किया है और उनके द्वारा व्यक्त किए गए मत से सहमत हैं कि पांच से अधिक व्यक्तियों का जमाव गठित किया गया था जिसका सामान्य उद्देश्य मृतक के विरुद्ध आपराधिक बल का प्रयोग करना था । मात्र इस कारण से कि 27 अभियुक्तों को संदेह के परे आरोप साबित न किए जाने की स्थिति में दोषमुक्त कर दिया गया है, यह नहीं कहा जा सकता है कि जिन व्यक्तियों ने अपराध कारित किया है वे केवल तीन थे या वह जमाव केवल तीन व्यक्तियों द्वारा गठित किया गया था । अभिलेख पर पर्याप्त साक्ष्य है जिससे यह पता चलता है कि अपीलार्थी, जिनकी भूमिका विशेष रूप से अभिलेख पर साबित की गई है, अन्य व्यक्तियों के साथ मौजूद थे । इससे अन्यथा भी चूंकि अपीलार्थियों की भूमिका साबित करने के लिए पर्याप्त साक्ष्य मौजूद है कि उन्होंने ही ऊपर उल्लिखित रूप में मृतक को क्षतियां कारित कीं हैं जिनसे उसकी मृत्यु हुई है, दंड संहिता की धारा 149 के बिना भी वे दंड संहिता की धारा 34 के अधीन सामान्य आशय के आधार पर अजीत नाथ की मृत्यु के दोषी अभिनिर्धारित किए जाने के लिए जिम्मेदार हैं ।

14. **खेम करन और अन्य** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य**[1] वाले मामले के पैरा 6 में इस न्यायालय ने निम्न मत व्यक्त किया है :–

> " .... इस तथ्य से कि बहुत से अभियुक्तों को दोषमुक्त किया गया है और जिन अभियुक्तों को दोषसिद्ध किया गया

[1] (1974) 4 एस. सी. सी. 603.

है वे संख्या में पांच से कम हैं, सारभूत् धारा के साथ पठित धारा 149 के अधीन की गई दोषसिद्धि दूषित नहीं हो सकती यदि – जैसाकि इस मामले में न्यायालय ने यह पता लगाने पर विचार किया है – कि ऐसे अन्य व्यक्ति भी हैं जिनकी शनाख्त नहीं की जा सकी है या जिन्हें दोषसिद्ध नहीं किया जा सका है किंतु उन्होंने अपराध में भाग लिया है और उन्होंने विधि में उपबंधित संख्या गठित की है ।"

15. **धर्मपाल और अन्य** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले के पैरा 10 में इस न्यायालय ने ऐसा ही मत व्यक्त किया है जो निम्न प्रकार है :–

" .... यदि उदाहरण के लिए केवल पांच ज्ञात व्यक्तियों ने अभिकथित रूप से हमला करने में भाग लिया है किंतु न्यायालयों ने यह निष्कर्ष निकाला है कि उनमें से दो व्यक्तियों को अपराध में मिथ्या फंसाया गया है, तब यह निष्कर्ष निकालना पूर्णतया नैसर्गिक और तर्कसम्मत होगा कि अपराध में भाग लेने वाले व्यक्ति संख्या में पांच से कम थे । इसके प्रतिकूल यह न्यायालय यह अभिनिर्धारित करता है कि हमलावर वास्तव में पांच थे, किंतु अभिकथित हमलावरों में से दो हमलावरों की शनाख्त संदेहपूर्ण है और उन्हें दोषमुक्त कर दिया जाता है, तब शेष अभियुक्तों को दो अभियुक्तों की शनाख्त से संबंधित संदेह का लाभ नहीं मिलेगा क्योंकि ठोस साक्ष्य और उचित तर्क के आधार पर दृढ़ निष्कर्ष निकाला गया है कि हमलावर पांच या पांच से अधिक थे ।"

16. **दहारी और अन्य** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[2] वाले मामले के पैरा 20 में इस न्यायालय ने निम्न मत व्यक्त किया है :–

" 20. निःसंदेह इस न्यायालय ने स्पष्ट रूप से यह अभिनिर्धारित किया है कि ऐसी स्थिति में दंड संहिता की धारा 149 के अधीन दोषसिद्धि नहीं की जा सकती विशेषकर तब जब कुछ अभियुक्तों को दोषमुक्त किया गया हो, अभियुक्तों की कुल संख्या घट कर पांच से कम हो गई हो और अभियोजन का यह पक्षकथन न हो कि वास्तव में कुछ अन्य अभियुक्त भी हैं जिन्हें अभी तक विचारण के लिए नहीं लाया गया है । तथापि, यह भी विधि की सुस्थापित प्रतिपादना है कि ऐसी तथ्यात्मक स्थिति में उच्च न्यायालय निश्चय ही अपीलार्थियों को

[1] (1975) 2 एस. सी. सी. 596.
[2] (2012) 10 एस. सी. सी. 256.

दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध कर सकता था ।"

17. **शाजी और अन्य** बनाम **केरल राज्य**[1] वाले मामले के पैरा 12 में इस न्यायालय ने निम्न मत व्यक्त किया है :–

> "12. .... मोहन सिंह **बनाम** पंजाब राज्य (ए. आई. आर. 1963 एस. सी. 174) वाले मामले में संविधान न्यायपीठ द्वारा किए गए विनिश्चय को दृष्टिगत करते हुए वर्तमान मामले में दो अभियुक्तों को उन पर लगाए गए सभी आरोपों से दोषमुक्त करने के पश्चात् भी यदि ऐसी कोई सामग्री है जिससे यह साबित होता हो कि वे विधि-विरुद्ध जमाव के सदस्य थे, तब दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दोषसिद्धि की जा सकती है ।"

18. अपीलार्थियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री राम जेठमलानी ने हमारे समक्ष यह भी दलील दी है कि यदि अभियोजन वृत्तांत को सत्य मान लिया जाए, तब भी अपीलार्थियों द्वारा अभिकथित रूप से किए गए कृत्य से केवल हत्या की कोटि में न आने वाला मानव वध गठित होता है जो दंड संहिता की धारा 304 भाग II के अधीन दंडनीय है । इस संबंध में इस न्यायालय का ध्यान दंड संहिता की धारा 300 के अपवाद 4 की ओर दिलाया गया है जो निम्न प्रकार है :–

> "अपवाद 4 – आपराधिक मानव वध हत्या नहीं है, यदि वह मानव वध अचानक झगड़ा जनित आवेश की तीव्रता में हुई अचानक लड़ाई में पूर्व-चिन्तन बिना और अपराधी द्वारा अनुचित लाभ उठाए बिना या क्रूरतापूर्ण या अप्रायिक रीति से कार्य किए बिना किया गया हो ।
>
> स्पष्टीकरण – ऐसी दशाओं में यह तत्वहीन है कि कौन पक्ष प्रकोपन देता है या पहला हमला करता है ।"

19. वर्तमान मामले के अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्य का मूल्यांकन करने पर हम अपीलार्थियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल की इस दलील से सहमत हैं कि चूंकि यह अचानक लड़ाई का मामला है और अपीलार्थियों द्वारा कोई भी पूर्व-चिन्तन नहीं किया गया है और अपराधियों ने अप्रायिक रीति में

---

[1] (2011) 5 एस. सी. सी. 423.

कार्य नहीं किया है, इसलिए उनके कृत्य दंड संहिता की धारा 300 के अपवाद 4 के अंतर्गत आते हैं । **पुलिचेरला नागार्जू** उर्फ **नागराजा रेड्डी** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले के पैरा 29 में इस न्यायालय ने इस मुद्दे पर विचार किया है कि किस स्थिति में दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए की गई दोषसिद्धि को दंड संहिता की धारा 304 भाग I या धारा 304 भाग II के अधीन दोषसिद्धि में परिवर्तित किया जा सकता है जो कि निम्न प्रकार है :–

> "29. अतः न्यायालय को आशय के सही अर्थ से संबंधित प्रश्न पर विचार सावधानीपूर्वक करना चाहिए ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि मामला दंड संहिता की धारा 302 के अधीन आता है या धारा 304 भाग I या धारा 304 भाग II के अधीन । ऐसे बहुत से छोटे-मोटे आम मामले हैं जिनमें कहा-सुनी के परिणामस्वरूप मृत्यु कारित हो जाती है, जैसे – फल तोड़ना, मवेशियों को इधर-उधर चराना, बच्चों के बीच लड़ाई होना, अभद्र शब्द बोलना या अश्लील दृष्टि से देखना । ऐसे मामलों में प्रतिशोध, लोभ, ईर्ष्या या संदेह से संबंधित पूर्णतया कोई हेतु नहीं होता । अपराध कारित करने का आशय भी नहीं होता है । अपराध कारित करने का कोई पूर्व-चिन्तन भी नहीं होता है । वास्तव में, कृत्य में कोई अपराधिता भी नहीं होती है । इसके प्रतिकूल हत्या के ऐसे मामले भी होते हैं जिनमें अभियुक्त हत्या के दंड से बचने के लिए अपना मामला इस प्रकार प्रस्तुत करने का प्रयास करते हैं कि मृत्यु कारित करने का उनका कोई भी आशय नहीं होता । न्यायालय का यह कर्तव्य है कि वह सुनिश्चित करे कि जो मामले दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय हैं वे दंड संहिता की धारा 304 भाग I/भाग II के अधीन दंडनीय अपराध में परिवर्तित नहीं किए जा सकते या ऐसे अपराध जो हत्या की कोटि में न आने वाले मानव वध के अंतर्गत आते हैं वे दंड संहिता की धारा 302 के अंतर्गत आने वाले अपराध में परिवर्तित नहीं किए जा सकते । मृत्यु कारित करने का आशय सामान्य रूप से निम्न परिस्थितियों से सृजित किया जा सकता है – (i) अपराध में प्रयोग किए गए हथियार की प्रकृति (ii) अभियुक्त के पास हथियार पहले से मौजूद था या घटनास्थल से लिया गया है (iii) हमला आहत के नाजुक अंग पर किया गया है या नहीं (iv) क्षति कारित करने में कितने बल का

---

[1] (2006) 11 एस. सी. सी. 444.

प्रयोग किया गया है (v) अपराधी द्वारा किया गया कृत्य अचानक लड़ाई या अचानक झगड़े का परिणाम है या इन सब बातों से भिन्न है (vi) क्या घटना संयोग से घटित हुई है या कोई पूर्व-चिन्तन किया गया था (vii) क्या दोनों पक्षों के बीच कोई पूर्व शत्रुता थी या आहत अभियुक्त के लिए अपरिचित था (viii) क्या झगड़ा गंभीर और अचानक प्रकोपन का परिणाम है और यदि ऐसा है तब प्रकोपन का कारण क्या है (ix) क्या कृत्य आवेग की तीव्रता में किया गया है (x) क्षति कारित करने वाले व्यक्ति ने अचानक प्रकोपन का असम्यक् लाभ उठाया है या उसने क्रोध और असामान्य रीति में कृत्य किया है (xi) अभियुक्त ने एक ही वार किया है या अनेक । निःसंदेह, परिस्थितियों की उपर्युक्त सूची स्वयं में संतृप्त नहीं है और अलग-अलग मामलों में बहुत सी अन्य ऐसी परिस्थितियां भी हो सकती हैं जिनसे अपराधी का आशय स्पष्ट हो सकता है । स्थिति कुछ भी हो सकती है ।"

20. इस न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि के उपर्युक्त सिद्धांत को दृष्टिगत करते हुए और वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए यह तथ्य सामने आता है कि वर्तमान मामले में यह स्पष्ट हो गया है कि अपीलार्थी और मृतक के बीच अचानक लड़ाई हुई थी और मृतक के साथ सत्य चरन देबनाथ (अभि. सा. 1), कार्तिक नाथ (अभि. सा. 2), पंचानन देबनाथ (अभि. सा. 3) और दुलाल नाथ (अभि. सा. 4) भी थे, और इस बात पर विचार करते हुए कि अपीलार्थियों ने हत्या करने का कोई पूर्व-चिन्तन नहीं किया था, न्यायालय का यह मत है कि इस मामले में यह अभिनिर्धारित करना उचित होगा कि अपीलार्थियों द्वारा कारित किया गया अपराध दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय नहीं अपितु धारा 304 भाग I के अधीन दंडनीय है ।

21. तद्नुसार, यह अपील भागतः मंजूर की जाती है । दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित दोषसिद्धि और दंडादेश अपास्त किए जाते हैं । किंतु, तीनों अपीलार्थी अर्थात् बिवश चन्द्र देबनाथ **उर्फ** पातल, शम्भू घोष **उर्फ** शम्भू चरन घोष और सदानन्द मंडल को दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 304 भाग I के अधीन दोषसिद्ध किया जाता है और प्रत्येक अपराधी को 7 वर्ष की अवधि का कठोर कारावास भोगने का दंडादेश दिया जाता है । अपराधियों द्वारा कारावास की जो अवधि पहले से भोगी जा चुकी है

वह इस न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत दंडादेश में से कम कर दी जाएगी ।

अपील भागतः मंजूर की गई ।

अस.

[2015] 4 उम. नि. प. 49

रमन लाल और एक अन्य

बनाम

हरियाणा राज्य

तथा

भगत सिंह और एक अन्य

बनाम

हरियाणा राज्य

15 मई, 2015

न्यायमूर्ति टी. एस. ठाकुर और न्यायमूर्ति रोहिन्टन फाली नारीमन

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 304 भाग I – हत्या की कोटि में न आने वाला मानव वध – जहां अभियुक्त द्वारा किए गए कार्य का आशय मृत्यु कारित करना न हो किंतु आशय ऐसी शारीरिक क्षति पहुंचाना हो जिससे मृत्यु कारित करने की संभावना हो वहां अभियुक्त धारा 304 भाग I के अर्थान्तर्गत दोषसिद्ध किए जाने का दायी होगा ।

दंड संहिता, 1860 – धारा 141 और 149 – विधिविरुद्ध जमाव तथा सामान्य उद्देश्य – जहां आरोपित पांच अभियुक्तों में से दो अभियुक्तों को दोषमुक्त किया जाता है वहां जमाव केवल तीन अभियुक्तों का ही माना जाएगा जो स्पष्टतः विधिविरुद्ध जमाव गठित नहीं करता, अतः अभियुक्तों को विधिविरुद्ध जमाव के लिए दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता ।

अभियोजन पक्षकथन इस प्रकार है कि तारीख 2 जुलाई, 1998 को लगभग 10.00 बजे प्रातःकाल वेदपाल और उसका भाई गोपाल, जिसकी अब मृत्यु हो चुकी है, ग्राम डूंगरीवाला, जिला फरीदाबाद, हरियाणा में अपने

खेतों की सिंचाई कर रहे थे । दोपहर लगभग 12.00 बजे निहार सिंह का पुत्र जयपाल उनके खेत में आया जिसमें दोनों भाइयों ने धान की फसल उगाई हुई थी । मृतक गोपाल ने जयपाल द्वारा उनकी इस फसल में अतिचार किए जाने पर आक्षेप किया और इस पर जयपाल ने अपशब्दों का प्रयोग करते हुए कहा कि वह धान के खेत से ही होकर जाएगा और उसने गोपाल द्वारा किए गए विरोध की कोई परवाह नहीं की । जब मृतक गोपाल और जयपाल के बीच कहा-सुनी हो रही थी, तब घटनास्थल पर 10 से 12 व्यक्ति लाठियों, फरसों तथा बल्लमों से लैस होकर आए । उनके साथ हरचन्द, जयराम के पुत्र दिगम्बर और भगत सिंह, हरचन्द के पुत्र राजबीर और भोला, गिरिराज का पुत्र जगदीश, जगदीश का पुत्र रतन लाल और रमेश के पुत्र नरेश और राजकुमार भी थे जो सभी जाट जाति से थे और वे ग्राम डूंगरीवाला के निवासी थे । उन्होंने अभिकथित रूप से वेदपाल और मृतक गोपाल को जान से मारने के लिए ललकारा और उन दोनों पर हमला किया तथा क्षतियां कारित कीं जिनमें मृतक गोपाल के सिर पर भी क्षति कारित की और गोपाल जमीन पर गिर गया । आहतों को होडल के अस्पताल में उपचार के लिए भेज दिया गया जहां पर वेदपाल ने सहायक पुलिस उप-निरीक्षक नारायन सिंह को अपना कथन दिया जिसके आधार पर ऊपर उल्लिखित व्यक्तियों के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 148, 149, 323 और 307 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए मामला दर्ज किया गया । एस्कार्ट अस्पताल, फरीदाबाद में गोपाल की क्षतियों के कारण मृत्यु हो जाने पर दंड संहिता की धारा 307 के अधीन अपराध को धारा 302 के अधीन हत्या के अपराध में परिवर्तित कर दिया गया । पुलिस द्वारा अन्वेषण किए जाने के परिणामस्वरूप अभियुक्त हरचन्द, दिगम्बर, और जगदीश को तारीख 3 जुलाई, 1998 को गिरफ्तार किया गया । अन्वेषण के दौरान अभियुक्तों से बहुत सी वस्तुएं बरामद की गईं जिनके आधार पर कुल मिलाकर 10 अभियुक्तों के विरुद्ध आरोप पत्र फाइल किया गया और जयराम के पुत्र भगत सिंह को निर्दोष होने के कारण इस अपराध से अपवर्जित कर दिया गया किंतु प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में उसे नामित किया गया था और अभियुक्त जयपाल को किशोर होने के कारण किशोर न्यायालय, फरीदाबाद भेज दिया गया । परिणाम यह हुआ कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में नामित किए गए अभियुक्तों में से केवल 9 अभियुक्तों को दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 148, 323, 325 और 302 के अधीन अपराध का विचारण किए जाने के लिए अपर सेशन न्यायाधीश, फरीदाबाद के सुपुर्द कर दिया गया । विचारण के दौरान, जयराम के पुत्र भगत सिंह को दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 319 के अधीन

अभियुक्त बनाया गया और इस प्रकार विचारण किए जाने वाले अभियुक्तों की संख्या कुल मिलाकर 10 हो गई । अभियोजन पक्ष ने अपने पक्षकथन के समर्थन में कुल मिलाकर 10 साक्षियों की परीक्षा की है । इन साक्षियों में प्रथम इत्तिलाकर्ता वेदपाल, प्रकाश, किशन सिंह, सतबीर सिंह, डा. एच. के. मिश्रा, वी. आर. गुप्ता और एस. पी. जयन्त हैं । शेष साक्षी पुलिस कार्मिक हैं जिनमें एक अन्वेषण अधिकारी भी है । अभियुक्तों ने अपनी प्रतिरक्षा में कोई भी साक्षी प्रस्तुत नहीं किया है । दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 313 के अधीन अभिलिखित अभियुक्तों के कथन में उन्होंने यह अभिवाक् किया है कि उन्हें मिथ्या फंसाया गया है । यह भी अभिकथन किया गया है कि जयपाल और हरचन्द घटना के समय घटनास्थल पर अकेले मौजूद थे और शेष 9 अभियुक्तों को मिथ्या फंसाया गया है । अपीलार्थियों का यह भी पक्षकथन है कि घटना वाले दिन उस समय जयपाल अपने खेतों में पानी लगा रहा था जब मृतक गोपाल ने उसके साथ जारकर्म करने का प्रयास किया था । हरचन्द ने मृतक के इस प्रयास को देखा और आपत्ति की जिस पर मृतक गोपाल ने हरचन्द पर लाठी से वार किया । हरचन्द ने प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग करते हुए और जयपाल को बचाने की दृष्टि से मृतक गोपाल पर लाठी से वार किया और जयपाल ने इस घटना में वेदपाल को क्षतियां पहुंचाईं । विचारण न्यायालय ने अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य का मूल्यांकन किया और यह निष्कर्ष निकाला कि वेदपाल और प्रकाश के अभिसाक्ष्य पूर्णतया विश्वसनीय हैं । विचारण न्यायालय ने अभियुक्तों की ओर से दी गईं ये दलीलें खारिज कर दीं कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने में जो विलंब हुआ था उसे समाधानप्रद रूप से स्पष्ट नहीं किया गया है और यह कि अभियोजन पक्ष यह स्पष्ट करने में असफल रहा है कि अभियुक्तों को कैसे क्षतियां पहुंचीं । विचारण न्यायालय ने इस दलील को भी खारिज कर दिया कि अपराध कारित करने का कोई हेतु नहीं था या इस मामले में प्रस्तुत किए गए चिकित्सीय और प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य के बीच कोई विरोधाभास था । विचारण न्यायालय ने इस तर्कणा के आधार पर दसों अभियुक्तों को दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषी ठहराते हुए आजीवन कारावास भोगने और प्रत्येक को 5,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने के लिए दंडादिष्ट किया । जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम किए जाने पर प्रत्येक को अतिरिक्त एक वर्ष का कठोर कारावास भोगने के लिए दंडादिष्ट किया । दंड संहिता की धारा 325 के अधीन सभी अभियुक्तों को एक वर्ष का कठोर कारावास भोगने तथा प्रत्येक को 1,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने जिसका व्यतिक्रम किए जाने पर अतिरिक्त तीन

मास का कारावास भोगने के लिए दंडादिष्ट किया । दंड संहिता की धारा 323 और धारा 148 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए प्रत्येक अभियुक्त को 1,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने के लिए दंडादिष्ट किया । तथापि, इस जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम किए जाने पर कोई दंडादेश नहीं दिया गया । अपीलार्थियों ने अधिनिर्णीत दोषसिद्धि और दंडादेश से व्यथित होकर, पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ के समक्ष 2000 की दांडिक अपील सं. 631 फाइल की जिसका निपटारा 2001 के दांडिक पुनरीक्षण आवेदन सं. 345, जो प्रथम इत्तिलाकर्ता वेदपाल की ओर से फाइल किया गया था, के साथ एक ही निर्णय और आदेश द्वारा किया गया था और यह निर्णय और आदेश इन अपीलों में आक्षेपित है । उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए गए साक्ष्य का मूल्यांकन करने पर यह निष्कर्ष निकाला कि दिगम्बर, राजबीर, लाला, भोला, जगदीश और राजकपूर द्वारा फाइल की गई अपील मंजूर की जानी चाहिए और हरचन्द, रमन लाल, नरेश और भगत सिंह की ओर से फाइल की गई अपील खारिज की जानी चाहिए । मामले की इसी संक्षिप्त पृष्ठभूमि में हरचन्द, रमन लाल, नरेश और भगत सिंह ने विशेष इजाजत द्वारा उन्हें अधिनिर्णीत दोषसिद्धि और दंडादेश को चुनौती देते हुए हमारे समक्ष ये अपीलें फाइल की हैं । ये दोनों अपीलें विशेष इजाजत से पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ की खंड न्यायपीठ द्वारा तारीख 7 मई, 2009 को पारित किए गए उस एक ही निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई हैं जिसके अनुसार उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय द्वारा भारतीय दंड संहिता, 1860 (जिसे संक्षेप में "दंड संहिता" कहा गया है) की धारा 149 के साथ पठित धारा 323, 325 और 302 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए, की गई अपीलार्थियों की दोषसिद्धि को चुनौती देने वाली उनकी ओर से फाइल की गई 2000 की दांडिक अपील सं. 631 खारिज की और प्रत्येक को अधिनिर्णीत आजीवन कारावास के दंडादेश की पुष्टि की । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील भागतः मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – सिद्धांत को वर्तमान मामले पर लागू करते हुए न्यायालय को यह अभिनिर्धारित करने में कोई संकोच नहीं है कि क्षति की प्रकृति, शरीर का वह नाजुक अंग जहां क्षति कारित की गई है और अपीलार्थी हरचन्द द्वारा प्रयोग किए गए हथियार तथा चिकित्सीय साक्ष्य अर्थात् यह साक्ष्य कि क्षति प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त है, को दृष्टिगत करते हुए वर्तमान मामले से संबंधित अपराध हत्या की कोटि में आने वाला मानव वध कहलाएगा और यह दंड संहिता की

धारा 300 के अपवाद 4 के अंतर्गत नहीं आएगा । तथापि, प्रश्न यह सामने आता है कि क्या अपवाद 4 वास्तव में लागू होगा और यदि यह लागू हो सकता है तब क्या कारित की गई क्षति मृत्यु कारित करने या ऐसी शारीरिक क्षति कारित करने के आशय से कारित की गई थी जिससे मृत्यु संभावित हो । मामले की जिन परिस्थितियों को इस न्यायालय ने निर्णय के पूर्ववर्ती भाग में निर्दिष्ट किया है उन पर इस संबंध में कोई संदेह नहीं किया जा सकता कि यह घटना पूर्व-चिन्तन के बिना और अचानक लड़ाई होने पर घटित की गई थी । मृतक को पहुंची क्षतियां आवेग की तीव्रता में कारित की गई थीं और अपीलार्थियों ने कोई भी असम्यक् लाभ नहीं लिया है और न ही उन्होंने क्रूरतापूर्ण या असामान्य रीति में कृत्य किया है । अतः ऐसी तथ्यात्मक स्थिति में अपवाद 4 लागू होगा विशेषकर तब जबकि अपवाद 4 के स्पष्टीकरण के निबंधनों में ऐसे मामलों में यह महत्वपूर्ण नहीं रह जाता है कि किस पक्षकार ने प्रकोपन कारित किया या पहले हमला किया । ऐसी स्थिति होने पर क्षति कारित करने वाले अपराधी द्वारा किया गया अपराध हत्या नहीं अपितु दंड संहिता की धारा 304 के अधीन दंडनीय हत्या की कोटि में न आने वाला मानव वध कहलाएगा । अब इस प्रश्न पर विचार करेंगे कि क्या अपीलार्थी हरचन्द द्वारा किया गया कृत्य साशय हत्या कारित करने या ऐसी क्षति कारित करने का था जिससे मृत्यु होना संभावित हो, न्यायालय की यह राय है कि यदि मृत्यु कारित करने का आशय न किया गया हो तब भी ऐसी क्षति कारित करने के आशय से कृत्य किया गया है जिससे मृत्यु होना संभावित हो और यह कृत्य दंड संहिता की धारा 304 भाग I के अर्थांतर्गत आता है । (पैरा 16 और 17)

वर्तमान मामले पर सिद्धांत को लागू करते हुए न्यायालय का यह मत है कि दंड संहिता की धारा 149 के उपबंध ऐसे अपीलार्थियों को दोषसिद्ध करने के लिए अभियोजन पक्ष को उपलब्ध नहीं हैं जिनकी संख्या शेष अभियुक्तों के दोषमुक्त किए जाने के परिणामस्वरूप घट कर 4 हो गई है । वर्तमान मामले के तथ्य पहली और दूसरी उन परिस्थितियों के अंतर्गत नहीं आते हैं जिन्हें मोहन सिंह वाले मामले में निर्दिष्ट किया गया है । न्यायालय की राय में यह ऐसा मामला है जो तीसरी परिस्थिति के अंतर्गत अधिक उचित रूप से आता है जिसमें अभियोजन पक्ष ने उन सभी अभियुक्तों को नामित किया है जिन्होंने विधिविरुद्ध जमाव गठित किया था किंतु नामित किए गए अभियुक्तों में से केवल 4 को तत्पश्चात् दोषसिद्ध किया गया, इसके परिणामस्वरूप अभियुक्तों की संख्या घट कर 5 से कम हो गई । ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है जिससे यह पता चलता हो कि आरोप

पत्र में नामित किए गए अभियुक्तों के अतिरिक्त कोई भी व्यक्ति विधिविरुद्ध जमाव का सदस्य था किंतु ऐसे व्यक्तियों का उल्लेख किया गया है जो उपलब्ध नहीं हो सके या जिनकी शनाख्त नहीं की जा सकी । ऐसी स्थिति होने पर, दंड संहिता की धारा 149 के अधीन अपीलार्थियों की दोषसिद्धि विधिक रूप से कायम रखे जाने योग्य प्रतीत नहीं होती है । अपीलार्थियों की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा तीसरी दलील अभियुक्त हरचन्द से संबंधित है जिसने घातक क्षति पहुंचाने का अपराध कारित किया है । यह दलील दी गई है कि प्रश्नगत घटना अचानक लड़ाई में पूर्व-चिन्तन किए बिना घटित हुई और यह घटना जयपाल द्वारा शिकायतकर्ता के फसल लगे हुए खेत में प्रवेश करने के परिणामस्वरूप घटित हुई । ऐसे व्यक्तियों द्वारा क्षतियां कारित हुईं जिन्होंने एक-दूसरे के साथ लड़ाई की । अपीलार्थी हरचन्द ने कोई भी असम्यक् लाभ नहीं लिया है और न ही उसने क्रूर या असामान्य रीति में कृत्य किया है । अतः यह मामला दंड संहिता की धारा 300 के अपवाद 4 के अंतर्गत आएगा । इस तथ्य से, कि हरचन्द ने मृतक गोपाल के सिर पर केवल एक क्षति पहुंचाई थी, यह दर्शित होता है कि मृतक गोपाल की हत्या करने का उसका कोई आशय नहीं था, अन्य क्षतियां शेष अभियुक्तों द्वारा कारित की गई हैं साधारण प्रकृति की हैं । अतः, विद्वान् काउंसेल के अनुसार, यह अपराध दंड संहिता की धारा 304 भाग II के अधीन दंडनीय हत्या की कोटि में न आने वाले मानव वध से अधिक गंभीर नहीं हो सकता । (पैरा 12 और 13)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[1991]	(1991) 2 एस. सी. सी. 532 : **नागमलेश्वर राव (के.) और अन्य** बनाम **आन्ध्र प्रदेश राज्य** ;	11
[1963]	ए. आई. आर. 1963 एस. सी. 174 : **मोहन सिंह** बनाम **पंजाब राज्य** ;	10
[1958]	ए. आई. आर. 1958 एस. सी. 465 : **विरसा सिंह** बनाम **पंजाब राज्य** ।	14

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2009 की दांडिक अपील सं. 2279 और 2010 की दांडिक अपील सं. 1351.

2000 की दांडिक अपील सं. 631 में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ की खंड न्यायपीठ के तारीख 7 मई, 2009 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से	सर्वश्री भगवती प्रसाद, फखरूद्दीन (ज्येष्ठ अधिवक्ता), संजीव भटनागर, पुष्पिन्दर सिंह, मंजू जेटली, (सुश्री) राम निवास बूरी, (सुश्री) दिव्या मिश्रा और (सुश्री) एन. अन्नपूर्णा
प्रत्यर्थी की ओर से	सर्वश्री अरूण कुमार (अपर महाधिवक्ता), कमल मोहन गुप्ता, संजय कुमार विसेन और (श्रीमती) एम. कमरूद्दीन

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति टी. एस. ठाकुर ने दिया ।

न्या. ठाकुर – ये दोनों अपीलें विशेष इजाजत से पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ की खंड न्यायपीठ द्वारा तारीख 7 मई, 2009 को पारित किए गए उस एक ही निर्णय के विरुद्ध फाइल की गईं हैं जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय द्वारा भारतीय दंड संहिता, 1860 (जिसे संक्षेप में "दंड संहिता" कहा गया है) की धारा 149 के साथ पठित धारा 323, 325 और 302 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए, की गई अपीलार्थियों की दोषसिद्धि को चुनौती देने वाली उनकी ओर से फाइल की गई 2000 की दांडिक अपील सं. 631 खारिज की और प्रत्येक को अधिनिर्णीत आजीवन कारावास के दंडादेश की पुष्टि की ।

2. संक्षेप में अभियोजन पक्षकथन इस प्रकार है कि तारीख 2 जुलाई, 1998 को लगभग 10.00 बजे प्रातःकाल वेदपाल और उसका भाई गोपाल, जिसकी अब मृत्यु हो चुकी है, ग्राम डूंगरीवाला, जिला फरीदाबाद, हरियाणा में अपने खेतों की सिंचाई कर रहे थे । दोपहर लगभग 12.00 बजे निहार सिंह का पुत्र जयपाल उनके खेत में आया जिसमें दोनों भाइयों ने धान की फसल उगाई हुई थी । मृतक गोपाल ने जयपाल द्वारा उनकी इस फसल में अतिचार किए जाने पर आक्षेप किया और इस पर जयपाल ने अपशब्दों का प्रयोग करते हुए कहा कि वह धान के खेत से ही होकर जाएगा और उसने गोपाल द्वारा किए गए विरोध की कोई परवाह नहीं की । जब मृतक गोपाल और जयपाल के बीच कहा-सुनी हो रही थी, तब घटनास्थल पर 10

से 12 व्यक्ति लाठियों, फरसों तथा बल्लमों से लैस होकर आए । उनके साथ हरचन्द, जयराम के पुत्र दिगम्बर और भगत सिंह, हरचन्द के पुत्र राजबीर और भोला, गिरिराज का पुत्र जगदीश, जगदीश का पुत्र रतन लाल और रमेश के पुत्र नरेश और राजकुमार भी थे जो सभी जाट जाति से थे और वे ग्राम डूंगरीवाला के निवासी थे । उन्होंने अभिकथित रूप से वेदपाल और मृतक गोपाल को जान से मारने के लिए ललकारा और उन दोनों पर हमला किया तथा क्षतियां कारित कीं जिनमें मृतक गोपाल के सिर पर भी क्षति कारित की और गोपाल जमीन पर गिर गया । आहतों को होडल के अस्पताल में उपचार के लिए भेज दिया गया जहां पर वेदपाल ने सहायक पुलिस उप-निरीक्षक नारायन सिंह को अपना कथन दिया जिसके आधार पर ऊपर उल्लिखित व्यक्तियों के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 148, 149, 323 और 307 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए मामला दर्ज किया गया । एस्कार्ट अस्पताल, फरीदाबाद में गोपाल की क्षतियों के कारण मृत्यु हो जाने पर दंड संहिता की धारा 307 के अधीन अपराध को धारा 302 के अधीन हत्या के अपराध में परिवर्तित कर दिया गया । पुलिस द्वारा अन्वेषण किए जाने के परिणामस्वरूप अभियुक्त हरचन्द, दिगम्बर, और जगदीश को तारीख 3 जुलाई, 1998 को गिरफ्तार किया गया । अन्वेषण के दौरान अभियुक्तों से बहुत सी वस्तुएं बरामद की गईं जिनके आधार पर कुल मिलाकर 10 अभियुक्तों के विरुद्ध आरोप पत्र फाइल किया गया और जयराम के पुत्र भगत सिंह को निर्दोष होने के कारण इस अपराध से अपवर्जित कर दिया गया किंतु प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में उसे नामित किया गया था और अभियुक्त जयपाल को किशोर होने के कारण किशोर न्यायालय, फरीदाबाद भेज दिया गया । परिणाम यह हुआ कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में नामित किए गए अभियुक्तों में से केवल 9 अभियुक्तों को दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 148, 323, 325 और 302 के अधीन अपराध का विचारण किए जाने के लिए अपर सेशन न्यायाधीश, फरीदाबाद के सुपुर्द कर दिया गया । विचारण के दौरान, जयराम के पुत्र भगत सिंह को दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 319 के अधीन अभियुक्त बनाया गया और इस प्रकार विचारण किए जाने वाले अभियुक्तों की संख्या कुल मिलाकर 10 हो गई ।

3. अभियोजन पक्ष ने अपने पक्षकथन के समर्थन में कुल मिलाकर 10 साक्षियों की परीक्षा की है । इन साक्षियों में प्रथम इत्तिलाकर्ता वेदपाल (अभि. सा. 1), प्रकाश (अभि. सा. 2), किशन सिंह (अभि. सा. 3), सतबीर सिंह (अभि. सा. 4), डा. एच. के. मिश्रा (अभि. सा. 5), वी. आर.

गुप्ता (अभि. सा. 6) और एस. पी. जयन्त (अभि. सा. 10) हैं । शेष साक्षी पुलिस कार्मिक हैं जिनमें एक अन्वेषण अधिकारी भी है । अभियुक्तों ने अपनी प्रतिरक्षा में कोई भी साक्षी प्रस्तुत नहीं किया है । दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 313 के अधीन अभिलिखित अभियुक्तों के कथन में उन्होंने यह अभिवाक् किया है कि उन्हें मिथ्या फंसाया गया है । यह भी अभिकथन किया गया है कि जयपाल और हरचन्द घटना के समय घटनास्थल पर अकेले मौजूद थे और शेष 9 अभियुक्तों को मिथ्या फंसाया गया है । अपीलार्थियों का यह भी पक्षकथन है कि घटना वाले दिन उस समय जयपाल अपने खेतों में पानी लगा रहा था जब मृतक गोपाल ने उसके साथ जारकर्म करने का प्रयास किया था । हरचन्द ने मृतक के इस प्रयास को देखा और आपत्ति की जिस पर मृतक गोपाल ने हरचन्द पर लाठी से वार किया । हरचन्द ने प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग करते हुए और जयपाल को बचाने की दृष्टि से मृतक गोपाल पर लाठी से वार किया और जयपाल ने इस घटना में वेदपाल को क्षतियां पहुंचाईं ।

4. विचारण न्यायालय ने अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य का मूल्यांकन किया और यह निष्कर्ष निकाला कि वेदपाल (अभि. सा. 1) और प्रकाश (अभि. सा. 2) के अभिसाक्ष्य पूर्णतया विश्वसनीय हैं । विचारण न्यायालय ने अभियुक्तों की ओर से दी गई ये दलीलें खारिज कर दीं कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने में जो विलंब हुआ था उसे समाधानप्रद रूप से स्पष्ट नहीं किया गया है और यह कि अभियोजन पक्ष यह स्पष्ट करने में असफल रहा है कि अभियुक्तों को कैसे क्षतियां पहुंचीं । विचारण न्यायालय ने इस दलील को भी खारिज कर दिया कि अपराध कारित करने का कोई हेतु नहीं था या इस मामले में प्रस्तुत किए गए चिकित्सीय और प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य के बीच कोई विरोधाभास था । विचारण न्यायालय ने इस तर्कणा के आधार पर दसों अभियुक्तों को दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषी ठहराते हुए आजीवन कारावास भोगने और प्रत्येक को 5,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने के लिए दंडादिष्ट किया । जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम किए जाने पर प्रत्येक को अतिरिक्त एक वर्ष का कठोर कारावास भोगने के लिए दंडादिष्ट किया । दंड संहिता की धारा 325 के अधीन सभी अभियुक्तों को एक वर्ष का कठोर कारावास भोगने तथा प्रत्येक को 1,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने जिसका व्यतिक्रम किए जाने पर अतिरिक्त तीन मास का कारावास भोगने के लिए दंडादिष्ट किया । दंड संहिता की धारा 323 और धारा 148 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए प्रत्येक अभियुक्त को 1,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने के लिए

दंडादिष्ट किया । तथापि, इस जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम किए जाने पर कोई दंडादेश नहीं दिया गया ।

5. अपीलार्थियों ने अधिनिर्णीत दोषसिद्धि और दंडादेश से व्यथित होकर, पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ के समक्ष 2000 की दांडिक अपील सं. 631 फाइल की जिसका निपटारा 2001 के दांडिक पुनरीक्षण आवेदन सं. 345, जो प्रथम इत्तिलाकर्ता वेदपाल की ओर से फाइल किया गया था, के साथ एक ही निर्णय और आदेश द्वारा किया गया था और यह निर्णय और आदेश इन अपीलों में आक्षेपित है । उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए गए साक्ष्य का मूल्यांकन करने पर यह निष्कर्ष निकाला कि दिगम्बर, राजबीर, लाला, भोला, जगदीश और राजकपूर द्वारा फाइल की गई अपील मंजूर की जानी चाहिए और हरचन्द, रमन लाल, नरेश और भगत सिंह की ओर से फाइल की गई अपील खारिज की जानी चाहिए । मामले की इसी संक्षिप्त पृष्ठभूमि में हरचन्द, रमन लाल, नरेश और भगत सिंह ने विशेष इजाजत द्वारा उन्हें अधिनिर्णीत दोषसिद्धि और दंडादेश को चुनौती देते हुए हमारे समक्ष ये अपीलें फाइल की हैं ।

6. अपीलार्थियों की ओर से यह दलील दी गई है कि निचले न्यायालयों ने वेदपाल (अभि. सा. 1) और प्रकाश (अभि. सा. 2) के अभिसाक्ष्यों का विवक्षित अवलंब लेते हुए अपीलार्थियों को दोषसिद्ध करने में त्रुटि की है और इस प्रक्रिया में उन्होंने घटना की उत्पत्ति के संबंध में प्रतिरक्षा वृत्तांत को अनदेखा भी किया है । यह दलील दी गई है कि यह घटना जयपाल के साथ मृतक द्वारा जारकर्म का प्रयास किए जाने के परिणामस्वरूप घटित हुई थी जिस पर अपीलार्थी हरचन्द ने आपत्ति की थी और इसी विरोध के परिणामस्वरूप दोनों पक्षों ने एक-दूसरे पर लाठी से वार किए । यह दलील ध्यान देने योग्य ही नहीं है । हम यह इसलिए कह रहे हैं कि साक्ष्य में ऐसी कोई सामग्री नहीं है जिसके आधार पर प्रतिरक्षा वृत्तांत से यह संभव हो सके कि प्रश्नगत घटना जयपाल के साथ गोपाल द्वारा जारकर्म का प्रयास किए जाने के परिणामस्वरूप घटित हुई थी । किसी भी साक्षी ने जारकर्म के प्रयास के संबंध में कोई साक्ष्य नहीं दिया है । इतना ही नहीं, प्रतिरक्षा पक्ष ने जयपाल जो अभिकथित रूप से इस अपराध का आहत है, की परीक्षा कराना भी आवश्यक नहीं समझा, ताकि यह साबित हो जाता कि मृतक गोपाल द्वारा ऐसा कोई प्रयास किया गया था या नहीं । अतः हमें इस दलील को खारिज करने में कोई संकोच नहीं है कि प्रतिरक्षा

वृत्तांत एक ऐसा संभावी वृत्तांत है जिसे महत्व नहीं दिया जा सकता । हमारी राय में, निचले न्यायालयों ने प्रतिरक्षा वृत्तांत को ठीक ही खारिज किया है क्योंकि साक्ष्य की दृष्टि से उसमें कोई भी तथ्यात्मक आधार नहीं है ।

7. अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल द्वारा यह भी दलील दी गई है कि 10 में से 6 अभियुक्तों की दोषमुक्ति से यह आरोप निष्फल हो जाना चाहिए कि अपीलार्थियों ने विधिविरुद्ध जमाव गठित किया था और अपरिहार्य परिणाम के अनुसार दंड संहिता की धारा 149 के अधीन हत्या के लिए अपीलार्थियों की दोषसिद्धि कायम रखे जाने योग्य नहीं है । यह दलील दी गई है कि अन्य अभियुक्तों की दोषमुक्ति, जिन्हें अभिकथित रूप से विधिविरुद्ध जमाव का सदस्य कहा गया है, यह अर्थ निकलता है कि उक्त अभियुक्तों को इस मामले में मिथ्या फंसाया गया है या यदि वे घटनास्थल पर मौजूद थे तब भी उन्होंने दोषसिद्ध किए गए अभियुक्तों के सामान्य उद्देश्य को गठित करने में भाग नहीं लिया था ।

8. दंड संहिता की धारा 141 के अधीन विधिविरुद्ध जमाव निम्न प्रकार परिभाषित किया गया है :–

> "141. **विधिविरुद्ध जमाव** – पांच या अधिक व्यक्तियों का जमाव 'विधिविरुद्ध जमाव' कहा जाता है, यदि उन व्यक्तियों का, जिनसे यह जमाव गठित हुआ है, सामान्य उद्देश्य हो –
>
> **पहला** – केन्द्रीय सरकार को, या किसी राज्य सरकार को, या संसद को या, किसी राज्य के विधान-मंडल को, या किसी लोक सेवक को, जब कि वह ऐसे लोक सेवक की विधिपूर्ण शक्ति का प्रयोग कर रहा हो, आपराधिक बल द्वारा, या आपराधिक बल के प्रदर्शन द्वारा, आतंकित करना, अथवा
>
> **दूसरा** – किसी विधि के, या किसी वैध आदेशिका के, निष्पादन का प्रतिरोध करना, अथवा
>
> **तीसरा** – किसी रिष्टि या आपराधिक अतिचार या अन्य अपराध का करना, अथवा
>
> **चौथा** – किसी व्यक्ति पर आपराधिक बल द्वारा या आपराधिक बल के प्रदर्शन द्वारा, किसी सम्पत्ति का कब्जा लेना या अभिप्राप्त करना या किसी व्यक्ति को किसी मार्ग के अधिकार के उपभोग से, या जल का उपभोग करने के अधिकार

या अन्य अमूर्त अधिकार से जिसका वह कब्जा रखता हो, या उपभोग करता हो, वंचित करना या किसी अधिकार या अनुमित अधिकार को प्रवर्तित करना, अथवा

पांचवा – आपराधिक बल द्वारा या आपराधिक बल के प्रदर्शन द्वारा, किसी व्यक्ति को वह करने के लिए, जिसे करने के लिए वह वैध रूप से आबद्ध न हो या उसका लोप करने के लिए जिसे करने का वह वैध रूप से हकदार हो, विवश करना ।

स्पष्टीकरण – कोई जमाव, जो इकट्ठा होते समय विधिविरुद्ध नहीं था, बाद को विधिविरुद्ध जमाव हो सकेगा ।"

9. दंड संहिता की धारा 149 के निबंधनों में विधिविरुद्ध जमाव का प्रत्येक सदस्य उस अपराध का दोषी होता है जो सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करने के लिए जमाव के अन्य किसी सदस्य द्वारा कारित किया गया है । दंड संहिता की धारा 149 इस प्रकार है :–

"**149. विधिविरुद्ध जमाव का हर सदस्य, सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करने के लिए अपराध का दोषी** – यदि विधिविरुद्ध जमाव के किसी सदस्य द्वारा उस जमाव के सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करने में अपराध किया जाता है, या कोई ऐसा अपराध किया जाता है, जिसका किया जाना उस जमाव के सदस्य उस उद्देश्य को अग्रसर करने में संभाव्य जानते थे, तो हर व्यक्ति, जो उस अपराध के किए जाने के समय उस जमाव का सदस्य है, उस अपराध का दोषी होगा ।"

10. अब प्रश्न यह है कि क्या कुछ अभियुक्तों के दोषमुक्त हो जाने पर दोषसिद्ध किए गए अभियुक्तों की संख्या घट कर पांच से कम हो जाने की स्थिति में यह मामला दंड संहिता की उपरोक्त धारा 149 की परिधि से बाहर हो जाएगा । इस न्यायालय की संविधान न्यायपीठ ने **मोहन सिंह** बनाम **पंजाब राज्य**[1] वाले मामले में इस प्रश्न पर विचार किया है और प्राधिकृत रूप से उसका उत्तर दिया है । उस मामले में अभियोजन पक्षकथन यह किया गया था कि घटना के दिन पांच अभियुक्तों ने विधिविरुद्ध जमाव गठित किया और उक्त जमाव के सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करने में उन्होंने घातक हथियारों से लैस होकर बलवा कारित किया । अभियोजन पक्ष का यह अभिकथन था कि जमाव के सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करने में गुरदीप सिंह की हत्या की गई और हरनाम सिंह को

[1] ए. आई. आर. 1963 एस. सी. 174.

क्षतियां पहुंचाई गईं । अभियोजन पक्ष ने यह अभिकथन किया कि केवल एक अभियुक्त ने ही गुरदीप सिंह के सिर में घातक क्षति पहुंचाई थी, चूंकि यह कृत्य विधिविरुद्ध जमाव के सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करने में किया गया था, इसलिए जो व्यक्ति विधिविरुद्ध जमाव के सदस्य थे वे भी दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दोषी पाए गए । प्रतिरक्षा पक्ष की ओर से यह दलील दी गई कि दंड संहिता की धारा 149 के अधीन आन्वयिक आपराधिक दायित्व नहीं बनता है क्योंकि अभियुक्तों में से दो ऐसे अभियुक्त हैं जिन्हें अभिकथित रूप से विधिविरुद्ध जमाव का सदस्य बताया गया है और उन्हें दोषमुक्त किया गया और इस कारण विधिविरुद्ध जमाव के सदस्यों में केवल तीन सदस्य शेष रहे । इस न्यायालय ने तीन संभावी स्थितियों से संबंधित दलील और इन स्थितियों को लागू होने वाले विधिक पहलू पर विचार करते हुए निम्नलिखित मत व्यक्त किया :–

> "8. दंड संहिता की धारा 149 द्वारा विनिर्दिष्ट अपराध के आवश्यक संघटकों से संबंधित वास्तविक विधिक स्थिति पर कोई संदेह नहीं है । धारा 149 के अधीन अनेक या आन्वयिक आपराधिक दायित्व ऐसे विधिविरुद्ध जमाव के सभी सदस्यों के लिए विहित किए गए हैं जिसके किसी भी सदस्य द्वारा उस जमाव के सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करने में अपराध कारित किया गया है या ऐसे जमाव द्वारा अपराध कारित किया गया हो जो यह जानता था कि जमाव के सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करने में किसी अपराध का कारित किया जाना संभावित है । इस प्रकार यह विचार किया गया कि धारा 149 के आवश्यक संघटक इस प्रकार हैं कि अपराध विधिविरुद्ध जमाव के किसी सदस्य द्वारा कारित किया गया हो, और धारा 141 के अधीन यह स्पष्ट किया गया है कि यह धारा वहां लागू होगी जहां पांच या अधिक व्यक्तियों द्वारा विधिविरुद्ध जमाव गठित किया जाता है । परंतु यह तब जबकि सामान्य उद्देश्य से संबंधित उक्त धारा की अन्य अपेक्षाओं का समाधान हो जाए । दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है, विधिविरुद्ध जमाव के अंतर्गत यह एक आवश्यक शर्त है कि इस जमाव के सदस्यों की संख्या पांच या पांच से अधिक होनी चाहिए । **अतः, यह दलील दी गई है कि जैसे ही प्यारा सिंह नाम के दो अभियुक्तों को दोषमुक्त किया गया वैसे ही विधिविरुद्ध जमाव के सदस्यों की संख्या पांच से घटकर तीन हो जाती है और धारा 141 लागू नहीं होगी जिससे केवल यही निष्कर्ष निकलता है कि धारा**

149 अपीलार्थियों के विरुद्ध लागू नहीं की जा सकती । हमारी राय में, इस मामले के तथ्यों के आधार पर, यह दलील स्वीकार किए जाने योग्य है । हमने पहले ही इस पर विचार किया है कि अपीलार्थियों द्वारा दी गई दलील पर इस उपधारणा के साथ विचार किया जाना चाहिए कि आरोप पत्र में केवल पांच व्यक्तियों को नामित किया गया है जिन्होंने विधिविरुद्ध जमाव गठित किया था और विचारण के दौरान प्रस्तुत किया गया साक्ष्य केवल इन्हीं पांच व्यक्तियों से संबंधित है । यदि ऐसा है तो भी **जैसे ही पांच में से दो व्यक्तियों को दोषमुक्त किया जाता है वैसे ही विधिविरुद्ध जमाव केवल तीन व्यक्तियों द्वारा गठित माना जाएगा और स्पष्ट रूप से इस जमाव को विधिविरुद्ध जमाव नहीं कहा जा सकता ।**

9. दंड संहिता की धारा 149 के लागू किए जाने के प्रश्न पर ऐसे मामलों में विचार करने के लिए ऐसे बहुत से मामलों को ध्यान में रखना चाहिए जो दांडिक न्यायालयों के समक्ष विनिश्चित किए जाने के लिए प्रस्तुत किए जाते हैं । यदि विरचित किए गए आरोप में पांच या अधिक व्यक्तियों के विधिविरुद्ध जमाव गठित करने के लिए नामित किया गया है और अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य से विरचित आरोप सभी अभियुक्तों के विरुद्ध साबित होता है तब दंड संहिता की धारा 149 के अधीन यह एक ऐसा स्पष्ट मामला होगा जिसमें उक्त धारा का अवलंब लिया जा सके । तथापि, यह आवश्यक नहीं है कि विधिविरुद्ध जमाव के किसी भी सदस्य के विरुद्ध धारा 149 के अधीन आरोप सफलतापूर्वक साबित किए जाने के पूर्व पांच या अधिक व्यक्तियों को दोषसिद्ध किया जाए । यह संभव है कि दंड संहिता की धारा 302/149 के अधीन पांच से कम व्यक्तियों को आरोपित किया जाए और दोषसिद्ध किया जाए, यदि यह आरोप है कि न्यायालय में प्रस्तुत होने वाले व्यक्तियों ने अन्य नामित व्यक्तियों के साथ मिलकर विधिविरुद्ध जमाव गठित किया था तब यह संभव है कि नामित किए गए अन्य व्यक्ति अपने साथियों के साथ विचारण किए जाने के लिए उपलब्ध नहीं हो सके जिसका यह कारण हो सकता है कि वह फरार हो गए हों । ऐसे मामले में, न्यायालय के समक्ष पांच से कम व्यक्तियों के प्रस्तुत किए जाने के आधार पर यह नहीं हो सकता है कि धारा 149 लागू नहीं की जा सकती जिसका यही कारण है कि आरोप और साक्ष्य दोनों से ही यह साबित होता है कि न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत व्यक्तियों और उनसे संबंधित अन्य

व्यक्तियों की कुल संख्या पांच से अधिक है और इस प्रकार उन सभी ने मिलकर विधिविरुद्ध जमाव गठित किया है । अतः, दंड संहिता की धारा 149 के अधीन आरोप साबित करने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि न्यायालय के समक्ष पांच या पांच से अधिक व्यक्ति प्रस्तुत किए जाएं और उन्हें दोषसिद्ध किया जाए । इसी प्रकार, पांच से कम व्यक्तियों को भी दंड संहिता की धारा 149 के अधीन आरोपित किया जा सकता है यदि अभियोजन का यह पक्षकथन है कि न्यायालय में प्रस्तुत व्यक्तियों और उनसे संबंधित सभी व्यक्तियों जिनकी शनाख्त नहीं की जा सकी है और नामित भी नहीं किया गया है, को मिलाकर कुल संख्या पांच से अधिक हो जाती है तब इस प्रकार गठित जमाव को विधिविरुद्ध जमाव कहा जाएगा । ऐसे मामले में, यदि साक्ष्य से यह दर्शित होता है कि न्यायालय में प्रस्तुत होने वाले व्यक्तियों के साथ कुछ ऐसे व्यक्ति भी थे जिनकी शनाख्त नहीं की जा सकी है और उन्हें नामित भी नहीं किया गया है और इन सभी ने मिलकर जमाव गठित किया था तब यह जमाव विधिविरुद्ध जमाव कहलाएगा और उन्हें दंड संहिता की धारा 149 के अधीन दोषसिद्ध किया जा सकता है यद्यपि नामित न किए गए व्यक्तियों और शनाख्त न किए गए व्यक्तियों का पता नहीं लगाया गया है और न ही उन्हें आरोपित किया गया है । ऐसे भी मामले सामने आए हैं जिनमें विरचित किए गए आरोप में अभियोजन पक्ष ने पांच या पांच से अधिक व्यक्तियों को आरोपित किया है और यह अभिकथन किया है कि उन्होंने विधिविरुद्ध जमाव गठित किया है । ऐसे मामलों में, यदि आरोप और साक्ष्य दोनों ही उन व्यक्तियों तक सीमित हैं जिन्हें विरचित आरोप में नामित किया गया है और नामित किए गए उन व्यक्तियों में से दो या दो से अधिक व्यक्ति दोषमुक्त कर दिए जाते हैं जिसके परिणामस्वरूप न्यायालय के समक्ष विचारण के लिए पांच से कम व्यक्ति शेष रहते हैं, तब ऐसी स्थिति में दंड संहिता की धारा 149 लागू नहीं हो सकती । ऐसे मामलों में, यह संभव है कि यद्यपि विरचित आरोप में पांच या अधिक व्यक्तियों को नामित किया गया है जिन्होंने विधिविरुद्ध जमाव गठित किया है, फिर भी साक्ष्य से यह दर्शित होता है कि विधिविरुद्ध जमाव में कुछ अन्य व्यक्ति भी थे जिनकी शनाख्त नहीं हो सकी और उन्हें नामित नहीं किया जा सका । ऐसे मामलों में, विचारण न्यायालय या अपील में उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंच सकता है कि भले ही विरचित किए गए आरोप में नामित और विचारण किए गए कुछ

व्यक्तियों को दोषमुक्त किया गया है, फिर भी दंड संहिता की धारा 149 के अधीन आरोप विरस्थापित नहीं किया जा सकता क्योंकि दोषसिद्ध किए गए दो या तीन व्यक्तियों के साथ अन्य व्यक्ति भी थे जिन्होंने विधिविरुद्ध जमाव गठित करने में भाग लिया था किंतु उनकी शनाख्त नहीं की जा सकी थी और इसीलिए उन्हें नामित नहीं किया जा सका । ऐसे मामलों में विरचित किए गए आरोप में नामित एक या एक से अधिक व्यक्तियों की दोषमुक्ति दंड संहिता की धारा 149 के अधीन विरचित किए गए आरोप की वैधता को प्रभावित नहीं करती है क्योंकि साक्ष्य के आधार पर विचारण न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंच सकता है कि जिन व्यक्तियों ने विधिविरुद्ध जमाव गठित किया था वे संख्या में पांच या पांच से अधिक ही थे । यह सत्य है कि मामलों की अंतिम श्रेणी में न्यायालय को उक्त निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कड़ी सावधानी बरतनी चाहिए । किंतु ऐसा कोई विधिक वर्जन नहीं है जिसके अधीन न्यायालय को ऐसे निष्कर्ष पर पहुंचने से रोका जा सके । विरचित किए गए आरोप में विधिविरुद्ध जमाव के नामित न किए गए और शनाख्त न किए गए अन्य सदस्य को निर्दिष्ट न करने से यह प्रश्न उठता है कि क्या न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत होने वाले व्यक्तियों पर इस तथ्य के कारण कोई प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा कि विरचित किए गए आरोप से यह उपदर्शित नहीं होता है कि विधिविरुद्ध जमाव के कुछ सदस्य ऐसे भी थे जिन्हें नामित नहीं किया गया है । किंतु ऐसे प्रतिकूल प्रभाव के अतिरिक्त, जिस पर सावधानीपूर्वक विचार किया जाना चाहिए, निचले न्यायालयों को यह अभिनिर्धारित करने के लिए विधिक रूप से प्रतिबंधित नहीं किया जा सकता है कि यद्यपि विरचित किए गए आरोप में पांच या पांच से अधिक व्यक्तियों को विनिर्दिष्ट किया गया है, वास्तव में विधिविरुद्ध जमाव में अन्य कुछ ऐसे सदस्य भी होंगे जिन्हें नामित नहीं किया गया है और जिनकी शनाख्त नहीं की गई है । बहुत से ऐसे मामलों में यही उचित विधिक स्थिति दिखाई पड़ती है जिनका विचारण दंड संहिता की धारा 149 के अधीन आरोप विरचित किए जाने पर किया जाता है ।”

(बल देने के लिए मोटे अक्षरों में लिखा गया है)

11. **नागमलेश्वर राव (के.) और अन्य** बनाम **आन्ध्र प्रदेश राज्य**[1]

---

[1] (1991) 2 एस. सी. सी. 532.

वाले मामले में इस न्यायालय ने ऐसा ही मत व्यक्त किया जो निम्न प्रकार है :–

> "तथापि, विद्वान् न्यायाधीश ने इस पर ध्यान नहीं दिया है चूंकि अभियुक्त जिन्हें दोषसिद्ध किया गया है केवल 4 थे और अभियोजन पक्ष ने अन्य अभियुक्तों के अपराध में अंतर्वलित होने को साबित भी नहीं किया है और निचले न्यायालयों ने अन्य सभी अभियुक्तों को सभी अपराधों से दोषमुक्त किया है, इसलिए दंड संहिता की धारा 149 के आधार पर इस मामले में के 4 अपीलार्थियों को दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता । मामले के तथ्य और परिस्थितियों के आधार पर विद्वान् न्यायाधीशों ने यह मत उचित व्यक्त नहीं किया है कि अभियुक्त 1, अभियुक्त 2, अभियुक्त 5 और अभियुक्त 11 अन्य शनाख्त न किए गए व्यक्तियों के साथ गठित किए गए विधिविरुद्ध जमाव के सदस्य थे । आरोप इस प्रकार विरचित नहीं किया गया है कि अभियुक्त 1, अभियुक्त 2, अभियुक्त 5 और अभियुक्त 11 तथा अन्य व्यक्ति या शनाख्त न किए गए कुछ अन्य व्यक्तियों ने विधिविरुद्ध जमाव गठित किया है अपितु आरोप इस प्रकार विरचित किया गया है कि अभियुक्त 1 से अभियुक्त 15 ने विधिविरुद्ध जमाव गठित किया है । अभियोजन का यह पक्षकथन नहीं है कि उक्त 15 अभियुक्तों के अतिरिक्त कुछ अन्य व्यक्ति भी थे जिन्होंने अपराध में भाग लिया था । जब 11 अभियुक्तों को दोषमुक्त कर दिया गया तब इसका यह अर्थ हुआ कि उनका अपराध में भाग लेना साबित नहीं हो सका । यह उपधारित नहीं किया जा सकता और न ही इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है कि नामित किए गए या नामित न किए गए व्यक्तियों ने इस मामले में आरोपित किए गए व्यक्तियों के साथ मिलकर अपराध कारित किया था जब तक कि आरोप और साक्ष्य से विशिष्ट रूप से ऐसा स्पष्ट न हो जाए कि कुछ अन्य व्यक्ति भी थे जिन्होंने आरोपित किए गए अभियुक्तों के साथ मिलकर सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करने में अपराध में भाग लिया है ।"

12. वर्तमान मामले पर उपर्युक्त सिद्धांत को लागू करते हुए हमारा यह मत है कि दंड संहिता की धारा 149 के उपबंध ऐसे अपीलार्थियों को दोषसिद्ध करने के लिए अभियोजन पक्ष को उपलब्ध नहीं हैं जिनकी संख्या शेष अभियुक्तों के दोषमुक्त किए जाने के परिणामस्वरूप घट कर 4 हो गई है । वर्तमान मामले के तथ्य पहली और दूसरी उन परिस्थितियों के

अंतर्गत नहीं आते हैं जिन्हें **मोहन सिंह** (उपरोक्त) वाले मामले में निर्दिष्ट किया गया है । हमारी राय में यह ऐसा मामला है जो तीसरी परिस्थिति के अंतर्गत अधिक उचित रूप से आता है जिसमें अभियोजन पक्ष ने उन सभी अभियुक्तों को नामित किया है जिन्होंने विधिविरुद्ध जमाव गठित किया था किंतु नामित किए गए अभियुक्तों में से केवल 4 को तत्पश्चात् दोषसिद्ध किया गया, इसके परिणामस्वरूप अभियुक्तों की संख्या घट कर पांच से कम हो गई । ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है जिससे यह पता चलता हो कि आरोप पत्र में नामित किए गए अभियुक्तों के अतिरिक्त कोई भी व्यक्ति विधिविरुद्ध जमाव का सदस्य था किंतु ऐसे व्यक्तियों का उल्लेख किया गया है जो उपलब्ध नहीं हो सके या जिनकी शनाख्त नहीं की जा सकी । ऐसी स्थिति होने पर, दंड संहिता की धारा 149 के अधीन अपीलार्थियों की दोषसिद्धि विधिक रूप से कायम रखे जाने योग्य प्रतीत नहीं होती है ।

13. अपीलार्थियों की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा तीसरी दलील अभियुक्त हरचन्द से संबंधित है जिसने घातक क्षति पहुंचाने का अपराध कारित किया है । यह दलील दी गई है कि प्रश्नगत घटना अचानक लड़ाई में पूर्वचिन्तन किए बिना घटित हुई और यह घटना जयपाल द्वारा शिकायतकर्ता के फसल लगे हुए खेत में प्रवेश करने के परिणामस्वरूप घटित हुई । ऐसे व्यक्तियों द्वारा क्षतियां कारित हुईं जिन्होंने एक-दूसरे के साथ लड़ाई की । अपीलार्थी हरचन्द ने कोई भी असम्यक् लाभ नहीं लिया है और न ही उसने क्रूर या असामान्य रीति में कृत्य किया है । अतः यह मामला दंड संहिता की धारा 300 के अपवाद 4 के अंतर्गत आएगा । इस तथ्य से, कि हरचन्द ने मृतक गोपाल के सिर पर केवल एक क्षति पहुंचाई थी, यह दर्शित होता है कि मृतक गोपाल की हत्या करने का उसका कोई आशय नहीं था, अन्य क्षतियां शेष अभियुक्तों द्वारा कारित की गई हैं साधारण प्रकृति की हैं । अतः, विद्वान् काउंसेल के अनुसार, यह अपराध दंड संहिता की धारा 304 भाग II के अधीन दंडनीय हत्या की कोटि में न आने वाले मानव वध से अधिक गंभीर नहीं हो सकता ।

14. दंड संहिता की धारा 299 और 300 के निर्वचन से संबंधित प्रायः **विरसा सिंह** बनाम **पंजाब राज्य**[1] वाले मामले को निर्दिष्ट किया जाता है जिसमें न्यायाधीश विवियन बोस ने ऐसे संघटकों को स्पष्ट किया है जिनसे हत्या की कोटि में आने वाले मानव वध का समाधान हो जाए । दंड संहिता की धारा 300 के अधीन "तीसरा" खंड पर विचार करते हुए न्यायालय ने

[1] ए. आई. आर. 1958 एस. सी. 465.

उस खंड के महत्वपूर्ण संघटकों को निम्न प्रकार उल्लिखित किया है :–

"12. संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि अभियोजन पक्ष को किसी मामले को धारा 300 'तीसरा' के अंतर्गत लाने के पूर्व निम्न तथ्यों को साबित करना चाहिए –

प्रथमतः, अभियोजन पक्ष को यह पूर्णतया सिद्ध करना चाहिए कि शारीरिक क्षति कारित की गई है,

द्वितीयतः, क्षति की प्रकृति साबित की जानी चाहिए ; यह पूर्णतया महत्वपूर्ण अन्वेषण के अंतर्गत आता है,

तृतीयतः, अभियोजन पक्ष द्वारा यह सिद्ध किया जाना चाहिए कि ऐसी शारीरिक क्षति कारित करने का आशय किया गया था जो दुर्घटना के परिणामस्वरूप या बिना किसी आशय के या अन्य कोई क्षति कारित करने के आशय से कारित न की गई हो,

जब एक बार ये तीनों तत्व साबित हो जाए तब आगे जांच की जानी चाहिए और,

चतुर्थतः, यह साबित किया जाना चाहिए कि कारित की गई क्षति इन तीनों उपरोक्त तत्वों का परिणाम है और प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त है । इस प्रकार की गई जांच पूर्णतया उद्देश्यात्मक और निर्णायक होगी और इससे अपराधी के आशय का कोई लेना-देना नहीं होगा ।"

15. इसके पश्चात् न्यायालय ने उपरोक्त पैरा में निर्दिष्ट किए गए तीसरे संघटक के मूल तत्व को स्पष्ट करते हुए निम्न मत व्यक्त किया है :–

"प्रश्न यह नहीं है कि क्या बंदी ने गंभीर या साधारण क्षति पहुंचाने का आशय किया था अपितु प्रश्न यह है कि क्या उसने वह क्षति पहुंचाने का आशय किया था जो पाई गई है । यदि वह यह साबित कर सकता है कि उसने ऐसा आशय नहीं किया था या यदि सम्पूर्ण परिस्थितियों से ऐसा निष्कर्ष निकलता हो तब निःसंदेह वह आशय साबित नहीं हो सकता जिसकी अपेक्षा इस धारा के अंतर्गत की गई है । किंतु यदि उस क्षति से अधिक कुछ भी कारित नहीं किया गया हो और यह तथ्य कि अपीलार्थी ने यह क्षति कारित की है

> तब केवल यही निष्कर्ष निकलता है कि अपीलार्थी ने ही इस क्षति को कारित करने का आशय किया था । कहीं भी ऐसा उल्लेख नहीं है कि वह क्षति की गंभीरता को जानता था या उसने गंभीर परिणाम का आशय किया था । जहां तक आशय का संबंध है, प्रश्न यह नहीं है कि अपीलार्थी ने हत्या करने या कोई विशिष्ट कोटि की गंभीरता वाली क्षति पहुंचाने का आशय किया था अपितु विचार के लिए प्रश्न यह है कि क्या उसने प्रश्नगत क्षति पहुंचाने का आशय किया था और जब एक बार क्षति की विद्यमानता साबित हो जाती है तब वह क्षति कारित किए जाने का आशय उपधारित किया जा सकता है परंतु यह तब हो सकता है जब साक्ष्य या परिस्थितियों से कोई प्रतिकूल निष्कर्ष न निकलता हो ।"

16. उपरोक्त सिद्धांत को वर्तमान मामले पर लागू करते हुए हमें यह अभिनिर्धारित करने में कोई संकोच नहीं है कि क्षति की प्रकृति, शरीर का वह नाजुक अंग जहां क्षति कारित की गई है और अपीलार्थी हरचन्द द्वारा प्रयोग किए गए हथियार तथा चिकित्सीय साक्ष्य अर्थात् यह साक्ष्य कि क्षति प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त है, को दृष्टिगत करते हुए वर्तमान मामले से संबंधित अपराध हत्या की कोटि में आने वाला मानव वध कहलाएगा और यह दंड संहिता की धारा 300 के अपवाद 4 के अंतर्गत नहीं आएगा । तथापि, प्रश्न यह सामने आता है कि क्या अपवाद 4 वास्तव में लागू होगा और यदि यह लागू हो सकता है तब क्या कारित की गई क्षति मृत्यु कारित करने या ऐसी शारीरिक क्षति कारित करने के आशय से कारित की गई थी जिससे मृत्यु संभावित हो । मामले की जिन परिस्थितियों को हमने निर्णय के पूर्ववर्ती भाग में निर्दिष्ट किया है उन पर इस संबंध में कोई संदेह नहीं किया जा सकता कि यह घटना पूर्वचिन्तन के बिना और अचानक लड़ाई होने पर घटित की गई थी । मृतक को पहुंची क्षतियां आवेग की तीव्रता में कारित की गई थीं और अपीलार्थियों ने कोई भी असम्यक् लाभ नहीं लिया है और न ही उन्होंने क्रूरतापूर्ण या असामान्य रीति में कृत्य किया है । अतः ऐसी तथ्यात्मक स्थिति में अपवाद 4 लागू होगा विशेषकर तब जबकि अपवाद 4 के स्पष्टीकरण के निबंधनों में ऐसे मामलों में यह महत्वपूर्ण नहीं रह जाता है कि किस पक्षकार ने प्रकोपन करित किया या पहला हमला किया । ऐसी स्थिति होने पर क्षति कारित करने वाले अपराधी द्वारा किया गया अपराध हत्या नहीं अपितु दंड संहिता की धारा 304 के अधीन दंडनीय हत्या की

कोटि में न आने वाला मानव वध कहलाएगा ।

17. अब इस प्रश्न पर विचार करेंगे कि क्या अपीलार्थी हरचन्द द्वारा किया गया कृत्य साशय हत्या कारित करने या ऐसी क्षति कारित करने का था जिससे मृत्यु होना संभावित हो, हमारी यह राय है कि यदि मृत्यु कारित करने का आशय न किया गया हो तब भी ऐसी क्षति कारित करने के आशय से कृत्य किया गया है जिससे मृत्यु होना संभावित हो और यह कृत्य दंड संहिता की धारा 304 भाग I के अर्थांतर्गत आता है ।

18. परिणामतः, हम इन अपीलों को निम्न सीमा तक भागतः मंजूर करते हैं :–

"1. दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन की गई अपीलार्थियों की दोषसिद्धि और उन्हें अधिनिर्णीत आजीवन कारावास का दंडादेश अपास्त किया जाता है ।

2. इसके बजाय अपीलार्थी हरचन्द को दंड संहिता की धारा 304 भाग I के अधीन दोषसिद्ध किया जाता है और 8 वर्ष का कठोर कारावास भोगने और 5,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने जिसका व्यतिक्रम किए जाने पर अतिरिक्त 6 मास का कारावास भोगने के लिए दंडादिष्ट किया जाता है । दंड संहिता की धारा 325 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए इस अपीलार्थी की दोषसिद्धि और दंडादेश पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा और जुर्माने तथा जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम किए जाने के संबंध में दिए गए दंडादेश में भी कोई परिवर्तन नहीं किया जाएगा ।

3. दंड संहिता की धारा 325 और 323 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए अपीलार्थी रमन लाल, नरेश और भगत सिंह की दोषसिद्धि और उन्हें अधिनिर्णीत दंडादेश की पुष्टि की जाती है । यदि अपीलार्थी अन्य किसी मामले में वांछित नहीं हैं तो उन्हें पहले से भोगे गए कारावास के आधार पर छोड़ा जाए ।"

अपील भागतः मंजूर की गई ।

अस./पा.

[2015] 4 उम. नि. प. 70

शबनम

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

तथा

सलीम

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

15 मई, 2015

मुख्य न्यायमूर्ति एच. एल. दत्तू, न्यायमूर्ति एस. ए. बोबडे और न्यायमूर्ति अरुण मिश्रा

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302/34 – सामान्य आशय सहित हत्या – अपीलार्थी-अभियुक्तों (प्रेमी-प्रेमिका) के प्रेम संबंधों का प्रेमिका के परिवार द्वारा विरोध करने के कारण अभियुक्तों द्वारा प्रेमिका के परिवार के सात सदस्यों की नींद में सोते हुए गला काटकर नृशंसतापूर्वक हत्या – मृत्यु दंडोदश – अपराध की गुरुतरकारी परिस्थितियों से अपराध की योजनाबद्ध, सोची-समझी, नृशंस, निर्दयी प्रकृति उपदर्शित होने पर अभियुक्तों के सुधरने और भविष्य में अपराध न करने की कम संभावना को देखते हुए निचले न्यायालयों द्वारा दिए गए मृत्यु दंडादेश की पुष्टि करना उचित होगा ।

अभियुक्त व्यक्ति प्रेम संबंध और अयुक्त शारीरिक संबंध में अंतर्ग्रस्त थे । अपीलार्थी-अभियुक्त शबनम शिक्षामित्र के रूप में कार्यरत थी जबकि अपीलार्थी-अभियुक्त सलीम उसी गांव में रहने वाला एक बेरोजगार युवक है । शबनम का परिवार उनके प्रेम संबंधों के विरुद्ध थे । तारीख 14/15 अप्रैल, 2008 की मध्यवर्ती रात्रि में मास्टर शौकत अली (शबनम का मृतक पिता) के निवास पर परिवार के आठ व्यक्ति, उसके स्वयं के अतिरिक्त उसकी पत्नी श्रीमती हाश्मी (मृतक माता), उनकी पुत्री शबनम (अपीलार्थी-अभियुक्त), उनका कनिष्ठ पुत्र राशीद (मृतक कनिष्ठ भाई), उनकी अप्राप्तवय भतीजी राबिया (मृतक भतीजी), उनका ज्येष्ठ पुत्र अनीश अहमद और उसकी पत्नी अंजुम (मृतक पति-पत्नी) और उनका 10 माह का पुत्र

अरश मौजूद थे । दुर्भाग्यपूर्ण रात्रि में लगभग 2.15 बजे अपीलार्थी-अभियुक्त शबनम की चिल्लाने की आवाज सुनकर उनका पड़ोसी लतीफ उल्लाह खान अन्य पड़ोसियों के साथ मकान पर आया । अभि. सा. 1 ने मकान में प्रवेश किया और उसने शबनम को उसके मृतक पिता, जिसकी गर्दन कटी हुई थी, के शव के पास बेहोश पड़े पाया और उसके कनिष्ठ भाई का गला कटा हुआ शव भी पाया । इसके अतिरिक्त, अभि. सा. 1 ने एक अन्य कमरे में मृतक पत्नी, मृतक पति-पत्नी और मृतक चचेरे भाई को रक्त से लथपथ पाया और उन सभी की गर्दन कटी हुई थी । दस माह के शिशु अरश का शव भी उसके माता-पिता के शवों के बीच पाया गया । उसके तुरंत पश्चात् अभि. सा. 1 ने पड़ोसियों को इकट्ठा करने के लिए शोर मचाया और अन्वेषक प्राधिकारियों को घटना की सूचना दी । तद्नुसार, अभि. सा. 1 से प्राप्त सूचना के आधार पर पुलिस थाना, हसनपुर में आपराधिक मामला अभिलिखित किया गया और परिवार के सात सदस्यों की हत्या करने के लिए अज्ञात व्यक्तियों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई । अन्वेषण करने पर दोनों अपीलार्थी-अभियुक्तों अर्थात् सलीम और शबनम को गिरफ्तार किया गया । सलीम के बताने पर हत्या में प्रयुक्त आयुध - कुल्हाड़ी और एक रक्त से सनी कमीज की बरामदगी की गई । इसके अतिरिक्त, सलीम के कब्जे से एक नोकिया मोबाइल फोन, 10 बायोपोज गोलियों का एक खाली पत्ता, रक्त से सने वस्त्र, सलीम के मोबाइल की सिम आदि बरामद किए गए । इसके अतिरिक्त, अपीलार्थी-अभियुक्तों के बीच हुई बातचीत का कॉल-रिकार्ड और ब्यौरा भी अभिप्राप्त किया गया । अन्वेषण पूर्ण होने पर आरोप पत्र तैयार किया गया और अपीलार्थी-अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन आरोपित किया गया तथा शबनम को अलग से भी भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन आरोपित किया गया । अपीलार्थी-अभियुक्तों ने अपनी प्रतिरक्षा में अपने विरुद्ध आरोपों से इनकार किया और मिथ्या रूप से फंसाए जाने का अभिवाक् किया । उन्होंने अपनी प्रतिरक्षा में वास्तव में एक-दूसरे को फंसाना चाहा । अपीलार्थी-अभियुक्त शबनम ने धारा 313 के अधीन किए गए अपने कथन में यह कहा कि सलीम एक चाकू लेकर छत के रास्ते उसके मकान में घुसा और जब वह अकेली छत पर सो रही थी तब उसने उसके परिवार के सभी सदस्यों की हत्या कर दी । इसके विपरीत, सलीम ने यह कथन किया कि वह शबनम के अनुरोध पर ही उसके मकान पर आया था और उसने वहां उससे अपराध कारित करने की संस्वीकृति की थी । विचारण न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्टों और साक्षियों के कथनों सहित अभिलेख पर के

साक्ष्य से घटनाओं की शृंखला की एक सतत और संगत कड़ी सिद्ध होती है और पूरी तरह से अभियोजन के वृत्तांत का समर्थन होता है । विचारण न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि अपीलार्थी-अभियुक्तों ने अपने अयुक्त संबंधों के विरोध से विक्षुब्ध होकर घृणास्पद हत्या की योजना बनाई, जिसे निष्पादित करने के लिए उसने पहले तो परिवार को शबनम के हाथों चाय में नींद की गोलियां खिलाकर बेहोश किया और उनके अचेत होने पर फिर कुल्हाड़ी से उनके गलों के टुकड़े-टुकड़े कर दिए । इसलिए विचारण न्यायालय ने निष्कर्ष निकाला कि घटनाओं की शृंखला की कड़ी सिद्ध होने और उसकी संपुष्टि होने पर सात व्यक्तियों की नृशंस हत्या करने के लिए अपीलार्थी-अभियुक्तों की दोषिता की असंदिग्ध रूप से पुष्टि होती है और तद्द्वारा उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया और दोनों अपीलार्थियों को मृत्यु दंडादेश दिया । अपीलार्थी-अभियुक्तों ने पूर्वोक्त निर्णय और आदेश से व्यथित होकर उच्च न्यायालय के समक्ष समावेदन किया । उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय द्वारा की गई मताभिव्यक्तियों और पक्षकारों की ओर से उपसंजात होने वाले विद्वान् काउंसेलों द्वारा दी गई दलीलों को ध्यान में रखते हुए अभिलेख पर के साक्ष्य की एक-एक करके परीक्षा की और विचारण न्यायालय द्वारा पारित किए गए दोषसिद्धि के निर्णय की पुष्टि की । अभियुक्त-अपीलार्थियों ने व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में अपीलें फाइल कीं । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपीलें खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – पारिवारिक संबंध हमारे समाज की विशेषताओं को वर्णित और उजागर करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं । आज भारतीय विधिक व्यवस्था पुत्र और पुत्री के बीच विभेद नहीं करती है – उनके एक समान अधिकार और कर्तव्य हैं । भारतीय सभ्यता सदियों से इस बात की साक्षी रही है कि पुत्रियां पुत्रों के अपेक्षाकृत अपने माता-पिता की देखभाल करने का भार अधिक कर्तव्यपरायणता से उठाती हैं । न्यायालय का अनुभव यह कहता है कि एक प्राप्तवय पुत्री के अपने माता-पिता के साथ उसके संबंध अधिक प्रगाढ़ होते हैं और जब ये संबंध कटु हो जाएं तो प्राप्तवय पुत्रों की बजाय प्राप्तवय पुत्रियों पर इसका अधिक बुरा प्रभाव पड़ता है । शिक्षा के विकास से प्रेरित आधुनिक युग अब इस स्थिर धारणा को मान्यता नहीं देता है कि माता-पिता की एक पुत्र के लिए चाह होती है जिससे कि कोई उनके बुढ़ापे में उनकी देखरेख करने वाला और सहारा बने । अब, शिक्षित और सभ्य समाज में परिवार में पुत्री, विशेष रूप से अपने माता-पिता के प्रति, एक बहुआयामी और अपरिहार्य भूमिका निभाती है । वह देखरेख करने और सहारा देने वाली, ममतामयी और उत्तरदायित्वपूर्ण, हमारे

समाज के उच्च मूल्यों की प्रतिमूर्ति है और जिस पर माता-पिता आंख मूंदकर विश्वास करते हैं । ऐसे सभी अपराध जो व्यक्तियों की आत्मा को ठेस पहुंचाते हैं, उनमें से कभी कोई पितृ-हत्या से अधिक घृणास्पद नहीं ठहराया गया, जो निश्चित रूप से केवल मानव प्रकृति का ही नहीं अपितु क्रूर प्रवृत्ति का सर्वाधिक और भयानक व्युतक्रम है । ऐसा कोई कार्य वहां पर्याप्ततः भयावह होगा जहां अपराधी और अपराध के शिकार व्यक्ति अशिक्षित और पिछड़े हों, किंतु यह मामला शिक्षित परिवार की वंशावली, नैतिक लालन-पालन और उत्तम सम्मानजनक रहन-सहन, जहां पिता और पुत्री दोनों अध्यापक हैं, का एक भयानक उदाहरण है । यहां यह मामला ऐसा है जहां पुत्री, अभियुक्त-अपीलार्थी शबनम, जिसका उसके परिवार द्वारा पालन-पोषण एक शिक्षित और स्वछंद वातावरण में किया गया और विद्यालय में एक शिक्षामित्र (अध्यापिका) के रूप में सम्मानीय रूप से नियोजित थी, उसने अपने ज़ार के प्यार और वासना के प्रभाव में एक निर्दोष बालक सहित सात जनों का सफाया करते हुए यह नृशंस पितृ-हत्या कारित की है । वह न केवल अपने परिवार के प्रति अपने स्नेह और अपने कर्तव्य को भूल गई, अपितु उसने अपने ही घर में इतने सारे मानव वध कर डाले ताकि उसकी सह-अभियुक्त सलीम के साथ रहने की इच्छा पूर्ण हो सके और उसके सिवाय कोई उत्तराधिकारी शेष न रहने पर संपत्ति को हड़प सके । अपीलार्थी सह-अभियुक्त सलीम ने उसके साथ मिलकर एक जटिल योजना रची और कुल्हाड़ी से छह मृतक व्यक्तियों की हत्या कर दी तथा अपराध-स्थल से भाग गया और हत्या के आयुध को छिपा दिया तथा घटना की मिथ्या कहानी का समर्थन किया । दोनों अपीलार्थी-अभियुक्तों ने हमारे उस समाज का दिल तार-तार कर दिया है, जहां परिवार को प्रेम और भरोसे की संस्था माना जाता है और उन्होंने उसका अनादर किया है तथा अपने प्रेम संबंध के लिए उसे दूषित किया है । अपीलार्थी-अभियुक्तों ने सात निर्दोष जीवनों का उस समय अंत कर दिया जब वे अपने ही घर की सुरक्षा में अपनी पुत्री और उसके ज़ार की हिंसक योजना से पूरी तरह अनजान और निस्सहाय तथा संदेहरहित होकर नींद में सोए पड़े थे । अपीलार्थी-अभियुक्तों ने मृतक परिवार द्वारा उनके संबंधों का विरोध करने से प्रेरित होकर और अपने अधर्मज बालक के गर्भ से अवगत होकर भ्रष्ट योजना रची और पहले अभियुक्त शबनम, जिस पर परिवार संदेह नहीं कर सकता था, द्वारा बनाई गई चाय में प्रशामक औषधि मिलाकर उनको दी गई और उसके पश्चात् उनके गले की महत्वपूर्ण रक्त वाहिनियां काटकर उनकी हत्या कर दी । अपीलार्थी-अभियुक्तों ने उस दस माह के शिशु को भी नहीं छोड़ा जो उनके ज़ार संबंधों का विरोध नहीं कर सकता था और

निर्दयतापूर्वक गला घोंटकर उसकी भी हत्या कर दी ताकि भविष्य में परिवार की संपत्ति में हिस्से का दावा करने वाला कोई जीवित न रह सके । परिवार के सदस्यों की मृत्यु होते ही अपीलार्थी-अभियुक्त सलीम हत्या के आयुध और अपराध के अन्य साक्ष्य का सफाया करने के लिए घटनास्थल से भाग गया, जबकि अपीलार्थी-अभियुक्त शबनम बेहोश होने का बहाना करके अपने पिता के क्षत-विक्षत शव के पास यह जताने के लिए लेट गई कि जब वह छत पर सोई थी तब किसी बाह्य व्यक्ति ने अपराध कारित किया । इन अपीलार्थी-अभियुक्त प्रेमियों ने पूरे विचारण के दौरान लगातार अपनी दोषिता से इनकार किया और अभियोजन पक्षकथन साबित होने पर अपराध कारित करने के लिए एक-दूसरे को फंसाने लगे ताकि अपने घृणित कृत्य के परिणामों से अपने आप को बचा सकें । गुरुतर परिस्थितियों से अपराध की अत्यंत जघन्य, सोची-समझी और नृशंस प्रकृति उपदर्शित होती है, जिनसे यह सुझाव मिलता है कि इन अभियुक्तों के सुधरने और भविष्य में अपराध करने से उनके प्रविरत रहने की कम संभावना है । इन सभी विशिष्ट बातों से अपीलार्थी-अभियुक्त पुत्री के अपने परिवार के प्रति निष्ठुर दृष्टिकोण की गंध आती है और स्वयं अपने माता-पिता, भाई, भाभी और दस माह के भतीजे की योजनाबद्ध तरीके से निर्दयतापूर्वक हत्या करने में उसकी दुराचारिता की ऊंचाई प्रतिबिम्बित होती है । इस बात ने समाज में तीव्र आक्रोश उत्पन्न किया है । यह सभी गुरुतरकारी परिस्थितियों अर्थात् अपराध के शिकार व्यक्तियों, हत्या कारित करने के हेतु, हत्या कारित करने की रीति, अपराध की मात्रा और अपीलार्थी-अभियुक्तों के पश्चाताप-विहीन दृष्टिकोण का मिश्रित निष्कर्ष है जो इस मामले में इस न्यायालय के समक्ष मौजूद है । अपराध कारित करने के समय अपीलार्थी-अभियुक्तों की युवा आयु संबंधी न्यूनकारी परिस्थितियां, उनके दुष्ट कार्य की गुरुतरकारी परिस्थितियां अधिक भारी होते हुए, कोई मायने नहीं रखती हैं । इसके अतिरिक्त, न्यायालय के समक्ष यह भी उल्लेख किया गया है कि अपीलार्थी-अभियुक्त शबनम अपराध कारित करने के समय गर्भवती थी और उनका एक अप्राप्तवय बालक है जो दोनों अभियुक्तों पर आश्रित है । उक्त ऐसी परिस्थितियां होने पर यह उल्लेख करना उपयुक्त है कि इस न्यायालय ने सतत रूप से यह अभिनिर्धारित किया है कि ऐसे अनुकंपा आधार अधिकांश मामलों में विद्यमान होते हैं और मृत्यु दंडादेश का लघूकरण करने की बात पर विचार करने के लिए सुसंगत नहीं है । जब अपराध भयावह हो और एक सोची-समझी रीति में कारित किया गया हो, तब अभियुक्त की आयु एक सुसंगत बात नहीं हो सकती है । तथापि, यह हैरान करने वाली बात है कि इस दंपत्ति द्वारा प्रेम में अंधे होकर अपने

यौवनकाल में इतनी सारी हत्याएं करने का अधम कृत्य किया गया और पछतावा तक नहीं हुआ । यदि विधि की सबसे कठोर शास्ति ऐसे व्यक्ति पर अधिरोपित की जाती है जिसकी आपराधिकता या सदोषिता उसके यौवनकाल और अपरिपक्वता के कारण एक सारभूत मात्रा तक कम हो जाती है, तो मृत्यु की शास्ति आनुपातिक नहीं है । तथापि, यहां इस मामले में ऐसी बात नहीं है । अपीलार्थी-अभियुक्तों की तैयारी, सक्रिय अंतर्ग्रस्तता, योजनाबद्ध निष्पादन और उनके पश्चात्‌वर्ती आचरण से सोच-समझकर और हेतुबद्ध रीति में ये हत्याएं करने की बू आती है । दस माह के बालक की गला घोंटकर हत्या करने के कृत्य से किसी भी तरह से नासमझी में किए गए कार्य की बात दर्शित नहीं होती है अपितु इससे पश्चाताप, दयालुता और मानवीयता की कमी प्रदर्शित होती है । यह अपराध अत्यंत क्रूर और अमानवीय रीति में कारित किया गया है, जो कि अत्यंत पाश्विक, हास्यास्पद, नृशंस और दिल दहला देने वाला है । इसलिए इस मामले में इस न्यायालय से यह अपेक्षित है कि ऐसा दंड अधिनिर्णीत किया जाए जो अपराध की मात्रा और अनुपात के अनुसार हो । अतः यह न्यायालय इस अवश्यंभावी निष्कर्ष पर पहुंचा है कि दोनों अपीलार्थी-अभियुक्तों को उनकी आपराधिकता उन्हें मृत्यु की शास्ति देने के लिए पूरी तरह से योग्य बनाती है । परिणामतः, यह न्यायालय क्रमशः विचारण न्यायालय द्वारा मृत्यु दंडादेश अधिनिर्णीत करते हुए अभिलिखित किए गए और उच्च न्यायालय द्वारा इसकी पुष्टि करते हुए अनुमोदित किए गए कारणों से सहमत है और इनकी पुष्टि करता है । (पैरा 29, 30, 31, 32, 33, 34 और 35)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2015]	(2015) 1 एस. सी. सी. 67 : **मोफिल खान** बनाम **झारखंड राज्य** ;	26
[2014]	(2014) 7 एस. सी. सी. 443 : **मोहम्मद जमालुदीन नासिर** बनाम **पश्चिमी बंगाल राज्य** ;	25
[2012]	(2012) 4 एस. सी. सी. 257 : **रामनरेश** बनाम **छत्तीसगढ़ राज्य** ;	23
[2011]	(2011) 14 एस. सी. सी. 401 : **अजीत सिंह हरनाम सिंह गुजराल** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	27

[2010]	(2010) 9 एस. सी. सी. 1 : **अतबीर** बनाम **राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली सरकार** ;	27
[2009]	2009 (12) स्केल 580 : **जगदीश** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ;	27
[2007]	(2007) 3 एस. सी. सी. 1 : **राम सिंह** बनाम **सोनिया** ;	27
[2005]	(2005) 4 एस. सी. सी. 165 : **सायबाना** बनाम **कर्नाटक राज्य** ;	27
[2003]	(2003) 8 एस. सी. सी. 224 : **राजस्थान राज्य** बनाम **खेरज राम** ;	27
[2001]	(2001) 3 एस. सी. सी. 673 : **सुरेश** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ;	27
[1983]	(1983) 3 एस. सी. सी. 470 : **माच्छी सिंह** बनाम **पंजाब राज्य** ;	23
[1980]	(1980) 2 एस. सी. सी. 684 : **बच्चन सिंह** बनाम **पंजाब राज्य** ;	23
[1973]	(1973) 1 एस. सी. सी. 20 : **जगमोहन सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ।	23

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2015 की दांडिक अपील सं. 802-803 और इसके साथ 2015 की दांडिक अपील सं. 804-805.

2010 के दांडिक मामला सं. 5245 में 2010 के दांडिक निर्देश सं. 8 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय के तारीख 26 अप्रैल, 2013 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री दुष्यंत पराशर (न्याय-मित्र)

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री गौरव भाटिया, अपर महाधिवक्ता, गर्वेश काबरा, अभिषेक चौधरी और उत्कर्ष जायसवाल

न्यायालय का निर्णय मुख्य न्यायमूर्ति एच. एल. दत्तू ने दिया ।

मु. न्या. दत्तू – सभी विशेष इजाजत याचिकाओं में इजाजत दी गई ।

2. ये अपीलें इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा दो संबद्ध अपीलों – 2010 का मृत्यु दंड मामला सं. 5003 और 5245 के साथ-साथ 2010 के मृत्यु दंड निर्देश सं. 8 में तारीख 26 अप्रैल, 2013 को पारित किए गए एक ही निर्णय और आदेश के विरुद्ध फाइल की गई हैं । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा 2008 के सेशन मामला सं. 293 में विद्वान् सेशन न्यायाधीश द्वारा तारीख 14 जुलाई, 2010 को पारित दोषसिद्धि के उस निर्णय और तारीख 15 जुलाई, 2010 को पारित दंडादेश के उस आदेश की पुष्टि की है, जिसके द्वारा और जिसके अधीन विद्वान् न्यायाधीश ने अपीलार्थी-अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया है और मृत्यु दंडादेश दिया है ।

3. प्रारंभ में, यह उल्लेख करना उपयुक्त होगा कि दोनों अपीलार्थियों-अभियुक्तों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् न्याय-मित्र, श्री दुष्यंत पराशर ने अपनी दलीलें केवल दंडादेश के प्रश्न तक ही सीमित रखी हैं । इसलिए इन अपीलों का विषय-क्षेत्र अपीलार्थी-अभियुक्तों द्वारा कारित किए गए अपराध के लिए समुचित दंडादेश के अवधारण तक ही सीमित रह गया है ।

तथ्य :

4. अभियोजन पक्षकथन संक्षेप में इस प्रकार है – तारीख 14/15 अप्रैल, 2008 की मध्यवर्ती रात्रि में मास्टर शौकत अली (मृतक पिता) के निवास पर परिवार के आठ व्यक्ति, उसके स्वयं के अतिरिक्त उसकी पत्नी श्रीमती हाश्मी (मृतक माता), उनकी पुत्री शबनम (अपीलार्थी-अभियुक्त), उनका कनिष्ठ पुत्र राशीद (मृतक कनिष्ठ भाई), उनकी अप्राप्तवय भतीजी राबिया (मृतक भतीजी), उनका ज्येष्ठ पुत्र अनीश अहमद और उसकी पत्नी अंजुम (मृतक पति-पत्नी) और उनका 10 माह का पुत्र अरश मौजूद थे । दुर्भाग्यपूर्ण रात्रि में लगभग 2.15 बजे अपीलार्थी-अभियुक्त शबनम की चिल्लाने की आवाज सुनकर उनका पड़ोसी लतीफ उल्लाह खान (अभि. सा. 1) अन्य पड़ोसियों के साथ मकान पर आया । अभि. सा. 1 ने मकान में प्रवेश किया और उसने शबनम को उसके मृतक पिता, जिसकी गर्दन कटी हुई थी, के शव के पास बेहोश पड़े पाया और उसके कनिष्ठ भाई का

गला कटा हुआ शव भी पाया । इसके अतिरिक्त, अभि. सा. 1 ने एक अन्य कमरे में मृतक पत्नी, मृतक पति-पत्नी और मृतक चचेरे भाई को रक्त से लथपथ पाया और उन सभी की गर्दन कटी हुई थी । दस माह के शिशु अरश का शव भी उसके माता-पिता के शवों के बीच पाया गया । उसके तुरंत पश्चात् अभि. सा. 1 ने पड़ोसियों को इकट्ठा करने के लिए शोर मचाया और अन्वेषक प्राधिकारियों को घटना की सूचना दी । तद्नुसार, अभि. सा. 1 से प्राप्त सूचना के आधार पर पुलिस थाना, हसनपुर में तारीख 15 अप्रैल, 2008 को पूर्वाह्न में 3.05 बजे 2008 का आपराधिक मामला सं. 880 अभिलिखित किया गया और परिवार के सात सदस्यों की हत्या करने के लिए अज्ञात व्यक्तियों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई । न तो अभि. सा. 1 और न ही हशमत हुसैन (अभि. सा. 2) अर्थात् मृतकों के मकान के सामने रहने वाले पड़ोसी ने अन्वेषक प्राधिकारियों के पास जाने से पूर्व अपीलार्थी-अभियुक्तों से बातचीत की थी ।

5. अन्वेषक अभिकरण घटनास्थल पर आया, मृत्युसमीक्षा रिपोर्ट तैयार की और शवों को मरणोत्तर परीक्षा के लिए भेजा । इसके अतिरिक्त, अलग-अलग शवों के निकट पाए गए रक्त से सने तकिए, गद्दे, रजाई, चारपाई का बाण आदि सम्यक् रूप से मुहरबंद, चिह्नित किए गए और कब्जे में लिए गए तथा आगामी विश्लेषण के लिए न्यायालय विज्ञान प्रयोगशाला, मुरादाबाद भेजे गए । डा. दीवान राम (अभि. सा. 24) ने मृतक पिता, शिशु और कनिष्ठ भाई के शवों की मरणोत्तर परीक्षा की और शेष मृतक व्यक्तियों की मरणोत्तर परीक्षा डा. आर. पी. शर्मा (अभि. सा. 27) ने की । आगे और अन्वेषण करने पर दोनों अपीलार्थी-अभियुक्तों अर्थात् सलीम और शबनम को गिरफ्तार किया गया । सलीम के बताने पर हत्या में प्रयुक्त आयुध-कुल्हाड़ी और एक रक्त से सनी कमीज की बरामदगी की गई । इसके अतिरिक्त, सलीम के कब्जे से एक नोकिया मोबाइल फोन, 10 बायोपोज गोलियों का एक खाली पत्ता, रक्त से सने वस्त्र, सलीम के मोबाइल की सिम आदि बरामद किए गए । इसके अतिरिक्त, अपीलार्थी-अभियुक्तों के बीच हुई बातचीत का कॉल-रिकार्ड और ब्यौरा भी अभिप्राप्त किया गया ।

6. अभियोजन का पक्षकथन यह है कि अभियुक्त व्यक्ति प्रेम संबंध और अयुक्त शारीरिक संबंध में अंतर्ग्रस्त थे । अपीलार्थी-अभियुक्त शबनम शिक्षा-मित्र के रूप में कार्यरत मृतक परिवार की शिक्षित पुत्री है, जबकि अपीलार्थी-अभियुक्त सलीम उसी गांव में रहने वाला एक बेरोजगार युवक है ।

यह सिद्ध है कि अपीलार्थी-अभियुक्त शबनम ये जघन्य हत्याएं करने के समय गर्भवती थी । अभियोजन पक्ष ने अपीलार्थी-अभियुक्त शबनम के परिवार को, जो जोरदार रूप से अभियुक्तों के बीच संबंधों के विरुद्ध थे, समाप्त करने और अपने आप के लिए आर्थिक सुरक्षा सृजित करने के लिए परिवार की संपूर्ण संपत्ति प्राप्त करने के हेतु को प्रकट किया है ।

7. अन्वेषण पूर्ण होने पर आरोप पत्र तैयार किया गया और अपीलार्थी-अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन आरोपित किया गया तथा शबनम को अलग-से भी भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन आरोपित किया गया । अपीलार्थी-अभियुक्तों ने अपनी दोषिता से इनकार किया और इसलिए मामला विचारण के लिए सुपुर्द किया गया ।

8. अभियोजन पक्ष ने 29 साक्षियों की परीक्षा कराई, दस्तावेजी साक्ष्य (प्रदर्श क-1 से क-101), न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला की रिपोर्ट (प्रदर्श क-102 से क-112) प्रस्तुत की और दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (जिसे इसमें आगे संक्षेप में "संहिता" कहा गया है) की धारा 313 के अधीन अपीलार्थी-अभियुक्तों के कथन अभिलिखित किए गए ।

9. मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्टों में मृतक पिता, माता, कनिष्ठ भ्राता, चचेरे भाई और पति-पत्नी की मृत्यु का कारण उन्हें मृत्यु-पूर्व पहुंची क्षतियों अर्थात् धारदार आयुध द्वारा कारित अनेक विदीर्ण घावों और गर्दन के सामने वाला भाग कटने के कारण पहुंचे सदमे और रक्तस्राव के रूप में उपदर्शित किया गया है । इसके अतिरिक्त, मृतक व्यक्तियों के उदर की आंतरिक रेखाएं लाल और सूजी हुई पाईं गई थीं, जिससे यह निष्कर्ष निकाला गया कि मृत्यु से पूर्व मादक पदार्थ खाया गया था । मृतक शिशु की मृत्यु का कारण श्वासावरोध और हाथ से गला घोंटने के कारण कारित हुई मृत्यु-पूर्व की क्षतियां अभिलिखित किया गया था ।

10. घटना का कोई प्रत्यक्षदर्शी साक्षी न होने के कारण यह पारिस्थितिक साक्ष्य का मामला है । पड़ोसियों अर्थात् अभि. सा. 1 और 2 के परिसाक्ष्य से संपुष्टि के तौर पर अभियोजन के वृत्तांत का समर्थन होता है और यह सिद्ध होता है कि जब वे अपीलार्थी-अभियुक्त शबनम के चिल्लाने की आवाज सुनकर मकान की ओर दौड़े तब मकान का मुख्य दरवाजा अंदर से बंद था । उन्होंने यह कथन किया है कि जब वे घर में घुसे तब उन्होंने मकान की छत पर या आस-पास कोई बिस्तर नहीं देखा था, जैसाकि अपीलार्थी-अभियुक्त शबनम ने संहिता की धारा 313 के

अधीन अभिलिखित किए गए अपने कथन में अभिकथन किया है, इसके बजाय उसका बिस्तर उसकी माता के बिस्तर के पास लगा हुआ था ।

11. इसके अतिरिक्त, गांव के ब्लाक प्रमुख महेन्द्र सिंह (अभि. सा. 4) और चाय-विक्रेता बिलाल अहमद (अभि. सा. 6) ने अपीलार्थी-अभियुक्त सलीम द्वारा उनके समक्ष की गई अपराध की संस्वीकृति के संबंध में साक्ष्य दिया और अपराध कारित करने के तथ्य और रीति की निम्नलिखित रूप में संपुष्टि की : अपीलार्थी-अभियुक्तों ने शबनम के परिवार की हत्या करने की योजना बनाई और दुर्भाग्यशाली दिन सलीम 10 नशे की गोलियां लाया और शबनम को सौंपी, जो उसने अपने परिवार के सदस्यों को चाय में डालकर दे दी । परिवार के सदस्यों के बेहोश होने पर सलीम हत्या करने के आयुध सहित उसके मकान पर पहुंचा और शबनम अपने परिवार के सदस्यों के सिर को पकड़ती गई और सलीम एक-एक करके उनकी गर्दनें काटता गया । अपराध करने के पश्चात् सलीम ने हत्या के आयुध को एक तालाब में फेंक दिया । इन साक्षियों ने इस तथ्य का भी साक्ष्य दिया है कि अपीलार्थी-अभियुक्त शबनम ने स्वयं शिशु का गला घोंटा था । फार्मेसी पर काम करने वाले रईस अहमद, साक्षी (अभि. सा. 8) ने यह कथन किया कि दुर्भाग्यशाली दिन की सुबह सलीम ने फार्मेसी से नींद की गोलियां खरीदने का प्रयत्न किया था, किंतु आखिरकार पप्पू नामक व्यक्ति से उसे ये गोलियां मिल ही गईं । इस साक्षी के कथन का समर्थन निर्विवाद रूप से मोबिल खान, भेषजज्ञ (अभि. सा. 11) द्वारा किया गया है ।

12. अन्य साक्षियों के कथनों से अपीलार्थी-अभियुक्तों के बीच अयुक्त संबंध की पुष्टि हुई है और ये संबंध शबनम के परिवार की इच्छा के विरुद्ध थे और दोनों प्रेमी रात्रि में मिलते थे ।

13. अपीलार्थी-अभियुक्तों ने अपनी प्रतिरक्षा में अपने विरुद्ध आरोपों से इनकार किया और मिथ्या रूप से फंसाए जाने का अभिवाक् किया । उन्होंने अपनी प्रतिरक्षा में वास्तव में एक-दूसरे को फंसाना चाहा । अपीलार्थी-अभियुक्त शबनम ने धारा 313 के अधीन किए गए अपने कथन में यह कहा कि सलीम एक चाकू लेकर छत के रास्ते उसके मकान में घुसा और जब वह अकेली छत पर सो रही थी तब उसने उसके परिवार के सभी सदस्यों की हत्या कर दी । इसके विपरीत, सलीम ने यह कथन किया कि वह शबनम के अनुरोध पर ही उसके मकान पर आया था और उसने वहां उससे अपराध कारित करने की संस्वीकृति की थी ।

14. विचारण न्यायालय ने अति सावधानीपूर्वक तथ्यों का क्रमबंधन

करने उपलब्ध साक्ष्य की पूर्ण रूप से संवीक्षा करने के पश्चात् यह मत व्यक्त किया कि मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्टों और साक्षियों के कथनों सहित अभिलेख पर के साक्ष्य से घटनाओं की श्रृंखला की एक सतत और संगत कड़ी सिद्ध होती है और पूरी तरह से अभियोजन के वृत्तांत का समर्थन होता है । विचारण न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि अपीलार्थी-अभियुक्तों ने अपने अयुक्त संबंधों के विरोध से विक्षुब्ध होकर घृणास्पद हत्या की योजना बनाई, जिसे निष्पादित करने के लिए उसने पहले तो परिवार को शबनम के हाथों चाय में नींद की गोलियां खिलाकर बेहोश किया और उनके अचेत होने पर फिर कुल्हाड़ी से उनके गलों के टुकड़े-टुकड़े कर दिए । इसलिए विचारण न्यायालय ने निष्कर्ष निकाला कि घटनाओं की श्रृंखला की कड़ी सिद्ध होने और उसकी संपुष्टि होने पर सात व्यक्तियों की नृशंस हत्या करने के लिए अपीलार्थी-अभियुक्तों की दोषिता की असंदिग्ध रूप से पुष्टि होती है और तद्द्वारा उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया ।

15. विचारण न्यायालय ने दंडादेश के आदेश में यह मत व्यक्त किया कि अपीलार्थी-अभियुक्तों द्वारा कारित किया गया अपराध आनुपातिक रूप से बहुत बड़ा है । उन्हें सह-अभियुक्त शबनम के परिवार के सात सदस्यों, जिनमें उसका दस माह का निर्दोष भतीजा, वृद्ध असहाय माता, वृद्ध पिता, एक युवा पति-पत्नी, उसका भाई-भाभी, एक युवा लड़का और एक 16 वर्षीय चचेरा भाई सम्मिलित हैं, की एक-एक करके अनेक हत्याएं करने के लिए दोषसिद्ध किया जाता है । विचारण न्यायालय ने निर्दयता से की गई इन हत्याओं के पीछे के हेतु, पूर्व-योजनाबद्ध निष्पादन, अपराध कारित करने की रीति, मृतक व्यक्तियों के व्यक्तित्व जो समाज के सम्मानीय और प्रिय-जन थे, मृतक व्यक्तियों के आधार, जो केवल अपनी शिक्षित पुत्री अपीलार्थी-अभियुक्त शबनम के एक अशिक्षित बेरोजगार सह-अभियुक्त सलीम के साथ विवाह के विरुद्ध थे तथा हत्या के पश्चात् अपीलार्थी-अभियुक्तों के पश्चाताप-विहीन आचरण को गुरुतरकारी परिस्थितियों के रूप में माना और अपने निष्कर्ष में यह अभिलिखित किया कि प्रस्तुत मामला विरल से विरलतम कोटि के अंतर्गत आता है और अपीलार्थी-अभियुक्तों द्वारा कारित किए गए अपराध के लिए दंड मृत्यु की शास्ति से अन्यून नहीं होना चाहिए । इसलिए विचारण न्यायालय ने दोनों अपीलार्थियों को मृत्यु दंडादेश दिया ।

16. अपीलार्थी-अभियुक्तों ने पूर्वोक्त निर्णय और आदेश से व्यथित होकर 2010 के मृत्यु दंड मामला सं. 5003 में उच्च न्यायालय के समक्ष समावेदन किया । उच्च न्यायालय ने उक्त अपील का 2010 के मृत्यु दंड निर्देश सं. 8 के साथ तारीख 26 अप्रैल, 2013 के एक सामान्य निर्णय द्वारा निपटारा किया ।

17. उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय द्वारा की गई मताभिव्यक्तियों और पक्षकारों की ओर से उपसंजात होने वाले विद्वान् काउंसेलों द्वारा दी गई दलीलों को ध्यान मे रखते हुए अभिलेख पर के साक्ष्य की एक-एक करके परीक्षा की और विचारण न्यायालय द्वारा पारित किए गए दोषसिद्धि के निर्णय की पुष्टि की । उच्च न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि वर्तमान मामले में गुरुतरकारी और न्यूनकारी परिस्थितियों का पलड़ा अत्यधिक रूप से गुरुतरकारी परिस्थितियों की ओर झुक रहा है और यह मत व्यक्त किया :–

> " ...वर्तमान मामले में हम यह पाते हैं कि गुरुतरकारी परिस्थितियों में अपराध की पैशाचिक और सोची-समझी प्रकृति सम्मिलित है, जो व्यवस्थित योजना बनाकर कारित किया गया । यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थी शबनम द्वारा जैव प्रशामक गोलियां सलीम की सहायता से अभिप्राप्त की गईं और किसी खाद्य पदार्थ में मिला दी गईं, जो परिवार के सभी छह परिपक्व सदस्यों को दिया गया और उन सभी की नींद में कुल्हाड़ी से हत्या कर दी । उनके शव उनके बिस्तरों में पाए गए और किसी भी मृतक की बाजुओं या हाथों पर कोई क्षति नहीं थी । सभी क्षतियां गर्दन, चेहरे या धड़ के भाग पर थीं, जिससे इस परिकल्पना का समर्थन होता है कि हत्याएं उस समय की गईं जब मृतक पूरी तरह से शांत हो चुके थे । इन सभी छह परिपक्व मृतकों के विसरा में डायजापाम प्रशामक औषधि की मौजूदगी उपदर्शित हुई है । अपीलार्थी सलीम द्वारा जो कुल्हाड़ी निकाल कर दी गई उस पर मानव रक्त लगा था । दस माह के शिशु अरश के प्रति भी कोई दया नहीं दिखाई गई जिसका गला घोंट दिया गया और इस प्रकार परिवार का एकमात्र कोई अन्य व्यक्ति जो संपत्ति का वारिस हो सकता था उसे भी समाप्त कर दिया गया । ...... अभियुक्त शबनम द्वारा अपने वस्त्र बदलना, सभी चिह्न और अंगुलियों की छाप इत्यादि को मिटाकर अपराध के सभी चिह्न मिटाने और फिर सहायता के लिए शोर मचाने तथा उसके पश्चात् यह छाप

छोड़ने के लिए बेहोश होने का बहाना करना कि किन्हीं बाह्य व्यक्तियों ने इस अपराध को कारित किया है, उसके इस पश्चात्वर्ती आचरण की इन सभी बातों से अपराध करने के पूर्व की, अपराध करने के दौरान और अपराध करने के पश्चात् की निष्ठुर योजना उपदर्शित होती है ।"

18. इसके अतिरिक्त, उच्च न्यायालय ने यह दलील स्वीकार करने से इनकार कर दिया कि अपीलार्थी-अभियुक्त शबनम अपने और अन्य सह-अभियुक्त के बीच संबंधों को लेकर अपने परिवार के विरोध के कारण अत्यधिक मानसिक तनाव में थी और यह एक उपयुक्त न्यूनकारी परिस्थिति है । उच्च न्यायालय ने यह अवेक्षा की कि दोनों अपीलार्थी-अभियुक्तों को मृतक व्यक्तियों द्वारा कोई धमकी देने या उनकी जान अथवा उनके शरीर पर कोई हमला करने की घटना का कोई साक्ष्य नहीं है और शबनम के परिवार के सभी सात सदस्यों, जिनमें दस माह का बालक भी है, को समाप्त करना ऐसी किसी आशंका के पूरी तरह से अननुपातिक और अनावश्यक प्रतिक्रिया थी जो अपीलार्थी-अभियुक्तों को उनकी प्रस्तावित मित्रता के संबंध में हो । उच्च न्यायालय ने यह भी अवेक्षा कि अपीलार्थी-अभियुक्तों की आपराधिक मानसिकता के लक्षण का निष्कर्ष चातुर्य से बनाई गई उस पूर्व-योजना, जिसके साथ अपराध कारित किया गया है, अपराध कारित करने की रीति और अपराध करने से पूर्व और उसके पश्चात् दोनों अपीलार्थी-अभियुक्तों का पश्चाताप-विहीन दृष्टिकोण से निकाला जा सकता है । इस प्रकार, उच्च न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि अपीलार्थी-अभियुक्तों के पूर्वोक्त आचरण से उनके सुधरने की कोई गुंजाइश नहीं है और निम्नलिखित मत व्यक्त किया :–

"शबनम का गर्भवती होना और बाद में बच्चे का जन्म होना दंडादेश कम करने के लिए कोई आधार नहीं है । यह भी दलील दी गई कि शबनम के गर्भ में बच्चा था और उसने कारागार में इसे जन्म दिया है तथा यदि अपीलार्थियों को फांसी दी जाती है तो वह अनाथ हो जाएगा । बहुत से हत्या के मामलों में अभियुक्तों के अप्राप्तवय बच्चे, या वृद्ध माता-पिता या पति या पत्नी होते हैं जो सिद्धदोष व्यक्ति को फांसी देने पर बेसहारा हो जाएंगे । सेवका पेरुमल **बनाम** तमिलनाडु राज्य, 1991 क्रिमिनल ला जनरल 845 (एस. सी.) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय के निर्णय के अनुसार, यदि मामला ऐसा है जहां अपराध और अपराधी की जघन्य प्रकृति को देखते हुए मृत्यु

की शास्ति ही एकमात्र उचित दंडादेश है तो यह बात मृत्यु दंडादेश अधिनिर्णीत न करने के लिए एक विधिसम्मत कारण नहीं है ।"

इस प्रकार, उच्च न्यायालय ने पूर्वोक्त बातों को ध्यान में रखते हुए इस मामले को विरल से विरलतम मामले के रूप में वर्गीकृत करना उचित समझा और अपीलार्थी-अभियुक्तों को मृत्यु की शास्ति अधिनिर्णीत की ।

19. अभियुक्त-अपीलार्थी पूर्वोक्त दोषसिद्धि और दंडादेश से व्यथित होकर इस अपील में हमारे समक्ष आए हैं ।

दलीलें :

20. अपीलार्थियों की ओर से विद्वान् न्याय-मित्र ने अपनी दलीलें केवल दंडादेश के प्रश्न तक की सीमित रखीं । उसने यह दलील दी कि प्रस्तुत मामला पूर्ण रूप से पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित है और अभियोजन के पक्षकथन का किसी प्रत्यक्षदर्शी साक्षी से समर्थन नहीं होता है, इसलिए विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थी-अभियुक्तों को दंडादिष्ट करने के लिए इसका अवलंब नहीं लिया जा सकता था । उसने यह भी दलील दी कि अपीलार्थी-अभियुक्तों की न्यूनकारी परिस्थितियां, अर्थात् उनका घटना के समय युवा होना, मृतक परिवार के द्वारा उनकी मित्रता के विरोध के कारण उनके द्वारा झेले गए मानसिक तनाव और घटना के समय अपीलार्थी-अभियुक्त शबनम के गर्भवती होने के तथ्य को दोनों अपीलार्थी-अभियुक्तों द्वारा कारित अपराध के संदर्भ में विचार किया जाना चाहिए और उन्हें समुचित दंडादेश का अवधारण और अधिनिर्णीत करने में लचीला दृष्टिकोण अपनाना चाहिए ।

21. राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल ने अपीलार्थी-अभियुक्तों को दंडादिष्ट करने में लचीला दृष्टिकोण अपनाने के संबंध में विद्वान् न्याय-मित्र के अनुरोध का विरोध किया और निचले न्यायालयों द्वारा पारित किए गए निर्णयों और आदेशों में अभिलिखित कारणों का समर्थन करते हुए यह दलील दी कि यह मामला "विरल से विरलतम" के रूप में वर्गीकृत करने के लिए एक उपयुक्त मामला है और इसलिए अपीलार्थी-अभियुक्त उनके द्वारा कारित किए गए अपराध के लिए कोई और नहीं अपितु मृत्यु की शास्ति दिए जाने योग्य हैं ।

22. हमने अभिलेख पर के संपूर्ण साक्ष्य और विद्वान् काउंसेलों द्वारा दी गई दलीलों पर गंभीरता से विचार किया । हमने निचले न्यायालयों के निर्णयों और आदेशों का भी परिशीलन किया ।

चर्चा :

23. हम मृत्यु की शास्ति के संपूर्ण न्यायशास्त्र, जैसा कि भारत में विकसित हुआ है, का वर्णन करके चर्चा को विस्तृत नहीं करेंगे अपितु इस कवायद को उन अवधारकों को तय करने तक ही सीमित रखेंगे जो गुरुतरकारी और न्यूनकारी परिस्थितियों का संतुलन करते हुए समुचित दंडादेश अधिनिर्णीत करने के लिए हमारे मस्तिष्क को अधिक प्रभावित करेंगे । हमें **जगमोहन सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[1], **बच्चन सिंह** बनाम **पंजाब राज्य**[2] और **माच्छी सिंह** बनाम **पंजाब राज्य**[3] वाले मामलों में इस न्यायालय द्वारा अधिकथित किए गए उन सिद्धांतों को ध्यान में रखना होगा जिनका आज तक अनुसरण किया गया है । पूर्वोक्त विनिश्चयों से यह उपदर्शित होता है कि मृत्यु की शास्ति अधिनिर्णीत करने संबंधी भारतीय दांडिक न्यायशास्त्र में दंडादेशात्मक नीति का सर्वाधिक महत्वपूर्ण पहलू यह है कि आजीवन कारावास एक नियम है और मृत्यु दंडादेश एक अपवाद है, जो "विरल से विरलतम" मामलों में दिया जाना चाहिए । मृत्यु दंडादेश केवल तब अधिरोपित किया जाना चाहिए जब अपराध की सुसंगत परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए आजीवन कारावास का दंडादेश अधिरोपित करने का विकल्प अपराध और सभी सुसंगत परिस्थितियों को ध्यान मे रखते हुए शुद्ध अंतःकरण से प्रयोग नहीं किया जा सकता हो । दंडादेश के संबंध में विवेक का प्रयोग करने के लिए किन परिस्थितियों को ध्यान में रखना चाहिए और किन को नहीं तथा किन परिस्थितियों को अन्य परिस्थितियों के साथ ध्यान में रखना चाहिए और कौन-सी परिस्थितियां स्वयमेव पर्याप्त हैं, को सुविस्तृत रूप से प्रगणित नहीं किया जा सकता है । इस न्यायालय द्वारा परिस्थितियों के वर्गीकरण और आपराधिकता संबंधी उपदर्शन का अवधारण करने के लिए पूर्वोक्त मामलों में यथा अधिकथित दिशा-निर्देशों और सिद्धांतों को **रामनरेश** बनाम **छत्तीसगढ़ राज्य**[4] वाले मामले में संक्षिप्त और स्पष्ट रूप में उल्लिखित किया गया है । इन्हें नीचे उद्धृत किया जाता है :–

"गुरुतरकारी परिस्थितियां –

(1) अभियुक्त, जिसका मृत्यु से दंडनीय महापराध के लिए

---

[1] (1973) 1 एस. सी. सी. 20.
[2] (1980) 2 एस. सी. सी. 684.
[3] (1983) 3 एस. सी. सी. 470.
[4] (2012) 4 एस. सी. सी. 257.

दोषसिद्धि का पूर्व इतिहास रहा हो, द्वारा हत्या, बलात्संग, सशस्त्र डकैती, व्यपहरण आदि जैसे जघन्य अपराध करना या ऐसे व्यक्ति द्वारा किए गए अपराध जिसका गंभीर हमले और आपराधिक दोषसिद्धियों का पर्याप्त इतिवृत्त रहा है ।

(2) अपराध तब किया गया था जब अपराधी कोई अन्य गंभीर अपराध करने में लगा था ।

(3) अपराध जन-साधारण में डर पैदा करने के लिए किया गया था और अपराध सार्वजनिक स्थल पर ऐसे आयुध या औजार से कारित किया गया हो जो स्पष्ट रूप से एक से अधिक व्यक्तियों के जीवन के लिए खतरनाक हो सकता था ।

(4) हत्या का अपराध फिरौती के लिए किया गया हो या धन अथवा धनीय फायदे के लिए इसी प्रकार का अपराध किया गया हो ।

(5) भाड़े पर हत्या करना ।

(6) अपराध विपदग्रस्त के साथ अमानवीय व्यवहार और यातना देने में अंतर्ग्रस्त रहते हुए निर्दयतापूर्वक केवल अभिलाषा के लिए किया गया हो ।

(7) किसी व्यक्ति द्वारा अपराध विधिपूर्ण अभिरक्षा में रहते हुए किया गया हो ।

(8) हत्या या अपराध विधिपूर्ण रूप से अपने कर्तव्य का पालन कर रहे व्यक्ति को जैसे गिरफ्तारी या विधिपूर्ण परिरोध के किसी स्थल में स्वयं अथवा किसी अन्य की अभिरक्षा को निवारित करने के लिए किया गया हो । उदाहरण के लिए, ऐसे व्यक्ति की हत्या करना जो दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 43 के अधीन अपने कर्तव्य के विधिपूर्ण निर्वहन में लगा हो ।

(9) जब अपराध की मात्रा उच्च कोटि की हो, जैसे संपूर्ण परिवार की या किसी विशिष्ट समुदाय के सदस्यों की हत्या का प्रयत्न करना ।

(10) जब अपराध का शिकार व्यक्ति निर्दोष, असहाय है या ऐसा व्यक्ति है जो नातेदारी के विश्वास और सामाजिक सन्नियमों पर निर्भर हो, जैसे कोई बालक, असहाय स्त्री, कोई

पुत्री या भतीजी जो पिता/चाचा के साथ रह रही है और ऐसे विश्वासी व्यक्ति द्वारा उसके साथ अपराध किया जाता है ।

(11) जब हत्या ऐसे हेतु के लिए की जाती है जिससे पूर्ण दुराचारिता और नीचता दर्शित होती हो ।

(12) जब हत्या प्रकोपन के बिना निर्दयता से की गई हो ।

(13) अपराध इतनी बर्बरता से कारित किया जाता है कि उससे न केवल न्यायिक अंतश्चेतना को अपितु समाज की अंतश्चेतना को भी गहरी ठेस या सदमा पहुंचा हो ।

न्यूनकारी परिस्थितियां –

(1) जिस रीति में और जिन परिस्थितियों के अधीन अपराध कारित किया गया, उदाहरण के लिए, गहन मानसिक या भावनात्मक व्याकुलता अथवा प्रसामान्य अनुक्रम में की इन सभी स्थितियों के प्रतिकूल उच्च कोटि का प्रकोपन हो ।

(2) अभियुक्त की आयु एक सुसंगत बात है किंतु स्वतः एक निश्चायक कारक नहीं है ।

(3) अपराधी के अपराध में पुनः संलिप्त न होने की संभावना और अभियुक्त के सुधरने या पुनर्वासित होने की अधिसंभाव्यता ।

(4) अभियुक्त की दशा से यह दर्शित होता है कि वह मानसिक रूप से विकृत था और विकृति के कारण आपराधिक आचरण की परिस्थितियों का मूल्यांकन करने की उसकी क्षमता का ह्रास हो गया था ।

(5) ऐसी परिस्थितियां, जिनसे जीवन के प्रसामान्य अनुक्रम में ऐसा व्यवहार करना संभव हो जाता है और लगातार तंग किए जाने जैसी प्रस्तुत स्थिति में मानसिक असंतुलन हो जाना संभव है या वस्तुतः, मानवीय व्यवहार ऐसा हो जाता है कि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में अभियुक्त यह सोचता है कि उसने अपराध करके नैतिक रूप से ठीक किया है ।

(6) जहां साक्ष्य का उचित मूल्यांकन करने के पश्चात् न्यायालय का यह मत है कि अपराध पूर्व-निर्धारित रीति में कारित नहीं किया गया था और मृत्यु कोई अन्य अपराध करने

के अनुक्रम में हुई थी तथा इसका यह अर्थान्वयन लगाए जाने की संभाव्यता हो कि यह अपराध मूल अपराध कारित करने के परिणामस्वरूप हुआ था ।

(7) जहां किसी एकमात्र प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के परिसाक्ष्य का अवलंब लेना पूर्णतः असुरक्षित हो, हालांकि अभियोजन पक्ष ने अभियुक्त के दोष को सिद्ध कर दिया हो ।

दंडादेशात्मक नीति से संबंधित प्रश्नों का अवधारण करते समय न्यायालय को कतिपय सिद्धांतों का अनुसरण करना चाहिए और वे सिद्धांत मृत्यु दंडोदश या अन्यथा के अधिरोपण में उपरोक्त बातों के अतिरिक्त मार्गदर्शक बिंदु हैं ।

सिद्धांत :

1. न्यायालय को यह कसौटी वहां लागू करनी चाहिए यदि मृत्यु दंडादेश के अधिरोपण के लिए यह 'विरल से विरलतम' मामला है ।

2. न्यायालय की राय में, किसी अन्य दंड, अर्थात् आजीवन कारावास का अधिरोपण पूर्णतया अपर्याप्त होगा और न्याय की पूर्ति नहीं हो पाएगी ।

3. आजीवन कारावास नियम है और मृत्यु दंडादेश अपवाद है ।

4. आजीवन कारावास का दंडादेश अधिरोपित करने का विकल्प अपराध की प्रकृति और परिस्थितियों तथा सभी सुसंगत परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए सावधानीपूर्वक प्रयोग किया जाना चाहिए ।

5. वह पद्धति (योजनाबद्ध या अन्यथा) और रीति (नृशंसता और अमानवीयता की सीमा), जिसमें अपराध कारित किया गया और परिस्थितियां जिनमें ऐसा जघन्य अपराध कारित किया गया ।"

24. अब यह विधि स्थिर है कि जहां अधिकतम दंडादेश, जो किसी उपबंध के अधीन अधिनिर्णीत किया जा सकता है, मृत्यु दंडादेश है तो वहां न्यायालयों से यह अपेक्षा की जाती है कि वह प्रत्येक मामले के तथ्यों पर स्वतंत्र रूप से विचार करे और उस दंडादेश का अवधारण करे जो अभियुक्त की आपराधिकता के लिए सबसे समुचित और आनुपातिक है । न्यायालय के लिए इतना ही पर्याप्त नहीं है कि वह परिस्थितियों के केवल किसी एक शीर्षक के अधीन आने वाली किसी एक श्रेणी के प्रति निर्देश

करके और अन्य परिस्थितियों के अधीन आने वाली श्रेणियों की पूर्णतया अनदेखी करते हुए दंड की मात्रा का विनिश्चय करे । कहने का तात्पर्य यह है कि परिस्थितियों को अलग-अलग खंडों में बांटकर उन पर विचार किया जाना अपेक्षित नहीं है, अपितु उनके संचयी प्रभाव पर विचार किया जाना चाहिए । दंडादिष्ट करते समय न्यायालय को पर्याप्त रूप से सचेत रहना चाहिए और सिद्धांतों का पालन करना चाहिए जिससे कि दांडिक न्याय व्यवस्था को बेहतर तरीके से लागू किया जा सके और न्यायालय द्वारा संहिता की धारा 354(3) में अनुध्यात अनुसार प्रभावी और सार्थक तर्कणा दी जा सके ।

25. **मोहम्मद जमालुदीन नासिर** बनाम **पश्चिमी बंगाल राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय की मताभिव्यक्तियों में भी पूर्वोक्त सिद्धांतों के प्रति निर्देश किया गया है, जो निम्नलिखित हैं :–

> "दंडादिष्ट करना एक जटिल काम है और इसके लिए आंतर-आनुशासनिक दृष्टिकोण अपेक्षित है तथा विशेष कौशल और प्रतिभा का होना आवश्यक है । उचित दंडादेश कई सारी बातों, जैसे अपराध की प्रकृति, परिस्थितियां–गुरुतरकारी और न्यूनकारी, अपराधी का पूर्व आपराधिक इतिहास, आयु, अपराधी की शिक्षा, गृह-जीवन, मर्यादा, सामाजिक सामंजस्य, भावनात्मक और मानसिक दशा के प्रति निर्देश करते हुए उसकी पृष्ठभूमि, उसके सुधरने की संभावना आदि का संयोजन है । उपरोक्त उद्धरण रतनलाल एंड धीरजलाल के ला आफ क्राइम्स, 26वां संस्करण के पृष्ठ 185 पर 'आफ पनीसमेंट्स' विषय में पाया जा सकता है ।"

26. **मोफिल खान** बनाम **झारखंड राज्य**[2] वाला मामला एक ऐसा मामला था, जहां अपीलार्थी–अभियुक्तों ने संपत्ति को लेकर कलह के कारण अपने ही परिवार के आठ व्यक्तियों की एक के बाद दूसरे की नृशंसता और निर्दयता से हत्या कर दी । इस न्यायालय ने अभियुक्तों को मृत्यु दंडादेश देते हुए यह पाया कि अपराधियों द्वारा नातेदारों की निर्दयता से हत्या करने की रीति और अपराध करने के पश्चात् उनके आचरण को देखते हुए उनके सुधरने की गुंजाइश विलुप्त हो गई है । इस न्यायालय ने निम्नलिखित मत व्यक्त किया :–

---

[1] (2014) 7 एस. सी. सी. 443.

[2] (2015) 1 एस. सी. सी. 67.

"46. अपराध परीक्षण, आपराधिक परीक्षण और 'विरल से विरलतम' परीक्षण इस न्यायालय द्वारा प्रतिपादित कतिपय परीक्षण हैं । इन परीक्षणों से मूलभूत रूप से यह परीक्षा की जाती है कि क्या समाज में ऐसे अपराधों के प्रति घृणा पैदा हुई है और क्या ऐसे अपराधों से समाज की अंतश्चेतना को ठेस पहुंची है तथा समुदाय में उग्र और उच्च कोटि का आक्रोश पैदा हुआ है । जिन मामलों में अपराध के शिकार व्यक्ति का संहार करने के लिए उस पर पूर्व-चिंतन से और सोच-समझकर सावधानीपूर्वक हमला करके हत्या करने की योजना को अमल में लाने की बात दर्शित होती है, उन्हें मृत्यु की शास्ति अधिरोपित करने के लिए उपयुक्त मामले होना अभिनिर्धारित किया गया है । जहां निर्दोष अप्राप्तवय बच्चों, निहत्थे व्यक्तियों, असहाय स्त्रियों और वृद्ध तथा अशक्त व्यक्तियों की आधिपत्य स्थिति रखने वाले व्यक्तियों द्वारा पैशाचिक रीति में हत्या की गई हो और जहां अभियुक्तों ने भयावह रूप से हत्या करने के पश्चात् दुष्ट मनोवृत्ति प्रदर्शित करते हुए कोई पश्चाताप दर्शित नहीं किया गया हो, वहां मृत्यु की शास्ति अधिरोपित की गई । जहां यह सिद्ध हो जाता है कि अभियुक्त एक निष्ठुर अपराधी है और पैशाचिक रीति में हत्या कारित की है और वहां यह महसूस होता है कि ऐसे व्यक्ति का सुधरना या पुनर्वासित होना असंभव है और यदि उसे स्वछंद छोड़ दिया गया तो वह समाज के लिए एक खतरा होगा, वहां इस न्यायालय ने मृत्यु दंडादेश की पुष्टि करने में कोई संकोच नहीं किया । इस न्यायालय ने कई बार जघन्य हत्या के मामलों में निर्दयता और निष्ठुरता को उजागर करते हुए उन व्यक्तियों को एक भयोपरतिकारी संदेश देने की आवश्यकता समझी जो भविष्य में ऐसे अपराध में लिप्त हो सकते हैं । जघन्य हत्याओं के कुछ मामलों में इस न्यायालय ने अन्य सुसंगत बातों के साथ-साथ न्याय के लिए समाज की पुकार को भी ध्यान में रखा है ।"

27. **राम सिंह** बनाम **सोनिया**[1] वाले मामले में एक विवाहित दंपत्ति ने पत्नी के पिता द्वारा उसके सौतले भाई और परिवार को संपत्ति देने का विरोध करने का हेतु रखते हुए पत्नी के पिता, माता, बहिन, सौतेले भाई और 45 दिन, 2½ वर्ष और 4 वर्ष के तीन बालकों सहित उसके संपूर्ण परिवार की हत्या कर दी थी । उस मामले में इस न्यायालय ने यह

---

[1] (2007) 3 एस. सी. सी. 1.

अभिनिर्धारित किया कि चूंकि हत्याएं क्रूरता, योजनाबद्ध और निर्दयी रीति में, अपराध के शिकार व्यक्तियों की ओर से किसी प्रकोपन के बिना, तब की गईं जब वे सो रहे थे, इसलिए यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि अभियुक्तों के पास कोई मूलभूत मानवीयता नहीं है और वे ऐसे मष्तिष्क और मनोवृत्ति रहित हैं जिसमें कोई सुधार किया जा सकता हो और इसलिए यह मामला मृत्यु की शास्ति अधिरोपित करने के लिए विरल से विरलतम कोटि के अंतर्गत आता है । इसके अतिरिक्त, इसी प्रकार के मामलों में जहां अभियुक्तों ने अपने ही संबंधियों की एक पूर्व-योजनाबद्ध और जघन्य रीति में, किसी मनस्ताप या आत्म-रक्षा के बिना, हत्या कर दी वहां इस न्यायालय ने उनकी मृत्यु की शास्ति को यह मत व्यक्त करते हुए कायम रखना उपयुक्त समझा कि अपराध कारित करने की रीति हास्यास्पद और पैशाचिक होने के कारण अभियुक्त कोई और नहीं अपितु मृत्यु की शास्ति दिए जाने योग्य हैं । (**अजीत सिंह हरनाम सिंह गुजराल** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] **अतबीर** बनाम **राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली सरकार**[2] **जगदीश** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[3] **सायबाना** बनाम **कर्नाटक राज्य**[4] **राजस्थान राज्य** बनाम **खेरज राम**[5] और **सुरेश** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[6] वाले मामले देखें) ।

28. तथापि, भारत की स्थिति, इसके नागरिकों के सामाजिक परिवेश की विविधता, देश में नैतिकता और शिक्षा के स्तर में भिन्नता, इसके क्षेत्र की विशालता, इसकी जनसंख्या की विषमता और वर्तमान परिस्थिति में देश में विधि और व्यवस्था बनाए रखने की सर्वोच्च आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए, न्यायालय आजीवन कारावास और मृत्यु दंड के बीच चयन करते समय अपराध का मूल्यांकन करने और सर्वाधिक उचित दंड आबंटित करने में जो अति महत्वपूर्ण कार्य करते हैं वह समकालीन समुदाय के मूल्यों और दंड व्यवस्था के मध्य एक कड़ी को बनाए रखना है । दांडिक न्यायशास्त्र से यह उपदर्शित होता है कि समुचित शास्तियों के बारे में किसी अपराध के प्रति समाज की धारणाएं निश्चायक नहीं हैं । साथ-ही-साथ यह बात भी स्थिर है कि उक्त मानदंड सदैव प्रगतिशील रहे हैं और यह बात सार्थक भी है क्योंकि जनता की राय किसी मानवोचित न्याय से जागृत हो जाती है ।

---

[1] (2011) 14 एस. सी. सी. 401.
[2] (2010) 9 एस. सी. सी. 1.
[3] 2009 (12) स्केल 580.
[4] (2005) 4 एस. सी. सी. 165.
[5] (2003) 8 एस. सी. सी. 224.
[6] (2001) 3 एस. सी. सी. 673.

मानदंडों को अवधारित करने की गुंजाइश कदापि स्पष्ट नहीं होती है और विरले ही स्थिर रहती है । इसलिए न्यायालयों को अपना निष्कर्ष लोक नैतिकता और अंतश्चेतना के विकसित मानदंडों से निकालना चाहिए जो कि एक विकासशील समाज के विकास को चिह्नत करते हैं ।

29. पारिवारिक संबंध हमारे समाज की विशेषताओं को वर्णित और उजागर करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं । आज भारतीय विधिक व्यवस्था पुत्र और पुत्री के बीच विभेद नहीं करती है – उनके एक समान अधिकार और कर्तव्य हैं । भारतीय सभ्यता सदियों से इस बात की साक्षी रही है कि पुत्रियां पुत्रों के अपेक्षाकृत अपने माता-पिता की देखभाल करने का भार अधिक कर्तव्यपरायणता से उठाती हैं । हमारा अनुभव यह कहता है कि एक प्राप्तवय पुत्री के अपने माता-पिता के साथ उसके संबंध अधिक प्रगाढ़ होते हैं और जब ये संबंध कटु हो जाएं तो प्राप्तवय पुत्रों की बजाय प्राप्तवय पुत्रियों पर इसका अधिक बुरा प्रभाव पड़ता है । शिक्षा के विकास से प्रेरित आधुनिक युग अब इस स्थिर धारणा को मान्यता नहीं देता है कि माता-पिता की एक पुत्र के लिए चाह होती है जिससे कि कोई उनके बुढ़ापे में उनकी देखरेख करने वाला और सहारा बने । अब, शिक्षित और सभ्य समाज में परिवार में पुत्री, विशेष रूप से अपने माता-पिता के प्रति, एक बहुआयामी और अपरिहार्य भूमिका निभाती है । वह देखरेख करने और सहारा देने वाली, ममतामयी और उत्तरदायित्वपूर्ण, हमारे समाज के उच्च मूल्यों की प्रतिमूर्ति है और जिस पर माता-पिता आंख मूंदकर विश्वास करते हैं ।

30. ऐसे सभी अपराध जो व्यक्तियों की आत्मा को ठेस पहुंचाते हैं, उनमें से कभी कोई पितृ-हत्या से अधिक घृणास्पद नहीं ठहराया गया, जो निश्चित रूप से केवल मानव प्रकृति का ही नहीं अपितु क्रूर प्रवृत्ति का सर्वाधिक और भयानक व्युतक्रम है । ऐसा कोई कार्य वहां पर्याप्ततः भयावह होगा जहां अपराधी और अपराध के शिकार व्यक्ति अशिक्षित और पिछड़े हों, किंतु यह मामला शिक्षित परिवार की वंशावली, नैतिक लालन-पालन और उत्तम सम्मानजनक रहन-सहन, जहां पिता और पुत्री दोनों अध्यापक हैं, का एक भयानक उदाहरण है । यहां यह मामला ऐसा है जहां पुत्री, अभियुक्त-अपीलार्थी शबनम, जिसका उसके परिवार द्वारा पालन-पोषण एक शिक्षित और स्वच्छंद वातावरण में किया गया और विद्यालय में एक शिक्षामित्र (अध्यापिका) के रूप में सम्मानीय रूप से नियोजित थी, उसने अपने ज़ार के प्यार और वासना के प्रभाव में एक निर्दोष बालक सहित सात

जनों का सफाया करते हुए यह नृशंस पितृ-हत्या कारित की है । वह न केवल अपने परिवार के प्रति अपने स्नेह और अपने कर्तव्य को भूल गई, अपितु उसने अपने ही घर में इतने सारे मानव वध कर डाले ताकि उसकी सह-अभियुक्त सलीम के साथ रहने की इच्छा पूर्ण हो सके और उसके सिवाय कोई उत्तराधिकारी शेष न रहने पर संपत्ति को हड़प सके । अपीलार्थी-सह-अभियुक्त सलीम ने उसके साथ मिलकर एक जटिल योजना रची और कुल्हाड़ी से छह मृतक व्यक्तियों की हत्या कर दी तथा अपराध-स्थल से भाग गया और हत्या के आयुध को छिपा दिया तथा घटना की मिथ्या कहानी का समर्थन किया । दोनों अपीलार्थी-अभियुक्तों ने हमारे उस समाज का दिल तार-तार कर दिया है, जहां परिवार को प्रेम और भरोसे की संस्था माना जाता है और उन्होंने उसका अनादर किया है तथा अपने प्रेम संबंध के लिए उसे दूषित किया है ।

31. अपीलार्थी-अभियुक्तों ने सात निर्दोष जीवनों का उस समय अंत कर दिया जब वे अपने ही घर की सुरक्षा में अपनी पुत्री और उसके ज़ार की हिंसक योजना से पूरी तरह अनजान और निस्सहाय तथा संदेहरहित होकर नींद में सोए पड़े थे । अपीलार्थी-अभियुक्तों ने मृतक परिवार द्वारा उनके संबंधों का विरोध करने से प्रेरित होकर और अपने अधर्मज बालक के गर्भ से अवगत होकर भ्रष्ट योजना रची और पहले अभियुक्त शबनम, जिस पर परिवार संदेह नहीं कर सकता था, द्वारा बनाई गई चाय में प्रशामक ओषधि मिलाकर उनको दी गई और उसके पश्चात् उनके गले की महत्वपूर्ण रक्त वाहिनियां काटकर उनकी हत्या कर दी । अपीलार्थी-अभियुक्तों ने उस दस माह के शिशु को भी नहीं छोड़ा जो उनके ज़ार संबंधों का विरोध नहीं कर सकता था और निर्दयतापूर्वक गला घोंटकर उसकी भी हत्या कर दी ताकि भविष्य में परिवार की संपत्ति में हिस्से का दावा करने वाला कोई जीवित न रह सके । परिवार के सदस्यों की मृत्यु होते ही अपीलार्थी-अभियुक्त सलीम हत्या के आयुध और अपराध के अन्य साक्ष्य का सफाया करने के लिए घटनास्थल से भाग गया, जबकि अपीलार्थी-अभियुक्त शबनम बेहोश होने का बहाना करके अपने पिता के क्षत-विक्षत शव के पास यह जताने के लिए लेट गई कि जब वह छत पर सोई थी तब किसी बाह्य व्यक्ति ने अपराध कारित किया । इन अपीलार्थी-अभियुक्त प्रेमियों ने पूरे विचारण के दौरान लगातार अपनी दोषिता से इनकार किया और अभियोजन पक्षकथन साबित होने पर अपराध कारित करने के लिए एक-दूसरे को फंसाने लगे ताकि अपने घृणित कृत्य के परिणामों से अपने आप को बचा सकें ।

32. गुरुतर परिस्थितियों से अपराध की अत्यंत जघन्य, सोची-समझी और नृशंस प्रकृति उपदर्शित होती है, जिनसे यह सुझाव मिलता है कि इन अभियुक्तों के सुधरने और भविष्य में अपराध करने से उनके प्रविरत रहने की कम संभावना है । इन सभी विशिष्ट बातों से अपीलार्थी-अभियुक्त पुत्री के अपने परिवार के प्रति निष्ठुर दृष्टिकोण की गंध आती है और स्वयं अपने माता-पिता, भाई, भाभी और दस माह के भतीजे की योजनाबद्ध तरीके से निर्दयतापूर्वक हत्या करने में उसकी दुराचारिता की ऊंचाई प्रतिबिम्बित होती है । इस बात ने समाज में तीव्र आक्रोश उत्पन्न किया है । यह सभी गुरुतरकारी परिस्थितियों अर्थात् अपराध के शिकार व्यक्तियों, हत्या कारित करने के हेतु, हत्या कारित करने की रीति, अपराध की मात्रा और अपीलार्थी-अभियुक्तों के पश्चाताप-विहीन दृष्टिकोण का मिश्रित निष्कर्ष है जो इस मामले में हमारे समक्ष मौजूद है ।

33. अपराध कारित करने के समय अपीलार्थी-अभियुक्तों की युवा आयु संबंधी न्यूनकारी परिस्थितियां, उनके दुष्ट कार्य की गुरुतरकारी परिस्थितियां अधिक भारी होते हुए, कोई मायने नहीं रखती हैं । इसके अतिरिक्त, हमारे समक्ष यह भी उल्लेख किया गया है कि अपीलार्थी-अभियुक्त शबनम अपराध कारित करने के समय गर्भवती थी और उनका एक अप्राप्तवय बालक है जो दोनों अभियुक्तों पर आश्रित है । उक्त ऐसी परिस्थितियां होने पर यह उल्लेख करना उपयुक्त है कि इस न्यायालय ने सतत रूप से यह अभिनिर्धारित किया है कि ऐसे अनुकंपा आधार अधिकांश मामलों में विद्यमान होते हैं और मृत्यु दंडादेश का लघूकरण करने की बात पर विचार करने के लिए सुसंगत नहीं है । जब अपराध भयावह हो और एक सोची-समझी रीति में कारित किया गया हो, तब अभियुक्त की आयु एक सुसंगत बात नहीं हो सकती है और **मोफिल खान** (उपरोक्त) वाले मामले में भी इस न्यायालय द्वारा इस सिद्धांत की अभिपुष्टि की गई है । तथापि, यह हैरान करने वाली बात है कि इस दंपत्ति द्वारा प्रेम में अंधे होकर अपने यौवनकाल में इतनी सारी हत्याएं करने का अधम कृत्य किया गया और पछतावा तक नहीं हुआ ।

34. यदि विधि की सबसे कठोर शास्ति ऐसे व्यक्ति पर अधिरोपित की जाती है जिसकी आपराधिकता या सदोषिता उसके यौवनकाल और अपरिपक्वता के कारण एक सारभूत मात्रा तक कम हो जाती है, तो मृत्यु

की शास्ति आनुपातिक नहीं है । तथापि, यहां इस मामले में ऐसी बात नहीं है । अपीलार्थी-अभियुक्तों की तैयारी, सक्रिय अंतर्ग्रस्तता, योजनाबद्ध निष्पादन और उनके पश्चात्वर्ती आचरण से सोच-समझकर और हेतुबद्ध रीति में ये हत्याएं करने की बू आती है । दस माह के बालक की गला घोंटकर हत्या करने के कृत्य से किसी भी तरह से नासमझी में किए गए कार्य की बात दर्शित नहीं होती है अपितु इससे पश्चाताप, दयालुता और मानवीयता की कमी प्रदर्शित होती है । यह अपराध अत्यंत क्रूर और अमानवीय रीति में कारित किया गया है, जो कि अत्यंत पाश्विक, हास्यास्पद, नृशंस और दिल दहला देने वाला है । इसलिए इस मामले में हमसे यह अपेक्षित है कि ऐसा दंड अधिनिर्णीत किया जाए जो अपराध की मात्रा और अनुपात के अनुसार हो । अतः हम इस अवश्यम्भावी निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि दोनों अपीलार्थी-अभियुक्तों को उनकी आपराधिकता उन्हें मृत्यु की शास्ति देने के लिए पूरी तरह से योग्य बनाती है ।

35. परिणामतः, हम क्रमशः विचारण न्यायालय द्वारा मृत्यु दंडादेश अधिनिर्णीत करते हुए अभिलिखित किए गए और उच्च न्यायालय द्वारा इसकी पुष्टि करते हुए अनुमोदित किए गए कारणों से सहमत हैं और इनकी पुष्टि करते हैं । हमारे सुविचारित मत में, निचले न्यायालयों द्वारा पारित किए गए निर्णय (निर्णयों) और आदेश (आदेशों) में किसी प्रकार की कोई ऐसी त्रुटि नहीं है जिससे कि अपीलार्थी-अभियुक्तों को अधिनिर्णीत किए गए दंडादेश में हमारे हस्तक्षेप की आवश्यकता हो ।

36. तदनुसार, ये अपीलें खारिज की जाती हैं । रजिस्ट्री को यह निदेश दिया जाता है कि वह प्रत्येक मामले में न्याय-मित्र को 10,000/- रुपए (दस हजार रुपए केवल) की राशि का संदाय करे ।

अपीलें खारिज की गईं ।

जस.

[2015] 4 उम. नि. प. 96

मध्य प्रदेश राज्य

बनाम

अशोक और अन्य, आदि

1 जुलाई, 2015

न्यायमूर्ति पिनाकी चन्द्र घोष और न्यायमूर्ति उदय उमेश ललित

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302 और 149 – हत्या और सामान्य उद्देश्य – प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के साक्ष्य और मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट से यह स्पष्ट होता है कि अभियुक्तों ने तलवार से आक्रमण किया और जलते हुए टायर पीड़ित व्यक्ति पर फेंके जो उनकी ओर से विधि-विरुद्ध जमाव के सदस्य के रूप में सामान्य उद्देश्य के अग्रसरण में की गई तैयारी और अपराध को साबित करता है, अतः, अभियुक्तों को हत्या और सामान्य उद्देश्य के अपराध से दोषमुक्त किया जाना न्यायोचित है

अभियोजन पक्ष के अनुसार टीका राम पुत्र छोटे लाल पांडे अपना कार्य समाप्त करके तारीख 11 अप्रैल, 1989 को लगभग 8.00 बजे अपराह्न में घर वापस आ रहा था । रास्ते में उसे उसका छोटा भाई शीतल प्रसाद मिला । दोनों साइकिल पर सवार थे और अभि. सा. 13 उक्त टीका राम से 10-15 फुट के फासले पर पीछे-पीछे आ रहा था । जब टीका राम तिलवाराघाट पहुंचा, उसे डिब्बू **उर्फ** देवेन्द्र ने उसकी साइकिल पकड़ कर हरि महराज के मकान के सामने रोका । इसके पश्चात् उक्त डिब्बू ने टीका राम पर पेट्रोल उड़ेल दिया और जित्तू **उर्फ** जितेन्द्र ने माचिस से उसमें आग लगा दी । टीका राम जलने लगा और वह घटनास्थल से भागा । उसे वर्तमान प्रत्यर्थियों और अन्य दो व्यक्तियों अर्थात् हरिलाल और बंशीलाल ने घेर लिया । सभी ने उसकी पिटाई करने और उसे जलाने के लिए उकसाया और यह कहा कि वह घटनास्थल से बचकर भाग न जाए । प्रत्यर्थी विधना **उर्फ** रामदास ने उस पर जलता हुआ टायर फेंका । जब टीका राम तड़पता हुआ भाग रहा था, हरिलाल ने उस पर तलवार फेंकी । टीका राम, विनोद के मकान पर जाकर गिर गया । अभि. सा. 3 ने आग बुझाई । इस घटना को अभि. सा. 13 ने देखा जो घर की ओर दौड़ा और उसने टीका राम के जलाए जाने की घटना घर वालों को बताई । परिणामतः, उक्त टीका राम के पुत्र रवीन्द्र कुमार पांडे और लक्ष्मी प्रसाद

पांडे घटनास्थल की ओर दौड़े । टीका राम ने अभि. सा. 4 और अभि. सा. 15 दोनों को यह बताया कि उसे उपरोक्त रूप में जलाया गया है और उपरोक्त व्यक्तियों ने ही उसे जलाया है । इसके पश्चात् टीका राम को मेडिकल कालेज अस्पताल, जबलपुर ले जाया गया । 8.30 बजे अपराह्न में अभिलिखित किए गए उपर्युक्त कथन के अनुसरण में देहाती नालिशी दर्ज कराई गई और आपराधिक मामला रजिस्ट्रीकृत किया गया । टीका राम को आगे उपचार कराए जाने के लिए वार्ड सं. 11 में भेज दिया गया । उसी रात उक्त साक्षी द्वारा पंचनामा तैयार किया गया । तारीख 11 और 12 अप्रैल, 1989 की मध्यरात्रि में कार्यपालक मजिस्ट्रेट एस. पी. मेशराम ने उक्त टीका राम का कथन अभिलिखित किया । उक्त टीका राम की मानसिक स्थिति ठीक होने का सम्यक् प्रमाणन प्राप्त करने के पश्चात् उसका कथन अभिलिखित किया । सम्यक् अन्वेषण किए जाने के पश्चात् आरोप पत्र फाइल किया गया और 10 अभियुक्तों के विचारण के लिए भेजा गया । अभियोजन पक्ष ने 20 साक्षियों की परीक्षा कराई और प्रतिरक्षा पक्ष द्वारा 3 साक्षियों की परीक्षा कराई गई । अभियोजन पक्ष द्वारा मुख्य रूप से मृत्युकालिक कथनों, अभि. सा. 4 और अभि. सा. 15 द्वारा दिए गए मौखिक साक्ष्य तथा अभि. सा. 13 के प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य का अवलंब लिया गया । अभियोजन पक्षकथन को स्वीकार करते हुए विचारण न्यायालय ने सभी अभियुक्तों को दोषसिद्ध ठहराया । अभियुक्त डिब्बू **उर्फ** देवेन्द्र और अभियुक्त जित्तू **उर्फ** जितेन्द्र को भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 302 और धारा 148 के अधीन दोषी पाया गया और अन्य अभियुक्तों को अर्थात् हरिलाल और बंशीलाल सहित वर्तमान प्रत्यर्थियों को दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दोषी पाया गया । अभियुक्त डिब्बू **उर्फ** देवेन्द्र और अभियुक्त जित्तू को दंड संहिता की धारा 302 के अधीन आजीवन कारावास से और दंड संहिता की धारा 148 के अधीन 1 वर्ष के कठोर कारावास से दंडादिष्ट किया । अन्य सभी अभियुक्तों को दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन आजीवन कारावास और दंड संहिता की धारा 147 के अधीन 6 मास के कठोर कारावास से दंडादिष्ट किया । ये अपीलें विशेष इजाजत द्वारा 1995 की दांडिक अपील सं. 170, 841 और 1996 की दांडिक अपील सं. 369 में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, जबलपुर द्वारा तारीख 11 जनवरी, 2007 को पारित उस निर्णय और आदेश के विरुद्ध फाइल की गई हैं जिसके द्वारा प्रत्यर्थी अशोक पुत्र बंशीलाल वेदेही, राजू **उर्फ** राजेन्द्र पुत्र बंशीलाल वेदेही, गुल्लू **उर्फ** राजेश

पुत्र बंशीलाल वेदेही, गौरी शंकर पुत्र बंशीलाल वेदेही, विधना **उर्फ** रामदास पुत्र लल्लूलाल केवट, सुरेन्द्र पुत्र हरिलाल वेदेही को उन पर लगाए गए सभी आरोपों से उच्च न्यायालय द्वारा दोषमुक्त कर दिया गया । उच्च न्यायालय के इस आदेश से व्यथित होकर राज्य ने उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपील की । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के साक्ष्य और शवपरीक्षण रिपोर्ट के आधार पर यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रत्यर्थी उस समय मौजूद थे जब टीका राम को जीवित जलाया जा रहा था । घटनाक्रम से निश्चय ही यह दर्शित होता है कि वे छुपकर प्रतीक्षा कर रहे थे । यह संभव है कि अभियुक्तों में से केवल दो ने टीका राम को आग में जलाया किंतु अन्य अभियुक्तों ने निश्चित रूप से टीका राम का घेराव किया कि वह बच कर न चला जाए । इसके अतिरिक्त, टीका राम पर जलता हुआ टायर और तलवार फेंकने से भी यह उपदर्शित होता है कि अभियुक्तों की अपराध में सक्रिया भूमिका रही है । यदि अभियुक्तों में से एक अभियुक्त तलवार से वार करने के लिए तैयार था, तब भी यह स्पष्ट रूप से अभियुक्तों की तैयारी का स्तर उपदर्शित होता है और हमें ऐसा कोई कारण दिखाई नहीं देता है कि अभियुक्तों को विधिविरुद्ध जमाव का सदस्य नहीं कहा जा सकता । यह एक ऐसा अपराध है जो एक ही प्रयोजन के लिए और इच्छित परिणाम प्राप्त करने के लिए सभी अभियुक्तों द्वारा कारित किया गया है । सम्पूर्ण जमाव का आशय स्पष्ट हो गया है जो घटनास्थल पर उनकी मौजूदगी, अपराध करने की तैयारी और अपराध में भाग लेने जैसे तथ्यों से पूर्णतया सिद्ध हो गया है । यद्यपि न्यायालय ने इस पर गहराई से विचार किया है कि दोषमुक्ति के विरुद्ध की गई अपील पर कार्यवाही करने के दौरान न्यायालय को अत्यंत समझबूझ के साथ हस्तक्षेप करना चाहिए, फिर भी न्यायालय की सुविचारित राय में वर्तमान मामले में उच्च न्यायालय द्वारा व्यक्त किया गया मत तनिक भी कायम रखे जाने योग्य नहीं है और अभिलेख के प्रतिकूल है । (पैरा 11)

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2009 की दांडिक अपील सं. 2096-2098.

1995 की दांडिक अपील सं. 170, 841 और 1996 की दांडिक अपील सं. 369 में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, जबलपुर द्वारा तारीख 11 जनवरी, 2007 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सुश्री वंशजा शुक्ला

प्रत्यर्थी की ओर से श्री अक्षत श्रीवास्तव

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति उदय उमेश ललित ने दिया ।

न्या. ललित – ये अपीलें विशेष इजाजत द्वारा 1995 की दांडिक अपील सं. 170, 841 और 1996 की दांडिक अपील सं. 369 में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, जबलपुर द्वारा तारीख 11 जनवरी, 2007 को पारित उस निर्णय और आदेश के विरुद्ध फाइल की गई हैं जिसके द्वारा प्रत्यर्थी अशोक पुत्र बंशीलाल वेदेही, राजू **उर्फ** राजेन्द्र पुत्र बंशीलाल वेदेही, गुल्लू **उर्फ** राजेश पुत्र बंशीलाल वेदेही, गौरी शंकर पुत्र बंशीलाल वेदेही, विधना **उर्फ** रामदास पुत्र लल्लूलाल केवट, सुरेन्द्र पुत्र हरिलाल वेदेही को उन पर लगाए गए सभी आरोपों से उच्च न्यायालय द्वारा दोषमुक्त कर दिया गया ।

2. अभियोजन पक्ष के अनुसार टीका राम पुत्र छोटे लाल पांडे अपना कार्य समाप्त करके तारीख 11 अप्रैल, 1989 को लगभग 8.00 बजे अपराह्न में घर वापस आ रहा था । रास्ते में उसे उसका छोटा भाई शीतल प्रसाद (अभि. सा. 13) मिला । दोनों साइकिल पर सवार थे और अभि. सा. 13 उक्त टीका राम से 10-15 फुट के फासले पर पीछे-पीछे आ रहा था । जब टीका राम तिलवाराघाट पहुंचा, उसे डिब्बू **उर्फ** देवेन्द्र ने उसकी साइकिल पकड़ कर हरि महराज के मकान के सामने रोका । इसके पश्चात् उक्त डिब्बू ने टीका राम पर पेट्रोल उड़ेल दिया और जित्तू **उर्फ** जितेन्द्र ने माचिस से उसमें आग लगा दी । टीका राम जलने लगा और वह घटनास्थल से भागा । उसे वर्तमान प्रत्यर्थियों और अन्य दो व्यक्तियों अर्थात् हरिलाल और बंशीलाल ने घेर लिया । सभी ने उसकी पिटाई करने और उसे जलाने के लिए उकसाया और यह कहा कि वह घटनास्थल से बचकर भाग न जाए । प्रत्यर्थी विधना **उर्फ** रामदास ने उस पर जलता हुआ टायर फेंका । जब टीका राम तड़पता हुआ भाग रहा था, हरिलाल ने उस पर तलवार फेंकी । टीका राम, विनोद (अभि. सा. 3) के मकान पर जाकर गिर गया । अभि. सा. 3 ने आग बुझाई । इस घटना को अभि. सा. 13 ने देखा जो घर की ओर दौड़ा और उसने टीका राम के जलाए जाने की घटना घर वालों को बताई । परिणामतः, उक्त टीका राम के पुत्र रवीन्द्र कुमार पांडे (अभि. सा. 4) और लक्ष्मी प्रसाद पांडे (अभि. सा. 15) घटनास्थल की ओर दौड़े । टीका राम ने अभि. सा. 4 और अभि. सा. 15 दोनों को यह बताया कि उसे उपरोक्त रूप में जलाया गया है और उपरोक्त व्यक्तियों ने ही उसे जलाया

है । इसके पश्चात् टीका राम को मेडिकल कालेज अस्पताल, जबलपुर ले जाया गया ।

3. सूचना प्राप्त होने पर, पुलिस निरीक्षक आर. पी. सिंह (अभि. सा. 16) आपातकालीन वार्ड पहुंचा और उसने पत्र प्रदर्श पी-30 के अनुसार टीका राम की शारीरिक दशा के बारे में पूछताछ की । डा. ए. सी. नागपाल (अभि. सा. 18) ने यह प्रमाणित किया कि टीका राम अचेत है और वह बोल सकता है । इसके पश्चात् पुलिस निरीक्षक आर. पी. सिंह (अभि. सा. 16) ने उक्त टीका राम का कथन अभिलिखित किया जो निम्न प्रकार है :–

> "श्रीमान, मैं रामनागरा में रहता हूं । आज मैं पेट्रोल पम्प पर अपनी ड्यूटी पूरी करके रामनागरा को जा रहा था । यह घटना हरि महाराज के मकान के सामने तिलवाराघाट पर घटित हुई है । मैं अपनी साइकिल से जा रहा था । मेरे पीछे मेरा भाई आ रहा था । डिब्बू ने मेरी साइकिल पकड़ ली और मुझे रोक लिया तथा मेरे ऊपर एक जग से पेट्रोल उड़ेल दिया और जीतू ने माचिस से आग लगा दी । मैं जलने लगा । हरि, सुरेन्द्र, बिगना, अशोक, बंशी, राजू और बंशी महाराज की बहिन का पुत्र जो कमला नगर में रहता है और जो दाढ़ी रखे हुए है, बंशी का छोटा पुत्र गुल्लू और नगर के अन्य दो-तीन व्यक्तियों ने जिनके नाम मैं नहीं जानता, मुझे घेर लिया । मैं वहां से भागा और पास ही स्थित विनोद कुमार के मकान के एक कमरे में घुस गया और वे सभी चिल्ला रहे थे, 'मारो-मारो साले को, बचने न पाए' और मैं वहां गिर गया । वहां पर बहुत से व्यक्ति मौजूद थे जिन्होंने यह घटना देखी है । यह पुरानी दुश्मनी का मामला है और हमारे और डिब्बू आदि के बीच झगड़ा चल रहा था । आज उक्त दुश्मनी का बदला लेने के लिए उन्होंने मेरे ऊपर पेट्रोल उड़ेल कर मेरी हत्या करने के लिए आग लगाई है । मेरा पूरा शरीर जल गया है । मेरे कपड़े भी जल गए हैं । मुझे रिपोर्ट पढ़कर सुनाई गई है जो उसी प्रकार है जिस प्रकार मैंने बताया है । कृपया इस मामले में छानबीन करें ।"

4. 8.30 बजे अपराह्न में अभिलिखित किए गए उपर्युक्त कथन के अनुसरण में देहाती नालिशी प्रदर्श पी-20 दर्ज कराई गई और आपराधिक मामला रजिस्ट्रीकृत किया गया । टीका राम को आगे उपचार कराए जाने के लिए वार्ड सं. 11 में भेज दिया गया । उसी रात उक्त साक्षी अर्थात्

अभि. सा. 16 द्वारा पंचनामा तैयार किया गया । तारीख 11 और 12 अप्रैल, 1989 की मध्यरात्रि में कार्यपालक मजिस्ट्रेट एस. पी. मेशराम (अभि. सा. 5) ने उक्त टीका राम का कथन प्रदर्श पी-17 अभिलिखित किया । उक्त टीका राम की मानसिक स्थिति ठीक होने का सम्यक् प्रमाणन प्राप्त करने के पश्चात् उसका कथन अभिलिखित किया । वह कथन प्रदर्श पी-17 निम्न प्रकार है :–

> "मैं, तारीख 11 अप्रैल, 1989 को लगभग 8.00 बजे अपराह्न में जबलपुर से अपने घर रामनागरा जा रहा था । डिब्बू **उर्फ** देवेन्द्र ने तिलवाराघाट के निकट मेरे ऊपर पेट्रोल उड़ेल दिया और जित्तू **उर्फ** जितेन्द्र ने माचिस से आग लगा दी । उस समय, मैं सड़क पर अपनी साइकिल से जा रहा था । उन्होंने मुझे रोका और यह अपराध किया । मेरे छोटे भाई शीतल और मनोहर मेरे पीछे लगभग 15 फुट की दूरी पर थे । मेरी डिब्बू और जित्तू के साथ पहले से दुश्मनी चल रही थी । इसलिए, उन्होंने मेरे साथ ऐसा किया है । हरि, बंशी, अशोक, राजू, गौरीशंकर, गुल्लू, सुरेन्द्र और विधना ने मुझ पर हमला किया है ।"

5. तारीख 12 अप्रैल, 1989 को लगभग 8.15 बजे अपराह्न में टीका राम की क्षतियों के कारण मृत्यु हो गई । तारीख 13 अप्रैल, 1989 को डा. डी. के. सकाले (अभि. सा. 17) द्वारा लगभग 10.30 बजे पूर्वाह्न में उक्त टीका राम का शवपरीक्षण किया गया । शवपरीक्षण रिपोर्ट के अनुसार मृतक के शरीर पर निम्न क्षतियां पाई गईं :–

> "मृतक के शरीर पर थर्ड डिग्री वाली दाह क्षतियां कारित हुई थीं जो करोटि पर, गर्दन के चारों ओर, चेहरे पर, कानों और होंठों पर तथा संपूर्ण उदर (जंघाओं के ऊपरी भाग को छोड़कर) पर, वृषण और शिश्न पर तथा दोनों बाहु के ऊपरी भाग पर (किंतु दाएं हाथ की अंगुलियों और नाखूनों को छोड़कर) कारित हुई हैं । बाईं जंघा पर भी थर्ड डिग्री की दाह क्षतियां कारित हुई हैं, दाईं जंघा के चारों ओर (बाईं टांग के पिछले और ऊपरी भाग और दाईं टांग के मध्य भाग को छोड़कर) क्षतियां कारित हुई हैं । बाईं टांग के कुछ भागों में जलने से फफोले पड़ गए हैं । इसी प्रकार दाईं टांग के पीछ की ओर कुछ फफोले हैं । दाह क्षतियों के आस-पास सूजन है । मृतक लगभग 90 प्रतिशत जला हुआ है । दाह क्षतियों के अतिरिक्त मृतक के शरीर पर निम्न क्षतियां भी पाई गईं :–

> वक्ष के पीछे की ओर तिरछा छिन्न घाव । इस घाव की लंबाई 4 इंच, चौड़ाई 1 इंच और अधिकतम गहराई 3/4 इंच पाई गई है । इस घाव में रक्त का थक्का बना हुआ है और इस घाव के बाईं ओर खरोंच है । मृतक के किसी भी आंतरिक अंग में कोई भी क्षति नहीं पाई गई है ।''

6. सम्यक् अन्वेषण किए जाने के पश्चात् आरोप पत्र फाइल किया गया और 10 अभियुक्तों के विचारण के लिए भेजा गया । अभियोजन पक्ष ने 20 साक्षियों की परीक्षा कराई और प्रतिरक्षा पक्ष द्वारा 3 साक्षियों की परीक्षा कराई गई । अभियोजन पक्ष द्वारा मुख्य रूप से मृत्युकालिक कथन प्रदर्श पी-20 और प्रदर्श पी-17, अभि. सा. 4 और अभि. सा. 15 द्वारा दिए गए मौखिक साक्ष्य तथा अभि. सा. 13 के प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य का अवलंब लिया गया । अभियोजन पक्षकथन को स्वीकार करते हुए विचारण न्यायालय ने सभी अभियुक्तों को दोषसिद्ध ठहराया । अभियुक्त डिब्बू **उर्फ** देवेन्द्र और अभियुक्त जित्तू **उर्फ** जितेन्द्र को भारतीय दंड संहिता, 1860 (जिसे संक्षेप में ''दंड संहिता'' कहा गया है) की धारा 302 और धारा 148 के अधीन दोषी पाया गया और अन्य अभियुक्तों को अर्थात् हरिलाल और बंशीलाल सहित वर्तमान प्रत्यर्थियों को दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दोषी पाया गया । अभियुक्त डिब्बू **उर्फ** देवेन्द्र और अभियुक्त जित्तू को दंड संहिता की धारा 302 के अधीन आजीवन कारावास से और दंड संहिता की धारा 148 के अधीन 1 वर्ष के कठोर कारावास से दंडादिष्ट किया । अन्य सभी अभियुक्तों को दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन आजीवन कारावास और दंड संहिता की धारा 147 के अधीन 6 मास के कठोर कारावास से दंडादिष्ट किया ।

7. सभी दोषसिद्ध किए गए अभियुक्तों ने अपनी दोषसिद्धि और दंडादेश को 1995 की दांडिक अपील सं. 170 और 841 तथा 1996 की दांडिक अपील सं. 369 फाइल करते हुए चुनौती दी । इन अपीलों के लंबित रहने के दौरान यह बताया गया है कि अभियुक्त हरिलाल और बंशीलाल की मृत्यु हो गई है और इसीलिए उनकी अपीलें उपशमित घोषित की जाती हैं । उच्च न्यायालय ने अभिलेख का परिशीलन करने के पश्चात् यह निष्कर्ष निकाला कि अभियुक्त डिब्बू **उर्फ** देवेन्द्र और अभियुक्त जित्तू **उर्फ** जितेन्द्र के विरुद्ध अभियोजन पक्षकथन पूर्णतया सिद्ध किया गया है । तथापि, उच्च न्यायालय ने प्रत्यर्थियों को इस आधार पर संदेह का लाभ

दिया कि वे अपराध कारित किए जाने के पश्चात् घटनास्थल पर पहुंचे थे और इसीलिए उनके द्वारा विधिविरुद्ध जमाव गठित किए जाने का आरोप सिद्ध नहीं किया गया । इस संबंध में उच्च न्यायालय ने निम्न प्रकार मत व्यक्त किया है :–

> "अभिलेख पर प्रस्तुत सम्पूर्ण साक्ष्य पर विचार करने पर संदेह के परे यह साबित हो जाता है कि डिब्बू **उर्फ** देवेन्द्र और जित्तू **उर्फ** जितेन्द्र ने अपराध कारित किया है । डिब्बू और जित्तू द्वारा अपराध कारित किया जाना अभियोजक पक्ष द्वारा संदेह के परे साबित किया गया है । अन्य अपीलार्थियों के संबंध में फाइल की गई अपीलों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि वे संदेह का लाभ पाने के हकदार हैं । मृत्युकालिक कथन और देहाती नालिशी में यह वर्णन किया गया है कि अभियुक्त अपराध कारित किए जाने के पश्चात् घटनास्थल पर पहुंचे थे । अतः, उनके द्वारा विधिविरुद्ध जमाव गठित किया जाना सिद्ध नहीं होता है ।"

अभियुक्त जित्तू **उर्फ** जितेन्द्र और डिब्बू **उर्फ** देवेन्द्र की दोषसिद्धि और दंडादेश की पुष्टि करने वाले उच्च न्यायालय के निर्णय को उनके द्वारा चुनौती नहीं दी गई है । इस निर्णय को इन अपीलों में विशेष इजाजत द्वारा उस सीमा तक मध्य प्रदेश राज्य की ओर से चुनौती दी गई है जहां तक वर्तमान प्रत्यर्थियों को सभी आरोपों से दोषमुक्त किया गया है ।

8. राज्य की ओर से हाजिर होने वाली विद्वान् अधिवक्ता सुश्री वंशजा शुक्ला ने यह दलील दी है कि अपराध कारित किए जाने में वर्तमान प्रत्यर्थियों की भूमिका स्पष्ट रूप से मृत्युकालिक कथन तथा प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के परिसाक्ष्य से साबित होती है । शवपरीक्षण के अनुसार पाई गई क्षतियों से भी प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के साक्ष्य का समर्थन होता है जिससे उन अभियुक्तों की भूमिका उपदर्शित होती है जो उच्च न्यायालय द्वारा दोषसिद्ध किए गए अभियुक्तों से भिन्न है । सुश्री शुक्ला ने अपनी दलील में उच्च न्यायालय का जो मत व्यक्त किया है, वह पूर्णतया चलने योग्य नहीं है । प्रत्यर्थियों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् अधिवक्ता श्री अक्षत श्रीवास्तव ने उच्च न्यायालय के निर्णय का समर्थन किया है । यह दलील दी गई है कि मृत्युकालिक कथन में अभिकथित मुख्य भूमिका वर्तमान प्रत्यर्थियों के संबंध में नहीं थी और इसीलिए उन्हें उच्च न्यायालय द्वारा संदेह का लाभ ठीक ही दिया गया ।

सुनवाई के दौरान, यह दलील दी गई कि सुरेन्द्र पुत्र हरिलाल वेदेही (प्रत्यर्थी सं. 6) की मृत्यु इन अपीलों के लंबित रहने के दौरान हो गई थी । राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल को उक्त तथ्य को सुनिश्चित करने का निदेश दिया गया । तद्नुसार प्रत्यर्थी सं. 6 का मृत्यु प्रमाणपत्र अभिलेख पर फाइल किया गया है जिससे यह उपदर्शित होता है कि उसकी मृत्यु तारीख 1 अक्तूबर, 2014 को हुई है । अतः हम यह निदेश देते हैं कि उक्त प्रत्यर्थी सं. 6 के संबंध में कार्यवाहियां उपशमित की जाती हैं ।

9. कथन प्रदर्श पी-20 जिसके आधार पर मामला दर्ज कराया गया था तथा कथन प्रदर्श पी-17 जो कार्यपालक मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किया गया है, टीका राम के मृत्युकालिक कथन हैं । ये दोनों कथन संगत हैं और उनमें वर्तमान प्रत्यर्थियों के नाम दिए गए हैं और टीका राम को घेरने के संबंध में उनकी (प्रत्यर्थियों) भूमिका का उल्लेख किया गया है कि वे चिल्ला रहे थे कि टीका राम को पीटा जाए और उसे छोड़ा न जाए । ऐसे प्रकथनों के आधार पर यह स्वीकार करना असंभावी हो जाता है कि ये प्रत्यर्थी अपराध कारित किए जाने के पश्चात् घटनास्थल पर पहुंचे थे । प्रत्यर्थियों की अपराध में यह भूमिका रही है कि उन्होंने टीका राम को चारों ओर से घेर लिया था और उसे बच कर नहीं जाने दिया । उच्च न्यायालय द्वारा निकाला गया निष्कर्ष अभिलेख के प्रतिकूल है ।

10. इन दोनों कथनों से अभि. सा. 13 की मौजूदगी निर्दिष्ट होती है । अभि. सा. 13 ही वह व्यक्ति है जो तुरंत घर की ओर दौड़ा और उसने घर वालों को यह बताया कि टीका राम को आग में जलाया है । परिणामस्वरूप अभि. सा. 4 और अभि. सा. 15 घटनास्थल पर पहुंचे । इसके पश्चात् टीका राम को अस्पताल पहुंचाया गया । अभि. सा. 13 ने अपने परिसाक्ष्य में यह उल्लेख किया है कि जब टीका राम आग में जल रहा था, प्रत्यर्थी विधना **उर्फ** रामदास ने जलता हुआ टायर उस पर फेंका और मूल अभियुक्त हरिलाल ने उस पर तलवार फेंकी । शवपरीक्षण रिपोर्ट से स्पष्ट रूप से यह दर्शित होता है कि उक्त टीका राम की पीठ में छिन्न घाव कारित हुआ था जिससे उक्त प्रकथन पूर्णतया प्रबलित हो जाता है । अभिलेख का परिशीलन करने पर, हमारा यह निष्कर्ष है कि अभि. सा. 13 की मौजूदगी पूर्णतया सिद्ध हो गई है और हम यह स्वीकार करते हैं कि वह घटना का प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य है । यह उल्लेख करना सुसंगत होगा कि उच्च न्यायालय ने अभि. सा. 13 के परिसाक्ष्य को भी अविश्वसनीय नहीं ठहराया है ।

11. प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के साक्ष्य और शवपरीक्षण रिपोर्ट के आधार पर यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रत्यर्थी उस समय मौजूद थे जब टीका राम को जीवित जलाया जा रहा था । घटनाक्रम से निश्चय ही यह दर्शित होता है कि वे छुपकर प्रतीक्षा कर रहे थे । यह संभव है कि अभियुक्तों में से केवल दो ने टीका राम को आग में जलाया किंतु अन्य अभियुक्तों ने निश्चित रूप से टीका राम का घेराव किया कि वह बच कर न चला जाए । इसके अतिरिक्त, टीका राम पर जलता हुआ टायर और तलवार फेंकने से भी यह उपदर्शित होता है कि अभियुक्तों की अपराध में सक्रिया भूमिका रही है । यदि अभियुक्तों में से एक अभियुक्त तलवार से वार करने के लिए तैयार था, तब भी यह स्पष्ट रूप से अभियुक्तों की तैयारी का स्तर उपदर्शित होता है और हमें ऐसा कोई कारण दिखाई नहीं देता है कि अभियुक्तों को विधिविरुद्ध जमाव का सदस्य नहीं कहा जा सकता । यह एक ऐसा अपराध है जो एक ही प्रयोजन के लिए और इच्छित परिणाम प्राप्त करने के लिए सभी अभियुक्तों द्वारा कारित किया गया है । सम्पूर्ण जमाव का आशय स्पष्ट हो गया है जो घटनास्थल पर उनकी मौजूदगी, अपराध करने की तैयारी और अपराध में भाग लेने जैसे तथ्यों से पूर्णतया सिद्ध हो गया है । यद्यपि हमने इस पर गहराई से विचार किया है कि दोषमुक्ति के विरुद्ध की गई अपील पर कार्यवाही करने के दौरान हमें अत्यंत समझबूझ के साथ हस्तक्षेप करना चाहिए, फिर भी हमारी सुविचारित राय में वर्तमान मामले में उच्च न्यायालय द्वारा व्यक्त किया गया मत तनिक भी कायम रखे जाने योग्य नहीं है और अभिलेख के प्रतिकूल है ।

12. अतः हम यह अपीलें मंजूर करते हैं, उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए दोषमुक्ति के निर्णय और आदेश को अपास्त करते हैं तथा प्रत्यर्थियों के विरुद्ध विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश को प्रत्यावर्तित करते हैं । प्रत्यर्थियों को अधिनिर्णीत दंडादेश भोगने के लिए उन्हें तत्काल अभिरक्षा में लिया जाए ।

अपीलें मंजूर की गईं ।

अस./पा.

[2015] 4 उम. नि. प. 106

वी. के. मिश्रा और एक अन्य

बनाम

उत्तराखंड राज्य और एक अन्य

28 जुलाई, 2015

न्यायमूर्ति टी. एस. ठाकुर, न्यायमूर्ति आर. के. अग्रवाल और
न्यायमूर्ति (श्रीमती) आर. बानुमति

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 304ख और 498क – दहेज मृत्यु – शिकायतकर्ता-मृतका के पिता द्वारा दर्ज कराई गई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में अभियुक्त-प्रत्यर्थियों को संदाय किए गए धन का ब्यौरा और मृतका को दहेज के लिए यातना देने और तंग करने का उल्लेख न होना – जब तक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में किए गए अभिकथनों को गढ़ा जाना उपदर्शित न होता हो, अभियोजन के वृत्तांत को केवल इस आधार पर संदेहास्पद नहीं माना जा सकता है कि उसमें सभी ब्यौरे अंतर्विष्ट नहीं हैं और उसमें अभियोजन पक्षकथन के मोटे-मोटे तथ्यों का उल्लेख होना ही पर्याप्त होगा ।

दंड संहिता, 1860 – धारा 304ख और 498क – दहेज मृत्यु – स्त्री के साथ क्रूरता और उसे तंग किया जाना – साक्ष्य की विश्वसनीयता – शिकायतकर्ता-मृतका के पिता के कथन में अभियुक्तों द्वारा मृतका से दहेज की मांग करने और उसे तंग करने का उल्लेख न होना – मृतका के पिता द्वारा अपीलार्थियों-अभियुक्तों को किए गए धन के संदाय का साक्ष्य सटीक और संगत होने और उसकी पुष्टि बैंक-विवरणी द्वारा किए जाने पर उसके कथन की विश्वसनीयता प्रभावित नहीं होती है क्योंकि एक पिता जो अपनी युवा पुत्री की मृत्यु के कारण स्वयं मानसिक पीड़ा में हो, उससे अपने कथन में प्रत्येक बात का उल्लेख करने की प्रत्याशा नहीं की जा सकती है ।

दंड संहिता, 1860 – धारा 304ख और 498क [सपठित साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 113क और 113ख और दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 3 और 4] – दहेज मृत्यु – अभियोजन पक्ष द्वारा यह साबित कर दिए जाने पर कि मृतका के साथ उसके पति और ससुराल के अन्य व्यक्तियों द्वारा उसकी मृत्यु के कुछ पूर्व क्रूरता की गई थी और उसे तंग किया गया और अभियुक्तों द्वारा उनके विरुद्ध उद्‌भूत

उपधारणा का खंडन करने में असफल रहने पर निचले न्यायालयों द्वारा उनको दोषसिद्ध करते हुए अभिलिखित किए गए एक जैसे निष्कर्षों में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है ।

दंड संहिता, 1860 – धारा 304ख और 498क [सपठित दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 3 और 4] – दहेज मृत्यु – दंडादेश – घटना 18 वर्ष पहले की होने और अभियुक्त-पति द्वारा पहले ही पांच वर्ष से अधिक का कारावास भुगत लेने तथा सास-ससुर की वृद्ध आयु होने की बात पर विचार करते हुए उनको दिए गए आजीवन कारावास को कम करके क्रमशः 10 वर्ष और 7 वर्ष करने से न्याय की पूर्ति हो जाएगी ।

मृतका-अर्चना का विवाह तारीख 28 जून, 1997 को अपीलार्थी-अभियुक्त राहुल मिश्रा के साथ हुआ था । मृतका के पिता ने विवाह से पूर्व और सगाई के पश्चात् तीन अवसरों पर पचास-पचास हजार रुपए और तारीख 11 जुलाई, 1997 को 63,200/- रुपए तथा अर्चना को 2,00,000/- रुपए मूल्य के आभूषण भी दान में दिए थे । अर्चना हनीमून से वापस आने के पश्चात् अपने मायके आई और अपने पिता, माता और भाई को अपने सास-ससुर और पति द्वारा उसे लगातार तंग करने और यातना देने के बारे में कई बार शिकायत की तथा यह भी कहा कि वे उसे दहेज की मांग के संबंध में गालियां देते हैं । तारीख 9 अगस्त, 1997 से तारीख 10 अगस्त, 1997 के बीच अर्चना अपने मायके आई । तारीख 9 अगस्त, 1997 को अर्चना ने अपने भाई संतोष को अपीलार्थियों द्वारा की गई 5,00,000/- रुपए की मांग के बारे में बताया और अभि. सा. 2 ने अर्चना से कहा कि वह अपीलार्थियों से बात करेगा । तारीख 10 अगस्त, 1997 को अपीलार्थी-राहुल अभि. सा. 2 अर्चना के घर आया और उसे अपने घर वापस ले गया । तारीख 10 अगस्त, 1997 को अभि. सा. 2-संतोष कुमार अभियुक्तों के घर गया और उन्हें उनकी 5,00,000/- रुपए की मांग के संबंध में शांत करने की कोशिश की किंतु अभियुक्त अपनी मांग पर अड़े रहे । तारीख 13 अगस्त, 1997 को अभि. सा. 1-हृदय नारायण त्रिपाठी अर्चना के लिए नौकरी ढूंढने के लिए कई संस्थाओं में गया । उसी दिन अर्चना को विष खा लेने के संभावित मामले के रूप में अस्पताल में भर्ती कराया गया और विषाक्तिकरण के कारण उसकी मृत्यु हो गई । अभि. सा. 1-हृदय नारायण त्रिपाठी द्वारा विधि की शरण ली गई और उसकी शिकायत के आधार पर अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 306 और 498क के अधीन पुलिस थाना कोतवाली, देहरादून में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत

की गई । अन्वेषण के पश्चात् अपीलार्थी-अभियुक्तों के विरुद्ध आरोप पत्र फाइल किया गया और विचारण न्यायालय द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख और 498क तथा दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 3 और 4 के अधीन आरोप विरचित किए गए । विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के अधीन दोषसिद्ध किया और उन्हें आजीवन कारावास भोगने का दंडादेश दिया । उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन भी दोषसिद्ध किया गया और उनमें से प्रत्येक को जुर्माने सहित तीन वर्ष का कठोर कारावास भोगने का दंडादेश दिया । उन्हें दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 3 और 4 के अधीन भी दोषसिद्ध किया गया और दंडादिष्ट किया गया । अपीलार्थियों ने दोषसिद्धि के अधिमत से व्यथित होकर उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की, जो विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तों पर अधिरोपित दोषसिद्धि और दंडादेश की पुष्टि करते हुए खारिज कर दी गई । उन्होंने उच्च न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में अपीलें फाइल कीं । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपीलें भागतः मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – वास्तव में, अभि. सा. 1 ने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में अभियुक्तों को संदत्त धन का ब्यौरा नहीं दिया है । किंतु अभि. सा. 1 ने अपनी शिकायत में स्पष्ट रूप से यह उल्लेख किया है कि अपीलार्थी अपने क्रूर व्यवहार से अर्चना को यातना दे रहे थे और अर्चना ने उससे इसकी शिकायत की थी और उसने उसे समझाया था कि हालात से समझौता करो और सौहार्दपूर्ण वातावरण बनाओ । हालांकि, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में दहेज की मांग के बारे में कोई विनिर्दिष्ट उल्लेख नहीं है, फिर भी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में अभिकथित क्रूरता और यातना धन या आभूषणों की मांग के संबंध में ही की जा सकती थी । अभियुक्त-राहुल मिश्रा के साथ अर्चना का विवाह तारीख 28 जून, 1997 को ही संपन्न हुआ था और अर्चना को अभी अपनी ससुराल में सामंजस्य बिठाना था । दोनों ही परिवार लगभग एक जैसी सामाजिक और आर्थिक हैसियत के थे । प्रतिरक्षा पक्ष का यह पक्षकथन नहीं है कि अभिकथित क्रूरता दांपत्य गृह की सामान्य खटपट के कारण होने वाली वैवाहिक कहा-सुनी थी । जैसाकि पहले उल्लेख किया गया है, अभि. सा. 1 द्वारा विवाह से पूर्व और विवाह के पश्चात् भी तारीख 11 जुलाई, 1997 को धन दिया गया था । इस पृष्ठभूमि में अवलोकन करने पर अभिकथित क्रूरता और यातना देने की बात केवल धन या आभूषण की मांग के संदर्भ में ही हो सकती थी । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट का

अभिप्राय विश्वकोश होना नहीं है और न ही यह प्रत्याशा की जाती है कि इसमें अभियोजन पक्षकथन के सभी ब्यौरे अंतर्विष्ट हों । अभियोजन पक्षकथन के मोटे-मोटे तथ्यों का प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में उल्लेख किया जाना ही पर्याप्त होगा । दर्दनाक घटना के कुछ घंटों के भीतर ही शिकायत दर्ज कराई गई थी । अभि. सा. 1 ने छह सप्ताह पहले ही विवाह हुई अपनी युवा पुत्री को अस्वाभाविक परिस्थितियों में खोया था । विवाह के कुछ दिनों के भीतर ही पुत्री की मृत्यु का पिता-अभि. सा. 1 के मस्तिष्क पर प्रभाव किसी मानदंड द्वारा नहीं आंका जा सकता है । रिपोर्ट दर्ज कराते समय अभि. सा. 1 गहरे सदमे में और मानसिक रूप से अशांत रहा होगा । अभि. सा. 1 अपनी युवा पुत्री की मृत्यु के संताप में धन के संदाय के सभी ब्यौरों और उसकी पुत्री को दहेज के लिए तंग करने की बात का वर्णन नहीं कर सका होगा । जब तक तथ्यों को गढ़ने का उपदर्शन न हो, अभियोजन के वृत्तांत को केवल इस आधार पर संदेहास्पद नहीं माना जा सकता है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में सभी ब्यौरे अंतर्विष्ट नहीं हैं । (पैरा 11 और 12)

अभि. सा. 1 ने अपने साक्ष्य में स्पष्ट रूप से यह कथन किया है कि विवाह से एक वर्ष पूर्व उसने 2,50,000/- रुपए में अपनी भूमि बेची थी और उसने यह कथन किया है कि विवाह से तीन-चार माह पूर्व उसने बैंक से धन निकाला था । अभि. सा. 1 ने यह भी कथन किया है कि उसने विवाह से एक वर्ष पूर्व अपने भविष्य निधि खाते से 1,00,000/- रुपए निकाले थे और यह धन सेंट्रल बैंक, डी. बी. एस. महाविद्यालय शाखा के अपने खाते में जमा किया था और जब भी उसे आवश्यकता पड़ती, वह अपने खाते से धन निकाल लेता था । अभि. सा. 1 ने अपने साक्ष्य में अपीलार्थियों को संदत्त किए गए धन अर्थात् 11,000/- रुपए और 15,000/- रुपए की रकम जो "टीके" की रस्म पर दी गई थी, तीन अलग-अलग तारीखों को प्रत्येक पर 50,000/- रुपए दिए गए थे, 63,000/- रुपए की रकम अर्चना के सावधि जमा खाते में रखी गई थी जो परिपक्व हो गई थी और उसे भी निकालकर तारीख 11 जुलाई, 1997 को अपीलार्थियों को दिया गया था । अपीलार्थियों को रकम देने के संबंध में अभि. सा. 1 का साक्ष्य सटीक और संगत है और बैंक विवरणियों द्वारा पर्याप्त रूप से पुष्टि होती है । अभि. सा. 1 के कथन में अपीलार्थियों को संदत्त धन के ब्यौरे और दहेज की मांग तथा अर्चना के साथ की गई क्रूरता और उसे तंग करने की बात का उल्लेख न होने से अभि. सा. 1 की विश्वसनीयता प्रभावित नहीं होती है । उच्च न्यायालय द्वारा ठीक ही यह मत व्यक्त किया गया है कि किसी पिता से उस समय सभी बातों का

उल्लेख करने की प्रत्याशा नहीं की जा सकती जब वह अपनी पुत्री की मृत्यु के कारण स्वयं मानसिक पीड़ा में हो । (पैरा 20)

प्रतिरक्षा पक्ष ने तीन दस्तावेजों का अधिक अवलंब लिया है – (i) मृतका द्वारा लिखा गया आत्महत्या-टिप्पण ; (ii) बक्से में पाया गया अभिकथित अंतर्देशीय पत्र और अन्वेषण में चूक ; और (iii) यह पत्र कथित रूप से मृतका-विपदग्रस्त द्वारा अपने बहनोई को लिखा गया था । अपीलार्थियों ने जोरदार रूप से यह दलील दी कि अभि. सा. 14-अन्वेषक अधिकारी उपरोक्त तीनों दस्तावेजों के संबंध में ऋजु अन्वेषण करने में असफल रहा और यह दलील दी कि ये तीनों दस्तावेज दहेज की मांग के विषय में विलंबित और परस्पर-विरोधाभासी साक्ष्य के कारण और अधिक महत्वपूर्ण हो गए हैं । जहां तक आत्महत्या-टिप्पण का संबंध है, अर्चना ने कथित रूप से यह कहा था कि वह "आत्महत्या" करने जा रही है क्योंकि उसकी मानसिक दशा सही नहीं है और उसके इस कृत्य के लिए किसी व्यक्ति को उत्तरदायी न ठहराया जाए । यह उल्लेख करना आवश्यक है कि आत्महत्या-टिप्पण अन्वेषण के दौरान सामने नहीं आया था और इसे बाद में अपीलार्थियों द्वारा प्रस्तुत किया गया था । जब अभि. सा. 1 (अर्चना का पिता) का आत्महत्या-टिप्पण से सामना कराया गया, तो अभि. सा. 1 ने इसको अर्चना के हस्तलेख में होने की बात से इनकार किया । अपीलार्थियों ने आत्महत्या-टिप्पण अर्चना के हस्तलेख में होने की बात को साबित करने के लिए कोई कार्रवाई नहीं की । यदि आत्महत्या-टिप्पण का असली होना मान भी लिया जाए, तब भी वास्तविकता यह है कि अर्चना की मृत्यु अस्वाभाविक थी । आत्महत्या-टिप्पण की अंतर्वस्तुओं से अभि. सा. 1 और 2 के संगत बयान पर प्रभाव नहीं पड़ता है । अंतर्देशीय प्रत्र ख-7/1 अन्वेषण के दौरान प्रकट नहीं हुआ था अपितु इसे अभियुक्तों द्वारा तारीख 29 अगस्त, 1997 को फाइल की गई एक जमानत की अर्जी के साथ प्रस्तुत किया गया था । उसके पश्चात् अभियुक्तों द्वारा किए गए अनुरोध पर अन्वेषक अधिकारी को इस पर अन्वेषण करने के लिए निदेशित किया गया । इस अंतर्देशीय पत्र का अन्वेषण के दौरान प्रकटीकरण नहीं हुआ था, अपितु इस अंतर्देशीय पत्र के साथ-साथ उस पत्र को भी जो अभिकथित रूप से अर्चना द्वारा अपने बहनोई को लिखा गया था, अर्चना के बहनोई ने कथित रूप से अर्चना के सूटकेस से निकालकर दिया था । वह बहनोई जिसने कथित रूप से इन पत्रों को प्रकट किया था, उसकी न्यायालय में परीक्षा नहीं कराई गई । अभियुक्तों द्वारा इस बात का कोई स्पष्टीकरण

नहीं दिया गया है कि यह पत्र अन्वेषक अधिकारी को क्यों नहीं सौंपा गया था । इस न्यायालय ने अंतर्देशीय पत्र के उद्भव स्थान के बारे में भी परिशीलन किया और उक्त पत्र पर डाकघर की मुहर स्पष्ट नहीं है । अभि. सा. 14-अन्वेषक अधिकारी ने विनिर्दिष्ट रूप से यह कथन किया है कि उसने यह अभिनिश्चित करने की कोशिश की थी कि अंतर्देशीय पत्र किस डाकघर से प्रेषित किया गया था किंतु वह इसकी पहचान नहीं कर सका । जब अंतर्देशीय पत्र पर लगी मुहर स्पष्ट ही नहीं थी, अन्वेषक अधिकारी को उक्त अंतर्देशीय पत्र के संबंध में आगे अन्वेषण न करने के लिए दोष नहीं दिया जा सकता है । इस तथ्य से कि इस अंतर्देशीय पत्र को तारीख 29 अगस्त, 1997 को जमानत की अर्जी के साथ प्रस्तुत किया गया था, उक्त पत्र की असलियत के बारे में संदेह उत्पन्न होता है । जब जमानत की अर्जी फाइल की गई थी, उस समय तक संभवतः विधिक परामर्श प्राप्त हो गया होगा और बातचीत हो गई होगी । संभाव्य प्रतिरक्षा के लिए साक्ष्य सृजित करने हेतु ऐसे अंतर्देशीय पत्र को गढ़ने की संभाव्यता से इनकार नहीं किया जा सकता है और निचले न्यायालयों ने उक्त पत्र को नामंजूर करके ठीक ही एक जैसे निष्कर्ष अभिलिखित किए हैं । (पैरा 28, 30 और 33)

जहां अभियोजन पक्ष ने यह दर्शित किया हो कि मृतका के साथ उसकी "मृत्यु से कुछ पूर्व" पति या ससुराल वालों ने दहेज के संबंध में क्रूरता की थी या तंग किया था, वहां साक्ष्य अधिनियम की धारा 113ख के अधीन उपधारणा उद्भूत होती है और न्यायालय यह उपधारणा करेगा कि ऐसा व्यक्ति जिसने किसी दहेज की मांग के संबंध में स्त्री के साथ क्रूरता की थी या उसको तंग किया था, उसने दहेज मृत्यु कारित की थी । ऐसे मामलों में जो उपधारणा उद्भूत होती है, अभियुक्त द्वारा उसका खंडन किया जा सकता है । अभियोजन पक्ष ने युक्तियुक्त संदेह के परे यह सिद्ध किया है कि अर्चना की "मृत्यु से कुछ पूर्व" उसके पति और उसके ससुराल वालों द्वारा दहेज की मांग के संबंध में उसके साथ क्रूरता की थी और उसको तंग किया था । अभियुक्त साक्ष्य अधिनियम की धारा 113ख के अधीन उद्भूत उपधारणा का खंडन करने में सफल नहीं रहे हैं । अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के अधीन दोषसिद्ध करते हुए निचले न्यायालयों के एक जैसे निष्कर्ष साक्ष्य के उचित विवेचन और विश्वासप्रद कारणों पर आधारित हैं । निचले न्यायालयों ने अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख और 498क तथा दहेज प्रतिषेध

अधिनियम की धारा 3 और 4 के अधीन ठीक ही दोषसिद्ध किया है और भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन अधिकारिता का प्रयोग करते हुए यह न्यायालय अपीलार्थियों की दोषसिद्धि में हस्तक्षेप करने का कोई आधार नहीं पाता है । (पैरा 38 और 39)

कारागार के अभिलेख के अनुसार, अभियुक्त राहुल मिश्रा पांच वर्ष से अधिक समय से अभिरक्षा में है जिसमें परिहार भी सम्मिलित है । मामले के तथ्यों और परिस्थितियों तथा घटना वर्ष 1997 में घटित हुई थी और अभियुक्त राहुल मिश्रा पांच वर्ष से अधिक समय से अभिरक्षा में है, को ध्यान में रखते हुए, यदि उसे दिए गए आजीवन कारावास को कम करके दस वर्ष की अवधि का कारावास किया जाता है तो न्याय की पूर्ति हो जाएगी । अपीलार्थी वी. के. मिश्रा और नीलिमा मिश्रा में से प्रत्येक ने एक वर्ष से अधिक अवधि का कारावास भुगत लिया है । अपीलार्थी सं. 1 और 2 की आयु लगभग 70 वर्ष और 64 वर्ष है और यह कहा गया है कि वे विभिन्न रोगों से ग्रस्त हैं । उनकी आयु और उनके रोगों तथा मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए अपीलार्थी वी. के. मिश्रा और नीलिमा मिश्रा पर प्रत्येक पर अधिरोपित आजीवन कारावास को भी कम करके सात वर्ष किया जाता है । (पैरा 41)

अवलंबित निर्णय

		पैरा
[2015]	[2015] 1 एस. सी. आर. 29 : **शेर सिंह** उर्फ **प्रतापा** बनाम **हरियाणा राज्य** ;	37
[2015]	2015 (3) स्केल 186 : **रमाकांत मिश्रा** उर्फ **लालू आदि** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ;	37
[2013]	(2013) 4 एस. सी. सी. 177 : **कुलवंत सिंह और अन्य** बनाम **पंजाब राज्य** ;	40
[2005]	(2005) 9 एस. सी. सी. 283 : **सुनील कुमार और अन्य** बनाम **राजस्थान राज्य** ;	25
[1999]	(1999) 8 एस. सी. सी. 715 : **कर्नाटक राज्य** बनाम **के. याराप्पा रेड्डी** ।	32

निर्दिष्ट निर्णय

[2015]	2015 (1) स्केल 498 : **टोमासो बरुनो और एक अन्य** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ;	31
[2009]	(2009) 14 एस. सी. सी. 541 : **मुस्सउद्दीन अहमद** बनाम **असम राज्य** ।	31

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2012 की दांडिक अपील सं. 1247 और इसके साथ 2012 की दांडिक अपील सं. 1248.

2002 की दांडिक अपील सं. 42 में उत्तराखंड उच्च न्यायालय, नैनीताल के तारीख 26 सितम्बर, 2011 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से सर्वश्री के. टी. एस. तुलसी, सिद्धार्थ लूथरा, ज्येष्ठ काउंसेल, एम. ए. चिन्नासामी, वी. सेंथिल कुमार और सत्यवान राठी

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री आर. के. दास, ज्येष्ठ अधिवक्ता, मुकेश गिरी, अपर महाधिवक्ता, दिनेश कुमार गर्ग, दीपक मिश्रा, भीम प्रताप सिंह, डा. अभिषेक अत्रे, सुमित राजोरा और राज कमल

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति (श्रीमती) आर. बानुमति ने दिया ।

न्या. (श्रीमती) बानुमति – ये अपीलें 2002 की दांडिक अपील सं. 42 में नैनीताल स्थित उत्तराखंड उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 26 सितम्बर, 2011 को पारित किए गए उस निर्णय से उद्‌भूत हुई हैं, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने अपीलार्थियों की भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख और 498क तथा दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 3 और 4 के अधीन की गई दोषसिद्धि की पुष्टि की और उनमें से प्रत्येक पर आजीवन कारावास का दंडादेश अधिरोपित किया ।

2. वे संक्षिप्त तथ्य निम्नलिखित हैं जिनको लेकर ये अपीलें फाइल की गई हैं – मृतका-अर्चना का विवाह तारीख 28 जून, 1997 को राहुल

मिश्रा के साथ हुआ था । मृतका के पिता डा. हृदय नारायण त्रिपाठी ने विवाह से पूर्व और सगाई के पश्चात् तीन अवसरों पर पचास-पचास हजार रुपए और तारीख 11 जुलाई, 1997 को 63,200/- रुपए तथा अर्चना को 2,00,000/- रुपए मूल्य के आभूषण भी दान में दिए थे । अर्चना हनीमून से वापस आने के पश्चात् अपने मायके आई और अपने पिता, माता और भाई को अपने सास-ससुर और पति द्वारा उसे लगातार तंग करने और यातना देने के बारे में कई बार शिकायत की तथा यह भी कहा कि वे उसे दहेज की मांग के संबंध में गालियां देते हैं । तारीख 9 अगस्त, 1997 से तारीख 10 अगस्त, 1997 के बीच अर्चना अपने मायके आई । तारीख 9 अगस्त, 1997 को अर्चना ने अपने भाई-संतोष (अभि. सा. 2) को अपीलार्थियों द्वारा की गई 5,00,000/- रुपए की मांग के बारे में बताया और अभि. सा. 2 ने अर्चना से कहा कि वह अपीलार्थियों से बात करेगा । तारीख 10 अगस्त, 1997 को अपीलार्थी-राहुल अर्चना के घर आया और उसे अपने घर वापस ले गया । तारीख 10 अगस्त, 1997 को अभि. सा. 2-संतोष कुमार अभियुक्तों के घर गया और उन्हें उनकी 5,00,000/- रुपए की मांग के संबंध में शांत करने की कोशिश की किंतु अभियुक्त अपनी मांग पर अड़े रहे । तारीख 13 अगस्त, 1997 को अभि. सा. 1-हृदय नारायण त्रिपाठी अर्चना के लिए नौकरी ढूंढने के लिए कई संस्थाओं में गया । उसी दिन अर्चना को विष खा लेने के संभावित मामले के रूप में अस्पताल में भर्ती कराया गया और विषाक्तिकरण के कारण उसकी मृत्यु हो गई । अभि. सा. 1-हृदय नारायण त्रिपाठी द्वारा विधि की शरण ली गई और उसकी शिकायत के आधार पर अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 306 और 498क के अधीन पुलिस थाना कोतवाली, देहरादून में 1997 का प्रथम इत्तिला रिपोर्ट मामला सं. 571 रजिस्ट्रीकृत किया गया । अन्वेषण के पश्चात् अपीलार्थी-अभियुक्तों के विरुद्ध आरोप पत्र फाइल किया गया और विचारण न्यायालय द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख और 498क तथा दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 3 और 4 के अधीन आरोप विरचित किए गए ।

3. अभियोजन पक्ष ने अभियुक्तों के विरुद्ध आरोपों को सिद्ध करने के लिए 14 साक्षियों की परीक्षा कराई । जब अभियुक्तों से दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अपराध में आलिप्त करने वाले साक्ष्य और परिस्थितियों के बारे में प्रश्न किए गए तो अभियुक्तों ने दहेज की कोई मांग करने की बात से इनकार किया और यह अभिवाक् किया कि वे निर्दोष हैं । विचारण न्यायालय-अपर सेशन न्यायाधीश, देहरादून ने साक्ष्य पर

विचार करने के पश्चात् तारीख 4 फरवरी, 2002 के निर्णय द्वारा अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के अधीन दोषसिद्ध किया और उन्हें आजीवन कारावास भोगने का दंडादेश दिया । अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन भी दोषसिद्ध किया गया और उनमें से प्रत्येक को तीन वर्ष का कठोर कारावास भोगने के साथ-साथ 2,000/- रुपए के जुर्माने का, व्यतिक्रम खंड सहित, दंडादेश दिया । उन्हें दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 3 और 4 के अधीन भी दोषसिद्ध किया गया और प्रत्येक को एक वर्ष का कठोर कारावास भोगने के साथ-साथ 1,000/- रुपए के जुर्माने का, व्यतिक्रम खंड सहित, दंडादेश दिया । सभी दंडादेश साथ-साथ चलने का आदेश किया गया । अपीलार्थियों ने दोषसिद्धि के अधिमत से व्यथित होकर उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की, जो विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तों पर अधिरोपित दोषसिद्धि और दंडादेश की पुष्टि करते हुए खारिज कर दी गई ।

4. अपीलार्थियों की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि मृतका के पिता द्वारा दर्ज कराई गई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट या पुलिस द्वारा अभिलिखित किए गए उसके पूर्ववर्ती कथन में न तो अपीलार्थियों द्वारा की गई दहेज की मांग और न ही उसकी पुत्री को किसी प्रकार से तंग करने की बात का उल्लेख है । यह दलील दी गई कि अभि. सा. 2-मृतका के भाई ने तारीख 18 अगस्त, 1997 को अर्थात् अर्चना की मृत्यु के पांच दिन पश्चात् पहली बार यह कहते हुए मिथ्या कथन किया कि मृतका के ससुराल वाले 5,00,000/- रुपए की मांग कर रहे थे और इस मांग के संबंध में क्रूरता और तंग करने के भी अभिकथन किए । यह दलील दी गई कि अभि. सा. 2 अभिकथित दहेज की मांग और क्रूरता करने की तारीख से आठ दिन तक मौन रहा और ऐसी बात होते हुए विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय ने दोषसिद्धि का अधिमत अभिलिखित करने के लिए अभि. सा. 1 और 2 के साक्ष्य का अवलंब लेकर गलती की है । यह दलील दी गई कि आत्महत्या-टिप्पण और मृतका द्वारा अपने बहनोई को लिखे गए पत्र के विषय में संपूर्ण अन्वेषण त्रुटिपूर्ण था और इस बारे में अर्थात् मृतका को प्राप्त तारीख 10 अगस्त, 1997 के अंतर्देशीय पत्र के बारे में कोई विस्तृत अन्वेषण नहीं किया गया जिसमें, अपीलार्थियों के अनुसार, एक हताश प्रेमी से मिली धमकियां अंतर्विष्ट थीं तथा उल्टी के जो नमूने लिए गए थे उन्हें या तो बदल दिया गया था या उनके साथ छेड़छाड़ की गई थी । जोरदार रूप से यह दलील दी गई कि निचले न्यायालयों ने अभि. सा. 1, 2 और 3 के साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि करके ठीक नहीं किया है,

जिनका साक्ष्य पूरी तरह से अनुश्रुत साक्ष्य था तथा विरोधाभासयुक्त था और इस प्रकार यह स्पष्ट रूप से सोच-समझकर दिया गया साक्ष्य होने के अतिरिक्त विश्वसनीय साक्ष्य नहीं था ।

5. प्रत्यर्थियों की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि अभियोजन पक्ष ने दहेज की मांग को साबित करने के लिए सटीक और संगत साक्ष्य प्रस्तुत किया था तथा मृतका-अर्चना एक अति शिक्षित और संवेदनशील लड़की थी और उसने अपने जीवन का अंत केवल अपीलार्थियों की दहेज की भूख के कारण किया और अपीलार्थियों ने दहेज की मांग के संबंध में उसके साथ क्रूरता की थी और उसको तंग किया था । यह दलील दी गई कि विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय ने साक्ष्य का उचित रूप से मूल्यांकन करने के उपरांत ही अपीलार्थियों को दोषसिद्ध किया तथा दोषसिद्धि के अधिमत और अपीलार्थियों पर अधिरोपित कारावास के दंडादेश में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है ।

6. हमने पक्षकारों की ओर से विद्वान् काउंसेलों द्वारा दी गई दलीलों पर गंभीरतापूर्वक विचार किया और आक्षेपित निर्णय तथा अभिलेख की सामग्री का परिशीलन किया ।

7. भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख को लागू करने के लिए आवश्यक संघटक निम्नलिखित हैं :–

1. स्त्री की मृत्यु दाह या शारीरिक क्षति या अन्यथा द्वारा सामान्य परिस्थिति से भिन्न परिस्थिति में कारित हुई हो ।

2. ऐसी मृत्यु उसके विवाह के सात वर्ष के भीतर कारित हुई हो ।

3. उसके साथ उसके पति या उसके पति के किसी नातेदार द्वारा क्रूरता की गई थी या उसको तंग किया गया था ।

4. ऐसी क्रूरता या तंग करना दहेज की मांग के लिए या उसके संबंध में हो ।

5. यह दर्शित किया गया हो कि स्त्री के साथ ऐसी क्रूरता या उसे तंग उसकी मृत्यु के कुछ पूर्व किया गया था ।

ऊपर वर्णित आवश्यक संघटकों का सबूत होने पर न्यायालय के लिए यह आबद्धकर हो जाता है कि वह यह उपधारणा करे कि अभियुक्त ने दहेज मृत्यु कारित की है । साक्ष्य अधिनियम की धारा 113ख और भारतीय दंड

संहिता की धारा 304ख के संयुक्त वाचन से यह दर्शित होता है कि यह दर्शाने के लिए सामग्री का होना आवश्यक है कि स्त्री की मृत्यु से कुछ पूर्व ऐसी विपदग्रस्त के साथ क्रूरता की गई थी या उसे तंग किया गया था । "कुछ पूर्व" एक सापेक्ष पद है और यह प्रत्येक मामले की परिस्थिति पर निर्भर करेगा और ऐसा कोई नियमनिष्ठ सिद्धांत अधिकथित नहीं किया जा सकता है कि "घटना से कुछ पूर्व" वाली अवधि का गठन किन बातों से होगा । दहेज की मांग के संबंध में क्रूरता के तथ्यों तथा मृत्यु के बीच एक सन्निकट सजीव संबंध विद्यमान होना आवश्यक है । यदि क्रूरता की अभिकथित घटना समय के हिसाब से दूरस्थ है और संबंधित स्त्री के मानसिक संतुलन को खराब न करने के लिए बहुत पुरानी हो गई है, तब इसका कोई महत्व नहीं होगा । अभिलेख के साक्ष्य और सामग्री की यह परीक्षा करनी होगी कि क्या यह साबित करने के लिए साक्ष्य है कि "घटना से कुछ पूर्व" मृतका-अर्चना के साथ दहेज की मांग के संबंध में क्रूरता की गई थी और उसे तंग किया गया था और क्या निचले न्यायालयों ने अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के अधीन दोषसिद्ध करके ठीक किया है ।

8. मृतका के पिता, अभि. सा. 1-डा. ह्रदय नारायण त्रिपाठी ने यह कथन किया कि अर्चना अति शिक्षित अर्थात् एम. एससी. बी. एड. लड़की थी और उसका तारीख 28 जून, 1997 को राहुल मिश्रा के साथ विवाह हुआ था । इस साक्षी ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि तारीख 7 फरवरी, 1997 को उसकी पुत्री-अर्चना की सगाई के पश्चात् दूल्हे पक्ष की ओर से मोटर साइकिल, 2,00,000/- रुपए आदि की दहेज की मांग की जाने लगी । अभि. सा. 1 ने अपने साक्ष्य में यह कथन किया कि अभियुक्त व्यक्तियों को विवाह से पूर्व और विवाह के पश्चात् भी रकम दी गई थी – (क) तारीख 24 फरवरी, 1997 को 50,000/-रुपए, (ख) तारीख 14 मार्च, 1997 को 50,000/- रुपए, (ग) तारीख 5 मई, 1997 को 50,000/- रुपए और (घ) 11 जुलाई, 1997 को 63,200/- रुपए दिए गए थे और उसने अपनी भूमि बेचकर तथा अपने साधारण भविष्य निधि से धन निकालकर यह धन जुटाया था । अभि. सा. 1 ने यह भी कथन किया कि टीवी, वाशिंग मशीन, डाइनिंग टेबल, कुर्सियों और अलमारी आदि की मांग की गई थी । उसने यह कथन किया कि "पाग़फेरा" के तीन दिन पश्चात् उसकी पुत्री आई और उसने बताया कि अपीलार्थी शेष रकम की मांग करते हुए उसके साथ क्रूर व्यवहार कर रहे हैं । अभि. सा. 1 ने अपनी पुत्री से कहा कि क्योंकि

उसके पास अभी कोई धन नहीं है और वह उन्हें अपने वेतन से 10,000/- रुपए दे देगा । अर्चना ने अपने पिता से कहा कि उसके अपने खाते से रकम निकालकर अपीलार्थियों के मुंह पर मारो और उनका मुंह बंद करो और तद्नुसार उन्होंने अपीलार्थियों को 63,200/- रुपए का संदाय किया तथा अपीलार्थी अभी भी असंतुष्ट थे और नया कारबार आरंभ करने के लिए धन की मांग की गई । मृतका-अर्चना ने फोन पर भी अपने माता-पिता को बताया कि उसके ससुराल वाले एक नया कारबार आरंभ करने के लिए उस पर धन लाने का दबाव डाल रहे हैं । अभि. सा. 1 ने यह कथन किया कि जुलाई, 1997 के अंतिम सप्ताह में अपीलार्थी वी. के. मिश्रा ने नया कारबार आरंभ करने के लिए दूरभाष पर धन की मांग की और मांग पूरी करने में अभि. सा. 1 की असमर्थता के कारण अभियुक्त व्यक्तियों का अर्चना के प्रति व्यवहार और खराब हो गया और उन्होंने उसे मायके में फेंक आने की धमकी दी ।

9. अभि. सा. 1 ने आगे यह कथन किया कि अर्चना तनाव महसूस कर रही थी और एक दृढ़संकल्प लड़की होने के कारण उसने नौकरी करने का विनिश्चय किया और तारीख 6 अगस्त, 1997 से दो या तीन दिन पूर्व रात्रि में वह अपने शैक्षणिक योग्यता के प्रमाणपत्र और अन्य सामग्री लेने के लिए अपने मायके आई । अभि. सा. 1 ने यह कथन किया कि तारीख 13 अगस्त, 1997 को वह अपनी पुत्री के लिए नौकरी ढूंढने के लिए केन्द्रीय विद्यालय के साथ-साथ भारतीय पट्रोलियम संस्थान गया और वह सायंकाल में अपने प्रयासों के बारे में अपनी पुत्री को सूचित करना चाहता था कि कहीं कोई रिक्त-स्थान नहीं है । किंतु इससे पूर्व अभि. सा. 1 ने अपनी पत्नी को फोन किया, जिसने उसे कहा कि तुरंत दून अस्पताल पहुंचो क्योंकि अर्चना गंभीर रूप से बीमार है और जब वह अस्पताल पहुंचा तो अपीलार्थी वी. के. मिश्रा द्वारा उसे बताया गया कि अर्चना ने विष खा लिया है और उसकी मृत्यु हो गई है । अभि. सा. 1 ने यह कथन किया कि उसका ज्येष्ठ पुत्र संतोष कुमार (अभि. सा. 2) तारीख 15 अगस्त, 1997 को बम्बई से आया था और उसे भी उसने अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा अर्चना से 5,00,000/- रुपए की मांग करने के बारे में बताया था ।

10. शिकायतकर्ता-अभि. सा. 1 के साक्ष्य को अपीलार्थियों द्वारा यह दलील देते हुए चुनौती दी गई कि उसके द्वारा दर्ज कराई गई शिकायत में यह उल्लेख नहीं है कि कभी किसी दहेज की मांग की गई थी और दहेज की मांग का अभिकथन झूठा है, क्योंकि इसका न तो प्रथम इत्तिला रिपोर्ट

में और न ही अन्वेषक अधिकारी द्वारा अभिलिखित किए गए उसके कथन में उल्लेख है । यह भी दलील दी गई कि अभि. सा. 1 द्वारा दहेज के संदाय का ब्यौरा भी न तो प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में और न ही अपने कथन में स्पष्ट किया गया है तथा न्यायालय में दिया गया साक्ष्य केवल बढ़ा-चढ़ाकर दिया गया साक्ष्य है और इसे कोई महत्व नहीं दिया जा सकता है ।

11. वास्तव में, अभि. सा. 1 ने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में अभियुक्तों को संदत्त धन का ब्यौरा नहीं दिया है । किंतु अभि. सा. 1 ने अपनी शिकायत में स्पष्ट रूप से यह उल्लेख किया है कि अपीलार्थी अपने क्रूर व्यवहार से अर्चना को यातना दे रहे थे और अर्चना ने उससे इसकी शिकायत की थी और उसने उसे समझाया था कि हालात से समझौता करो और सौहार्दपूर्ण वातावरण बनाओ । हालांकि, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में दहेज की मांग के बारे में कोई विनिर्दिष्ट उल्लेख नहीं है, फिर भी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में अभिकथित क्रूरता और यातना धन या आभूषणों की मांग के संबंध में ही की जा सकती थी । अभियुक्त-राहुल मिश्रा के साथ अर्चना का विवाह तारीख 28 जून, 1997 को ही संपन्न हुआ था और अर्चना को अभी अपनी ससुराल में सामंजस्य बिठाना था । दोनों ही परिवार लगभग एक जैसी सामाजिक और आर्थिक हैसियत के थे । प्रतिरक्षा पक्ष का यह पक्षकथन नहीं है कि अभिकथित क्रूरता दांपत्य गृह की सामान्य खटपट के कारण होने वाली वैवाहिक कहा-सुनी थी । जैसाकि पहले उल्लेख किया गया है, अभि. सा. 1 द्वारा विवाह से पूर्व और विवाह के पश्चात् भी तारीख 11 जुलाई, 1997 को धन दिया गया था । इस पृष्ठभूमि में अवलोकन करने पर अभिकथित क्रूरता और यातना देने की बात केवल धन या आभूषण की मांग के संदर्भ में ही हो सकती थी ।

12. प्रथम इत्तिला रिपोर्ट का अभिप्राय विश्वकोश होना नहीं है और न ही यह प्रत्याशा की जाती है कि इसमें अभियोजन पक्षकथन के सभी ब्यौरे अंतर्विष्ट हों । अभियोजन पक्षकथन के मोटे-मोटे तथ्यों का प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में उल्लेख किया जाना ही पर्याप्त होगा । दर्दनाक घटना के कुछ घंटों के भीतर ही शिकायत दर्ज कराई गई थी । अभि. सा. 1 ने छह सप्ताह पहले ही विवाह हुई अपनी युवा पुत्री को अस्वाभाविक परिस्थितियों में खोया था । विवाह के कुछ दिनों के भीतर ही पुत्री की मृत्यु का पिता-अभि. सा. 1 के मस्तिष्क पर प्रभाव किसी मानदंड द्वारा नहीं आंका जा सकता है । रिपोर्ट दर्ज कराते समय अभि. सा. 1 गहरे सदमें में और मानसिक रूप से अशांत रहा होगा । अभि. सा. 1 अपनी युवा पुत्री की

मृत्यु के संताप में धन के संदाय के सभी ब्यौरों और उसकी पुत्री को दहेज के लिए तंग करने की बात का वर्णन नहीं कर सका होगा । जब तक तथ्यों को गढ़ने का उपदर्शन न हो, अभियोजन के वृत्तांत को केवल इस आधार पर संदेहास्पद नहीं माना जा सकता है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में सभी ब्यौरे अंतर्विष्ट नहीं हैं ।

13. अपीलार्थियों की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री के. टी. एस. तुलसी ने यह दलील दी कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में अपीलार्थियों द्वारा मृतका को केवल यातना देने और क्रूर व्यवहार करने के अभिकथन अंतर्विष्ट हैं और अभि. सा. 1 ने पुलिस द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित किए गए अपने कथन में अभिकथित दहेज की मांग के बारे में कुछ नहीं कहा है, जबकि अभि. सा. 1 ने पुलिस द्वारा अभिलिखित किए गए अपने कथन में केवल यह कहा था कि उसकी पुत्री पर कई सारे प्रतिबंध लगाए गए थे जिसके कारण अर्चना घुटन महसूस कर रही थी । यह दलील देते हुए कि न तो प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में और न ही अन्वेषक अधिकारी द्वारा अगले दिन अभिलिखित किए गए अभि. सा. 1 के कथन में दहेज की मांग के संबंध में क्रूरता करने या अपीलार्थियों के ऐसे किसी आचरण का अभिकथन है, जो अर्चना को आत्महत्या करने के लिए प्रेरित कर सकता था, विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने यह आग्रह किया और हमें इस बात के लिए मनाने की कोशिश की कि अभि. सा. 1 के दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित किए गए कथन पर विचार किया जाए ।

14. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161, जिसका शीर्षक "पुलिस द्वारा साक्षियों की परीक्षा" है, में किसी अन्वेषक अधिकारी द्वारा ऐसे किसी व्यक्ति की मौखिक परीक्षा करने का उपबंध किया गया है, जब ऐसा व्यक्ति मामले के तथ्यों और परिस्थितियों से परिचित हो । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित किए गए पुलिस कथन को जिस प्रयोजन के लिए और जिस रीति में किसी विचारण में प्रयुक्त किया जा सकता है, वे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162 में उपदर्शित हैं । धारा 162 निम्नलिखित प्रकार से है :–

162. पुलिस से किए गए कथनों का हस्ताक्षरित न किया जाना ; कथनों का साक्ष्य में उपयोग – (1) किसी व्यक्ति द्वारा किसी पुलिस अधिकारी से इस अध्याय के अधीन अन्वेषण के दौरान किया गया कोई कथन, यदि लेखबद्ध किया जाता है तो कथन करने वाले व्यक्ति

द्वारा हस्ताक्षरित नहीं किया जाएगा, और न ऐसा कोई कथन या उसका कोई अभिलेख चाहे वह पुलिस डायरी में हो या न हो, और न ऐसे कथन या अभिलेख का कोई भाग ऐसे किसी अपराध की, जो ऐसा कथन किए जाने के समय अन्वेषणाधीन था, किसी जांच या विचारण में, इसमें इसके पश्चात् यथाउपबंधित के सिवाय, किसी भी प्रयोजन के लिए उपयोग में लाया जाएगा :

परंतु जब कोई ऐसा साक्षी, जिसका कथन उपर्युक्त रूप में लेखबद्ध कर लिया गया है, ऐसी जांच या विचारण में अभियोजन की ओर से बुलाया जाता है तब यदि उसके कथन का कोई भाग, सम्यक् रूप से साबित कर दिया गया है तो, अभियुक्त द्वारा और न्यायालय की अनुज्ञा से अभियोजन द्वारा उसका उपयोग ऐसे साक्षी का खंडन करने के लिए भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) की धारा 145 द्वारा उपबंधित रीति से किया जा सकता है और जब ऐसे कथन का कोई भाग इस प्रकार उपयोग में लाया जाता है तब उसका कोई भाग ऐसे साक्षी की पुनःपरीक्षा में भी, किंतु उसकी प्रतिपरीक्षा में निर्दिष्ट किसी बात का स्पष्टीकरण करने के प्रयोजन से ही, उपयोग में लाया जा सकता है ।

(2) इस धारा की किसी बात के बारे में यह न समझा जाएगा कि वह भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) की धारा 32 के खंड (1) के उपबंधों के अंदर आने वाले किसी कथन को लागू होती है या उस अधिनियम की धारा 27 के उपबंधों पर प्रभाव डालती है ।

स्पष्टीकरण – उपधारा (1) में निर्दिष्ट कथन में किसी तथ्य या परिस्थिति के कथन का लोप या खंडन हो सकता है यदि वह उस संदर्भ को ध्यान में रखते हुए, जिसमें ऐसा लोप किया गया है महत्वपूर्ण और अन्यथा संगत प्रतीत होता है और कोई लोप किसी विशिष्ट संदर्भ में खंडन है या नहीं यह तथ्य का प्रश्न होगा ।

15. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162 में पुलिस द्वारा अभिलिखित किए गए साक्षियों के कथन का उपयोग ऐसे साक्षियों का खंडन करने के, इसमें यथा उपदर्शित, सीमित प्रयोजन के सिवाय वर्जित किया गया है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161(1) के अधीन किसी साक्षी द्वारा पुलिस के समक्ष किए गए कथन का उपयोग ऐसे साक्षी द्वारा विचारण के समय

जो कुछ कहा गया, उसका खंडन करने के प्रयोजन के लिए ही किया जा सकता है, जैसा कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162(1) के परंतुक में अधिकथित किया गया है । अन्वेषण के दौरान दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित किए गए कथन सारभूत साक्ष्य नहीं होते हैं किंतु प्राथमिक तौर पर इन सीमित प्रयोजनों के लिए उपयोग किए जा सकते हैं – (i) अभियुक्त द्वारा साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 के अधीन ऐसे साक्षी का खंडन करने के लिए ; (ii) ऐसे साक्षी का अभियोजन पक्ष द्वारा भी, किंतु न्यायालय की इजाजत से, खंडन करने के लिए ; (iii) यदि आवश्यक हो, साक्षी की पुनःपरीक्षा करने के लिए ।

16. न्यायालय स्वप्रेरणा से पुलिस को किए गए नासाबित कथनों का उपयोग नहीं कर सकता है और उनके प्रति निर्देश से ऐसे प्रश्न नहीं पूछ सकता है जो न्यायालय में दिए गए साक्षी के परिसाक्ष्य के विसंगत हों । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162 में आने वाले "यदि सम्यक् रूप से साबित कर दिया गया हो" शब्दों से स्पष्ट रूप से यह दर्शित होता है कि साक्षियों के कथन के अभिलेख को एकाएक साक्ष्य में ग्रहण नहीं किया जा सकता है और न ही विचार किया जा सकता है, अपितु उन्हें खंडन करने के प्रयोजन के लिए साक्षी की स्वीकारोक्ति को प्रकट करते हुए उसकी प्रतिपरीक्षा के दौरान तथा साथ ही अन्वेषक अधिकारी की प्रतिपरीक्षा के दौरान भी सम्यक् रूप से साबित किया जाना आवश्यक है । अन्वेषक अधिकारी के समक्ष किए गए कथन का उपयोग खंडन करने के लिए किया जा सकता है किंतु साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 का पूरी तरह से अनुपालन करने के पश्चात् ही अर्थात् खंडन करने के लिए आशयित भागों की ओर ध्यान आकर्षित करके ही किया जा सकता है ।

17. साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 निम्नलिखित है :–

> "**पूर्वतन लेखबद्ध कथनों के बारे में प्रतिपरीक्षा –** किसी साक्षी की उन पूर्वतन कथनों के बारे में, जो उसने लिखित रूप में किए हैं, या जो लेखबद्ध किए गए हैं, और जो प्रश्नगत बातों से सुसंगत हैं, ऐसा लेख उसे दिखाए बिना, या ऐसे लेख के साबित हुए बिना, प्रतिपरीक्षा की जा सकेगी, किंतु यदि उस लेख द्वारा उसका खंडन करने का आशय है तो उस लेख को साबित किए जा सकने के पूर्व उसका ध्यान उस लेख के उन भागों की ओर आकर्षित करना होगा जिनका उपयोग उसका खंडन करने के प्रयोजन से किया जाना है ।"

18. साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 के अधीन जब साक्षी का खंडन उसके लेखबद्ध किए गए पूर्वतन कथन द्वारा करने का आशय है तो उस लेख का उपयोग करने से पूर्व उस साक्षी का ध्यान उस लेख के उन भागों की ओर आकर्षित करना होगा जिनका उपयोग उसका खंडन करने के प्रयोजन से किया जाना है । किसी साक्षी के अभिसाक्ष्य को अभिलिखित करते समय विचारण न्यायालय का यह कर्तव्य हो जाता है कि यह सुनिश्चित किया जाए कि साक्षी की प्रतिपरीक्षा में पुलिस कथन के उस भाग को उसके ध्यान में लाया जाए जिसके साथ उसका खंडन करने का आशय है । साक्षी का ध्यान उस भाग की ओर आकर्षित किया जाता है और इसे उद्धृत करते हुए यह उसकी प्रतिपरीक्षा में प्रतिबिम्बित किया जाना चाहिए । यदि साक्षी उस भाग को, जिसका खंडन करने का आशय है, स्वीकार करता है तो यह साबित हो जाता है और खंडन के लिए अतिरिक्त सबूत की आवश्यकता नहीं रह जाती है और इसे साक्ष्य का विवेचन करते समय ग्रहण किया जाएगा । यदि वह कथन के उस भाग को किए जाने की बात से इनकार करता है तो उसका ध्यान अवश्य उस कथन की ओर आकर्षित करना चाहिए और अभिसाक्ष्य में उसका उल्लेख करना आवश्यक है । इस प्रक्रिया द्वारा खंडन को केवल अभिलेख पर लाया जाता है, किंतु इसे अभी साबित किया जाना है । उसके पश्चात् जब अन्वेषक अधिकारी की न्यायालय में परीक्षा की जाती है तो उसका ध्यान खंडन करने के प्रयोजन के लिए चिह्नत उद्धरण की ओर आकर्षित किया जाना चाहिए और इसे फिर अन्वेषक अधिकारी के अभिसाक्ष्य में साबित किया जाएगा जो पुलिस कथन के प्रति निर्देश करते हुए पुनः उस कथन को साक्षी द्वारा किए जाने के बारे में अभिसाक्ष्य देगा । इस प्रक्रिया में पुनः पुलिस कथन के प्रति निर्देश किया जाता है और उस भाग को अलग किया जाता है जिससे कथन करने वाले का खंडन किए जाने का आशय है । यदि साक्षी का कथन के उस भाग से सामना नहीं कराया जाता है जिससे प्रतिरक्षा पक्ष उसका खंडन करना चाहता है, तब न्यायालय स्वप्रेरणा से साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 के अनुपालन में अर्थात् खंडन करने के लिए आशयित भागों की ओर ध्यान आकर्षित करके साबित नहीं किए गए पुलिस को किए गए कथनों का उपयोग नहीं कर सकता है ।

19. प्रस्तुत मामले में, खंडन को साबित करने के लिए अभि. सा. 1 का सामना दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन पुलिस द्वारा अभिलिखित किए गए उसके कथन से नहीं कराया गया था और न ही

खंडन करने के प्रयोजन के लिए चिह्नत उसका कथन अन्वेषण अधिकारी को पढ़कर सुनाया गया था । जब न तो अभि. सा. 1 और न ही अन्वेषक अधिकारी का सामना कथन से कराया गया था और इसके बारे में प्रश्न नहीं किए गए थे, तब अभि. सा. 1 के परिसाक्ष्य और अभियोजन के वृत्तांत को अविश्वसनीय ठहराने की बात तो दूर, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित किए गए अभि. सा. 1 के कथन पर किसी प्रयोजन के लिए विचार तक नहीं किया जा सकता है ।

20. अभि. सा. 1 ने अपने साक्ष्य में स्पष्ट रूप से यह कथन किया है कि विवाह से एक वर्ष पूर्व उसने 2,50,000/- रुपए में अपनी भूमि बेची थी और उसने यह कथन किया है कि विवाह से तीन-चार माह पूर्व उसने बैंक से धन निकाला था । अभि. सा. 1 ने यह भी कथन किया है कि उसने विवाह से एक वर्ष पूर्व अपने भविष्य निधि खाते से 1,00,000/- रुपए निकाले थे और यह धन सेंट्रल बैंक, डी. बी. एस. महाविद्यालय शाखा के अपने खाते में जमा किया था और जब भी उसे आवश्यकता पड़ती, वह अपने खाते से धन निकाल लेता था । अभि. सा. 1 ने अपने साक्ष्य में अपीलार्थियों को संदत्त किए गए धन अर्थात् 11,000/- रुपए और 15,000/- रुपए की रकम जो "टीके" की रस्म पर दी गई थी, तीन अलग-अलग तारीखों को प्रत्येक पर 50,000/- रुपए दिए गए थे, 63,000/- रुपए की रकम अर्चना के सावधि जमा खाते में रखी गई थी जो परिपक्व हो गई थी और उसे भी निकालकर तारीख 11 जुलाई, 1997 को अपीलार्थियों को दिया गया था । अपीलार्थियों को रकम देने के संबंध में अभि. सा. 1 का साक्ष्य सटीक और संगत है और बैंक विवरणियों द्वारा पर्याप्त रूप से पुष्टि होती है । अभि. सा. 1 के कथन में अपीलार्थियों को संदत्त धन के ब्यौरे और दहेज की मांग तथा अर्चना के साथ की गई क्रूरता और उसे तंग करने की बात का उल्लेख न होने से अभि. सा. 1 की विश्वसनीयता प्रभावित नहीं होती है । उच्च न्यायालय द्वारा ठीक ही यह मत व्यक्त किया गया है कि किसी पिता से उस समय सभी बातों का उल्लेख करने की प्रत्याशा नहीं की जा सकती जब वह अपनी पुत्री की मृत्यु के कारण स्वयं मानसिक पीड़ा में हो ।

21. मृतका-अर्चना का भाई, अभि. सा. 2 संतोष कुमार टिहरी बांध में सर्वेक्षक के रूप में कार्यरत एक भू-विज्ञानी है । अभि. सा. 2 के पास एक क्वार्टर है और उसका परिवार उसके साथ टिहरी में और कभी-कभी देहरादून में रहता है । अगस्त में, क्योंकि अभि. सा. 2 को अपनी पत्नी के

उपचार के लिए बम्बई जाना था, इसलिए उसने 11 अगस्त, 1997 से लेकर चार दिन की छुट्टी ली और वह तारीख 7 अगस्त, 1997 को देहरादून गया । अभि. सा. 2 ने अपने साक्ष्य में यह कथन किया कि तारीख 9 अगस्त, 1997 को उसकी बहिन अर्चना मायके आई और उसे बताया कि अपीलार्थियों द्वारा उसे लगातार यातना दी जा रही है और वे 5,00,000/- रुपए के दहेज की मांग कर रहे हैं और इस साक्षी को कहा कि इस बारे में माता-पिता को न बताए क्योंकि वे 5,00,000/- रुपए की इतनी बड़ी रकम की व्यवस्था नहीं कर पाएंगे और चिंता करेंगे । अभि. सा. 2 ने यह भी कथन किया कि मामले को सौहार्द रूप से निपटाने के लिए तारीख 10 अगस्त, 1997 को वह अपनी बहिन की ससुराल गया और वहां उसने अर्चना की सास, ससुर और पति को उसे 5,00,000/- रुपए न लाने के लिए फटकारते हुए देखा । अपीलार्थी-नीलिमा मिश्रा (सास) ने अभि. सा. 2 से कहा " .....अपनी बहिन को अपने घर रखो...." । अभि. सा. 2 ने अभिसाक्ष्य दिया कि अपीलार्थी वी. के. मिश्रा ने उसकी और उसके अन्य भाइयों तथा उनके पिता की बचत के ब्यौरे के बारे में पूछा । अभि. सा. 2 ने उन्हें नम्रतापूर्वक समझाने की कोशिश की और उनके पैर छुए किंतु सब व्यर्थ रहा । अभि. सा. 2 ने यह कथन किया कि क्योंकि उसे दिल्ली जाना था तथा उसके बाद बम्बई और चूंकि बहुत तेज बारिश हो रही थी इसलिए उसे होटल में जाना पड़ा और सारी रात होटल में ठहरा तथा अगले दिन रात्रि में उसने देहरादून से दिल्ली के लिए बस ली और रेलगाड़ी द्वारा तारीख 13 अगस्त, 1997 को बम्बई पहुंचा । अभि. सा. 2 को तारीख 14 अगस्त, 1997 को सूचना मिली कि अर्चना की मृत्यु हो गई है और तारीख 15 अगस्त, 1997 को अभि. सा. 2 हवाई जहाज से दिल्ली आया और दिल्ली से टैक्सी द्वारा देहरादून गया । अभि. सा. 2 ने यह कथन किया कि वीआईपी दौरा होने के कारण पुलिस द्वारा तुरंत उसकी परीक्षा नहीं की गई और उसका कथन तारीख 18 अगस्त, 1997 को ही अभिलिखित किया गया ।

22. अभि. सा. 2 के साक्ष्य को यह दलील देते हुए चुनौती दी गई कि अभि. सा. 2 ने तारीख 9 अगस्त, 1997 से पूर्व किसी दहेज की मांग का अभिकथन नहीं किया था और अभिकथित दहेज की मांग का अभिकथन स्पष्ट रूप से सोच-समझकर किया गया था । यह दलील दी गई कि अभि. सा. 2 का तारीख 10 अगस्त, 1997 की रात्रि में और तारीख 11 अगस्त, 1997 को उसके दिल्ली प्रस्थान करने तक, उसके माता-पिता

का मकान देहरादून में स्थित होने के बावजूद, होटल में ठहरना अस्वाभाविक है और अभि. सा. 2 एक विश्वसनीय साक्षी नहीं है । अभि. सा. 2 के साक्ष्य को आगे यह दलील देते हुए चुनौती दी गई कि अभि. सा. 2 तारीख 9 अगस्त, 1997 को अपनी बहिन से नहीं मिला था और न ही वह तारीख 10 अगस्त, 1997 को अर्चना की ससुराल में गया था क्योंकि उसे केवल तारीख 11 अगस्त, 1997 से तारीख 14 अगस्त, 1997 तक की छुट्टी मंजूर की गई थी और तारीख 9 अगस्त, 1997 और 10 अगस्त, 1997 को देहरादून में उसकी मौजूदगी पूरी तरह से संदेहास्पद है । अभि. सा. 2 के साक्ष्य को आगे यह दलील देते हुए चुनौती दी गई कि उसका पैतृक मकान देहरादून में है, इसलिए यह पूर्णतः अस्वाभाविक है कि अभि. सा. 2 ने यह दावा किया है कि वह देहरादून में एक होटल में ठहरा था और यह आश्चर्य की बात है कि 5,00,000/- रुपए की अभिकथित मांग करने के पश्चात् उसने अपने माता-पिता से संपर्क करना और उन्हें अभिकथित मांग के बारे में सूचित करना नहीं चाहा, हालांकि वह तारीख 11 अगस्त, 1997 तक देहरादून में होटल में ठहरा था । यह दलील दी गई कि अभि. सा. 2 ने तारीख 11 अगस्त, 1997 से पूर्व टिहरी स्थित परियोजना स्टेशन को छोड़ने के लिए अपने विभाग से लिखित अनुज्ञा नहीं ली थी और अभि. सा. 2 का होटल में ठहरना, जो कि उसके पैतृक मकान से केवल 4-5 कि. मी. की दूरी पर है, उसके परिसाक्ष्य के बारे में गंभीर संदेह उत्पन्न करता है । आगे यह दलील दी गई कि अभि. सा. 2 का यह कथन कि 5,00,000/- रुपए के दहेज की मांग की गई थी वह केवल तारीख 18 अगस्त, 1997 को अभिलिखित किया गया था, जबकि अभि. सा. 2 तारीख 15 अगस्त, 1997 को ही देहरादून लौट आया था ।

23. अभि. सा. 2 की विश्वसनीयता को चुनौती देने वाली दलीलों को स्वीकार करने के लिए कोई सार नहीं है । अभि. सा. 2 ने अपने साक्ष्य में स्पष्ट रूप से यह कथन किया है कि वह टिहरी से देहरादून तारीख 7 अगस्त, 1997 को आया था और तारीख 10 अगस्त, 1997 को 3.00 बजे अपराह्न तक उसके होटल जाने तक वह अपने माता-पिता के घर में था । अभि. सा. 2 ने होटल में ठहरने की बात का स्पष्ट रूप से यह कहते हुए स्पष्टीकरण दिया है कि उसके पिता के मकान से देहरादून बस अड्डे की दूरी 4-5 कि. मी. है और क्योंकि वह अपनी बहिन अर्चना के ससुराल वालों से उनकी 5,00,000/- रुपए की अतिरिक्त दहेज की मांग के मामले को सुलझाना चाहता था, इसलिए वह दोपहर बाद 3.00 बजे अपने सामान सहित अपने घर से होटल चला गया और वह शायद अर्चना के ससुराल

वालों के साथ मामले को सुलझाने के लिए और तारीख 10 अगस्त, 1997 की रात्रि में बस लेने हेतु समय बचाने के लिए देहरादून में होटल में ठहरा होगा । अभि. सा. 2 ने अपने साक्ष्य में स्पष्ट रूप से यह कथन किया है कि उसने तारीख 7 अगस्त, 1997 से 10 अगस्त, 1997 तक टिहरी से बाहर रहने की अनुज्ञा ली हुई थी और उसने तारीख 11 अगस्त, 1997 से बम्बई में अपनी पत्नी का उपचार कराने के सिलसिले में तीन-चार दिन की छुट्टी ली थी । अभि. सा. 2 का यह साक्ष्य, कि वह तारीख 9 अगस्त, 1997 को अर्चना से अपने पैतृक घर में मिला था और अर्चना ने उसे 5,00,000/- रुपए की मांग और उसके साथ की गई क्रूरता के बारे में बताया था और यह कि वह विवाद को सौहार्दपूर्ण रूप से सुलझाने के लिए अपीलार्थियों के घर गया था, पूर्णतः स्वाभाविक है और विश्वासोत्पादक है । अभि. सा. 2 ने एक प्रिय भाई की तरह काम किया और अधिसंभाव्यतः वह अपने वृद्ध माता-पिता को तनाव नहीं देना चाहता था तथा मामले की अत्यावश्यकता को देखते हुए वह अपीलार्थियों के घर उन्हें समझाने-बुझाने के लिए गया । अभि. सा. 2 के साक्ष्य के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि वह अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान अडिग रहा और उसके बयान को अविश्वसनीय ठहराने के लिए कोई सारभूत बात निकलकर नहीं आई । केवल इस कारण कि अभि. सा. 2 ने तारीख 7 अगस्त, 1997 से 10 अगस्त, 1997 तक टिहरी मुख्यालय से बाहर रहने के लिए प्रदान की गई अनुज्ञा को दर्शित करने वाले दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किए, उसके बयान पर संदेह नहीं किया जा सकता है । होटल में ठहरने के लिए अभि. सा. 2 द्वारा बताए गए कारण पूर्णतः विश्वासप्रद हैं और अभि. सा. 2 की विश्वसनीयता को चुनौती देने वाली दलील को विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय द्वारा ठीक ही नामंजूर किया गया है ।

24. अपीलार्थियों की ओर से आगे यह दलील दी गई कि अन्वेषक अधिकारी द्वारा अभि. सा. 2 का कथन अभिलिखित करने में विलंब हुआ था और इसलिए उसके साक्ष्य को संदेह की दृष्टि से देखा जाना चाहिए, विशिष्ट रूप से जबकि उसने देहरादून जाने से पूर्व अभिकथित दहेज की मांग के बारे में प्रकटन नहीं किया था । इस संदर्भ में जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, अभि. सा. 2 अपनी पत्नी के उपचार के लिए मुम्बई गया था और तारीख 14 अगस्त, 1997 को उसे अर्चना की मृत्यु के बारे में सूचित किया गया और अगले दिन वह हवाई जहाज से दिल्ली लौटा और दिल्ली से टैक्सी द्वारा देहरादून गया । अभि. सा. 2 ने अपने साक्ष्य में यह कथन किया है कि पुलिस तारीख 17 अगस्त, 1997 को उत्तर प्रदेश की तत्कालीन मुख्यमंत्री, कु. मायावती के प्रोग्राम में व्यस्त थी, इसलिए

पुलिस ने उसकी परीक्षा नहीं की और उसका कथन अभिलिखित नहीं किया और अन्वेषक अधिकारी द्वारा उसका कथन तारीख 18 अगस्त, 1997 को ही अभिलिखित किया गया । अभि. सा. 2 के साक्ष्य पर विचार करते हुए, यह नहीं कहा जा सकता है कि अभियोजन पक्ष एक मिथ्या मामला गढ़ने और मामले को दिए जाने वाले आकार के बारे में विनिश्चय करने के लिए जानबूझकर समय ले रहा था । यह उल्लेख करना आवश्यक है कि अभि. सा. 2 की विलंब से की गई परीक्षा पर प्रतिरक्षा पक्ष द्वारा अन्वेषक अधिकारी से कोई प्रश्न नहीं किया गया था । यदि अभि. सा. 14 से ऐसा प्रश्न किया जाता, तो वह निश्चित रूप से अभि. सा. 2 की तारीख 15 अगस्त, 1997 से 17 अगस्त, 1997 तक परीक्षा नहीं करने के कारण का स्पष्टीकरण देता । ऐसा न करके, अपीलार्थी यह दलील देने में सही नहीं है कि अभि. सा. 2 का कथन अभिलिखित करने में विलंब हुआ था ।

25. इसे सार्वभौम प्रयोज्यता का नियम नहीं ठहराया जा सकता है कि किसी साक्षी का परिसाक्ष्य केवल इस कारण अविश्वनीय हो जाता है कि उस विशिष्ट साक्षी की परीक्षा में विलंब हुआ है । **सुनील कुमार और अन्य** बनाम **राजस्थान राज्य**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया कि अन्वेषण के दौरान किसी साक्षी की परीक्षा करने में हुए विलंब का प्रश्न केवल तभी तात्विक है यदि इससे अभियोजन के पक्षकथन का मिथ्या रूप से समर्थन करने के लिए अन्वेषक अभिकरण द्वारा किसी साक्षी को पेश करने का संकेत या सुझाव मिलता हो । इसलिए अभि. सा. 2 का कथन अभिलिखित करने में कोई विलंब नहीं हुआ था और यदि यह मान भी लिया जाए कि अभि. सा. 2 से पूछताछ करने में विलंब हुआ था, तब भी इस बात से ही अभियोजन पक्षकथन में कोई खामी होना नहीं कहा जा सकता है ।

26. मृतका के एक अन्य भाई, अभि. सा. 3 शरद कुमार त्रिपाठी ने तारीख 13 अगस्त, 1997 को घटित हुई घटना का यह वर्णन किया कि सायंकाल में लगभग 3.10 बजे उसे अपीलार्थी-राहुल मिश्रा से एक फोन आया और उसने उसे अपने पिता के साथ तुरंत उसके घर पहुंचने के लिए कहा और फिर फोन काट दिया । अभि. सा. 3 ने यह कथन किया कि उसे फोन में पीछे से किसी को फटकारने और चिल्लाने की आवाजें सुनाई दीं और इसलिए उसने उसे फोन किया और अपीलार्थी-राहुल मिश्रा ने फोन

---

[1] (2005) 9 एस. सी. सी. 283.

उठाया और उसे कहा कि अपने पिता के साथ तुरंत आओ और फोन काट दिया । जब अभि. सा. 3 ने पुनः फोन किया तो अपीलार्थी-वी. के. मिश्रा ने फोन सुना, जिसने पूरी ऊंची आवाज में अभि. सा. 3 पर चिल्लाते हुए उसे कहा कि अपनी बहिन को ले जाओ और वे उसे नहीं रखेंगे । जब अभि. सा. 3 वहां पहुंचा, तो अपीलार्थियों के मकान में रहने वाले किराएदारों में से एक किराएदार ने उसे यह बताया कि अर्चना के मुंह से सफेद झाग निकल रहा था और उसे दून अस्पताल ले जाया गया है और अभि. सा. 3 अस्पताल गया, जहां उसे पता चला कि अर्चना ने "बेगोन" विष खा लिया है और विषाक्तिकरण से उसकी मृत्यु हो गई है ।

27. अभियुक्तों के किराएदार-पड़ोसी ने यह कथन किया है कि उसने अपीलार्थियों के मकान से कभी कोई चिल्लाने, चीखने की आवाज नहीं सुनी थी और पति-पत्नी प्रसन्नतापूर्वक रह रहे थे । इस साक्षी के साक्ष्य का अवलंब लेते हुए अपीलार्थियों ने यह दलील दी कि यदि कोई दहेज की मांग की गई होती, तो पति-पत्नी के बीच असामंजस्य रहा होता और अभि. सा. 6 जैसे पड़ोसियों को निश्चित रूप से उसकी जानकारी होती । यह उल्लेखनीय है कि ऐसे मामले में जहां दहेज की मांग का अभिकथन किया जाता है, ऐसी मांगे घर की चारदिवारी के भीतर तक सीमित रहती हैं और केवल दोनों परिवारों के सदस्यों को ही इसकी जानकारी रहती है । ऐसे मामलों में घटना के विषय में स्वतंत्र और प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य साधारणतः उपलब्ध नहीं होता है । यही कारण है कि विधान-मंडल ने कतिपय परिस्थितियों में उपधारणा किए जाने की अनुज्ञा देते हुए साक्ष्य अधिनियम में धारा 113क और 113ख पुरःस्थापित की । हमारे मत में, अभि. सा. 6 के साक्ष्य से किसी प्रकार से अपीलार्थियों के पक्षकथन का समर्थन नहीं होता है ।

28. प्रतिरक्षा पक्ष ने तीन दस्तावेजों का अधिक अवलंब लिया है – (i) मृतका द्वारा लिखा गया आत्महत्या-टिप्पण ; (ii) बक्से में पाया गया अभिकथित अंतर्देशीय पत्र और अन्वेषण में चूक ; और (iii) यह पत्र कथित रूप से मृतका-विपदग्रस्त द्वारा अपने बहनोई को लिखा गया था । अपीलार्थियों ने जोरदार रूप से यह दलील दी कि अभि. सा. 14 अन्वेषक अधिकारी उपरोक्त तीनों दस्तावेजों के संबंध में ऋजु अन्वेषण करने में असफल रहा और यह दलील दी कि ये तीनों दस्तावेज दहेज की मांग के विषय में विलंबित और परस्पर-विरोधाभासी साक्ष्य के कारण और अधिक महत्वपूर्ण हो गए हैं ।

29. राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् अपर महाधिवक्ता श्री मुकेश गिरी और इत्तिलाकर्ता की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री रतनाकर दास ने यह दलील दी कि अपीलार्थियों ने तीनों पत्र अधिसंभाव्यतः विधिक परामर्श के आधार पर गढ़े और इन्हें जमानत के लिए अर्जी देते समय विलंबित प्रक्रम पर प्रस्तुत किया तथा अपीलार्थियों ने इन दस्तावेजों की असलियत को साबित करने के लिए कोई कदम नहीं उठाया और विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय द्वारा इन दस्तावेजों को ठीक ही नामंजूर किया गया है ।

30. जहां तक आत्महत्या-टिप्पण का संबंध है, अर्चना ने कथित रूप से यह कहा था कि वह "आत्महत्या" करने जा रही है क्योंकि उसकी मानसिक दशा सही नहीं है और उसके इस कृत्य के लिए किसी व्यक्ति को उत्तरदायी न ठहराया जाए । यह उल्लेख करना आवश्यक है कि आत्महत्या-टिप्पण अन्वेषण के दौरान सामने नहीं आया था और इसे बाद में अपीलार्थियों द्वारा प्रस्तुत किया गया था । जब अभि. सा. 1 (अर्चना का पिता) का आत्महत्या-टिप्पण से सामना कराया गया, तो अभि. सा. 1 ने इसको अर्चना के हस्तलेख में होने की बात से इनकार किया । अपीलार्थियों ने आत्महत्या-टिप्पण अर्चना के हस्तलेख में होने की बात को साबित करने के लिए कोई कार्रवाई नहीं की । यदि आत्महत्या-टिप्पण का असली होना मान भी लिया जाए, तब भी वास्तविकता यह है कि अर्चना की मृत्यु अस्वाभाविक थी । आत्महत्या-टिप्पण की अंतर्वस्तुओं से अभि. सा. 1 और 2 के संगत बयान पर प्रभाव नहीं पड़ता है ।

31. अपीलार्थियों द्वारा अवलंब लिया गया एक अन्य दस्तावेज तारीख 10 अगस्त, 1997 का एक अंतर्देशीय पत्र है जो तात्पर्यित रूप से उस व्यक्ति द्वारा लिखा गया था जिसके साथ अर्चना के कथित रूप से प्रेम-संबंध थे । अपीलार्थियों के अनुसार, अर्चना के विवाह से पूर्व एक लड़के के साथ प्रेम-संबंध थे, जो अर्चना के विवाह के पश्चात् प्रेम-संबंध और अभिकथित गर्भपात का खुलासा करने को लेकर उसका भयादोहन करने लगा और इस कारण अर्चना परेशान हो गई और विष खाकर आत्महत्या कर ली । सेशन न्यायालय में कागजात सं. 7ख/1 अभियुक्तों की जमानत अर्जी की सुनवाई के दौरान प्रस्तुत किया गया था । अभियुक्तों की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री लुथरा और श्री के. टी. एस. तुलसी ने यह दलील दी कि अन्वेषक अधिकारी ने इस महत्वपूर्ण बात के बारे में अन्वेषण करने का कोई प्रयास नहीं किया, जो शिकायतकर्ता के पक्षकथन पर

सद्भावी संदेह उठाते हुए उसके आधार को ध्वस्त कर सकती थी । अन्य बातों के साथ-साथ, अन्वेषण की विश्वसनीयता को चुनौती देते हुए निम्नलिखित दलीलें दी गईं :–

(क) उन सहपाठियों और मित्रों के बारे में कोई अन्वेषण नहीं किया गया जिनसे पत्र के लेखक की पहचान सिद्ध की जा सकती थी ;

(ख) अन्वेषक अधिकारी ने अर्चना के अपने माता-पिता के घर ठहरने के दौरान न तो उसकी आवाजाही की तारीख, समय और स्थान का अभिनिश्चित करने की कोशिश की और न ही उसने उन लोगों को अभिनिश्चित किया जो उस समय अर्चना से मिलने आए थे जब वह घर पर थी और न ही यह अभिनिश्चित किया कि अर्चना जब वहां थी तो किस-किस से मिलने गई थी ;

(ग) पत्र में हालांकि यह कहा गया है कि अर्चना का भाई संतोष उसके संबंधों के बारे में जानता था, तो भी अभि. सा. 14 द्वारा इस संबंध में कोई अन्वेषण नहीं किया गया ;

(घ) अन्वेषक अधिकारी ने पत्र में निर्दिष्ट सिंह साहिब नामक तात्पर्यित मित्र की पहचान को सिद्ध करने का कोई प्रयास नहीं किया और न ही उक्त अंतर्देशीय पत्र, ख7/1, में उल्लिखित पत्रों को ढूंढने का कोई प्रयास किया ।

विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने यह दलील देते हुए कि अन्वेषक अधिकारी ने निष्पक्ष अन्वेषण करने का कोई प्रयास नहीं किया यह कहा कि एक तो अन्वेषक अधिकारी ने निष्पक्ष अन्वेषण करने का कोई प्रयास नहीं किया और दूसरे दहेज की मांग के संबंध में अभियोजन पक्षकथन में बढ़ा-चढ़ाकर कही गई बातों से अभियोजन पक्षकथन के बारे में गंभीर संदेह उत्पन्न होता है । विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने आगे यह दलील दी कि अन्वेषक अधिकारी की ओर से सच्चाई को अभिनिश्चित करने में गंभीर चूक हुई है, जो अभियुक्तों को साक्ष्य अधिनियम की धारा 114(छ) के अधीन न्यायालय से अभियोजन पक्षकथन और अन्वेषण के विरुद्ध प्रतिकूल निष्कर्ष निकालने के लिए आग्रह करने का हकदार बनाती है और **टोमासो बरुनो और एक अन्य** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[1] और **मुस्सउद्दीन अहमद** बनाम **असम राज्य**[2] वाले

[1] 2015 (1) स्केल 498.

[2] (2009) 14 एस. सी. सी. 541.

मामलों का अवलंब लिया ।

32. प्रत्यर्थियों ने अन्वेषण में की गई चूक पर अपीलार्थियों की दलील का खंडन करते हुए और यह दलील देते हुए कि अन्वेषण में की गई कोई चूक अभियोजन पक्षकथन के मूल आधार को प्रभावित नहीं करती है, **कर्नाटक राज्य** बनाम **के. याराप्पा रेड्डी**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के निर्णय का अवलंब लिया, जिसमें इस न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :–

> "...... यह एक मार्गदर्शक सिद्धांत हो सकता है क्योंकि किसी दांडिक विचारण में अन्वेषण ही न्यायिक संवीक्षा का एकमात्र विषय नहीं है, इसलिए यह अनुज्ञात नहीं किया जा सकता है कि मामले में न्यायालय का निष्कर्ष मात्र अन्वेषण की ऋजुता पर आधारित हो । यह भलीभांति स्थिर है कि भले ही अन्वेषण अवैध है या संदेहास्पद भी है, शेष साक्ष्य की संवीक्षा इसके प्रभाव से स्वतंत्र रहकर की जानी आवश्यक है । अन्यथा दांडिक विचारण गिरकर अन्वेषक अधिकारियों के स्तर पर आ जाएगा जो इसके कर्ता-धर्ता हैं । दांडिक विचारणों में अन्वेषक अधिकारियों द्वारा की गई कार्रवाई पर न्यायालय का प्रभुत्व और प्रधानता का होना आवश्यक है । दांडिक न्याय को मामले में अन्वेषक अधिकारियों द्वारा कारित की गई गलतियों का शिकार नहीं बनाया जाना चाहिए । दूसरे शब्दों में, यदि न्यायालय इस बात से आश्वस्त है कि किसी घटना के किसी साक्षी का परिसाक्ष्य सत्य है, तो न्यायालय मामले में अन्वेषक अधिकारी की संदेहास्पद भूमिका के होते हुए भी उस पर कार्यवाही करने के लिए स्वतंत्र है ।"

33. अंतर्देशीय पत्र ख7/1 अन्वेषण के दौरान प्रकट नहीं हुआ था अपितु इसे अभियुक्तों द्वारा तारीख 29 अगस्त, 1997 को फाइल की गई एक जमानत की अर्जी के साथ प्रस्तुत किया गया था । उसके पश्चात् अभियुक्तों द्वारा किए गए अनुरोध पर अन्वेषक अधिकारी को इस पर अन्वेषण करने के लिए निदेशित किया गया । जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, इस अंतर्देशीय पत्र का अन्वेषण के दौरान प्रकटीकरण नहीं हुआ था, अपितु इस अंतर्देशीय पत्र के साथ-साथ उस पत्र को भी जो अभिकथित रूप से अर्चना द्वारा अपने बहनोई को लिखा गया था, अर्चना के बहनोई ने कथित रूप से अर्चना के सूटकेस से निकालकर दिया था । वह

---

[1] (1999) 8 एस. सी. सी. 715.

बहनोई जिसने कथित रूप से इन पत्रों को प्रकट किया था, उसकी न्यायालय में परीक्षा नहीं कराई गई । अभियुक्तों द्वारा इस बात का कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है कि यह पत्र अन्वेषक अधिकारी को क्यों नहीं सौंपा गया था । हमने अंतर्देशीय पत्र के उद्भव स्थान के बारे में भी परिशीलन किया और उक्त पत्र पर डाकघर की मुहर स्पष्ट नहीं है । अभि. सा. 14 अन्वेषक अधिकारी ने विनिर्दिष्ट रूप से यह कथन किया है कि उसने यह अभिनिश्चित करने की कोशिश की थी कि अंतर्देशीय पत्र किस डाकघर से प्रेषित किया गया था किंतु वह इसकी पहचान नहीं कर सका । जब अंतर्देशीय पत्र पर लगी मुहर स्पष्ट ही नहीं थी, अन्वेषक अधिकारी को उक्त अंतर्देशीय पत्र के संबंध में आगे अन्वेषण न करने के लिए दोष नहीं दिया जा सकता है । इस तथ्य से कि इस अंतर्देशीय पत्र को तारीख 29 अगस्त, 1997 को जमानत की अर्जी के साथ प्रस्तुत किया गया था, उक्त पत्र की असलियत के बारे में संदेह उत्पन्न होता है । जब जमानत की अर्जी फाइल की गई थी, उस समय तक संभवतः विधिक परामर्श प्राप्त हो गया होगा और बातचीत हो गई होगी । संभाव्य प्रतिरक्षा के लिए साक्ष्य सृजित करने हेतु ऐसे अंतर्देशीय पत्र को गढ़ने की संभाव्यता से इनकार नहीं किया जा सकता है और निचले न्यायालयों ने उक्त पत्र को नामंजूर करके ठीक ही एक जैसे निष्कर्ष अभिलिखित किए हैं ।

34. मृतका-अर्चना एक शिक्षित लड़की थी । यदि उसका वास्तव में किसी लड़के से प्रेम था, तो वह अपने माता-पिता की इच्छा के विरुद्ध भी उससे विवाह कर सकती थी । अंतर्देशीय पत्र की असलियत के बारे में, जैसा कि विचारण न्यायालय द्वारा उल्लेख किया गया है, यह विश्वास करना कठिन है कि मृतका अर्चना ने इसे संभाल कर रखा था ताकि यह उसके पति और सास-ससुर के हाथ लग सके । अंतर्देशीय पत्र के संबंध में प्रतिरक्षा पक्ष के अभिवाक् पर विचार करते हुए, विचारण न्यायालय ने ठीक ही यह मत व्यक्त किया है कि यह स्वाभाविक है कि कोई समझदार महिला विवाह के पश्चात् ऐसे पत्र को इतना संभालकर नहीं रखेगी ।

35. जहां तक मृतका द्वारा राहुल के साले को लिखे गए अभिकथित पत्र का संबंध है, दो अन्य दस्तावेजों की तरह यह पत्र भी अन्वेषण के दौरान प्रकट नहीं हुआ था अपितु अभियुक्तों द्वारा जमानत की अर्जी के साथ प्रस्तुत किया गया था । मृतका ने अपने बहनोई को ऐसा पत्र लिखने के पश्चात्, आश्चर्य की बात है कि इसे डाक में न डालकर उसे अपने सूटकेस में रखा होगा । जब इस पत्र का सामना अभि. सा. 1 से कराया

गया तो उसने इसे अर्चना के हस्तलेख में लिखे होने से इनकार किया । अभियुक्तों ने इन दस्तावेजों को हस्तलेख विशेषज्ञ को भेजने और मृतका-अर्चना के स्वीकृत हस्तलेख को मंगाकर हस्तलेख विशेषज्ञ की राय अभिप्राप्त करने के लिए भी कोई कार्यवाही नहीं की । यदि अन्वेषक अधिकारी ने अभियुक्तों द्वारा न्यायालय में प्रस्तुत किए गए दस्तावेजों के संबंध में अन्वेषण करने में चूक की थी, तो अभियुक्त अपनी प्रतिरक्षा को सिद्ध करने के लिए दस्तावेजों को साबित करने हेतु कार्यवाही कर सकते थे । ऐसा न करके, अभियुक्त अब उलटा मुड़कर यह दलील नहीं दे सकते हैं कि अन्वेषण में चूक की गई थी जिससे अभियोजन के पक्षकथन पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है ।

36. अन्वेषक अधिकारी सभी संभाव्य प्रतिरक्षाओं का अनुमान लगाने और उस दृष्टिकोण से अन्वेषण करने के लिए आबद्ध नहीं है । किसी भी स्थिति में, अन्वेषक अधिकारी की ओर से किया गया कोई लोप अभियोजन पक्षकथन के विरुद्ध नहीं जा सकता है । न्याय की यह मांग है कि अन्वेषक अधिकारी के ऐसे कार्य और लोप को अभियुक्त के पक्ष में नहीं लिया जाना चाहिए अन्यथा यह ऐसे लोपों को उद्दीप्त करने की कोटि में आएगा ।

37. **शेर सिंह** उर्फ **प्रतापा** बनाम **हरियाणा राज्य**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि धारा 304ख में "साबित" के बजाय "दर्शित" शब्द के प्रयोग से यह उपदर्शित होता है कि अभियोजन पक्ष पर डाले गए भार का केवल अधिसंभाव्यता की प्रबलता होने पर ही समाधान हो जाता है । दूसरे शब्दों में, "दर्शित" को "साबित" के अर्थ में पढ़ा जाएगा किंतु केवल अधिसंभाव्यता की प्रबलता की सीमा तक । उसके पश्चात् इस धारा में प्रयुक्त शब्द "समझा जाएगा" अभियुक्त से अपनी निर्दोषिता, किंतु युक्तियुक्त संदेह के परे, साबित करने की अपेक्षा के लिए पढ़ा जाएगा । अभियुक्त की "समझी गई" सदोषिता अभियुक्त के लिए अपनी निर्दोषिता साबित करने के लिए कोई गुंजाइश न छोड़ते हुए, तद्नुसार उसकी सदोषिता की प्रबल उपधारणा के रूप में पढ़ी जाती है । अभियुक्त से यह अपेक्षा की जाती है कि वह अपनी निर्दोषिता को साबित करके इस उपधारणा का खंडन करे । **रमाकांत मिश्रा** उर्फ **लालू आदि** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[2] वाले मामले में इसी मत को दोहराया गया है ।

---

[1] [2015] 1 एस. सी. आर. 29.

[2] 2015 (3) स्केल 186.

38. जहां अभियोजन पक्ष ने यह दर्शित किया हो कि मृतका के साथ उसकी "मृत्यु से कुछ पूर्व" पति या ससुराल वालों ने दहेज के संबंध में क्रूरता की थी या तंग किया था, वहां साक्ष्य अधिनियम की धारा 113ख के अधीन उपधारणा उद्भूत होती है और न्यायालय यह उपधारणा करेगा कि ऐसा व्यक्ति जिसने किसी दहेज की मांग के संबंध में स्त्री के साथ क्रूरता की थी या उसको तंग किया था, उसने दहेज मृत्यु कारित की थी । ऐसे मामलों में जो उपधारणा उद्भूत होती है, अभियुक्त द्वारा उसका खंडन किया जा सकता है ।

39. अभियोजन पक्ष ने युक्तियुक्त संदेह के परे यह सिद्ध किया है कि अर्चना की "मृत्यु से कुछ पूर्व" उसके पति और उसके ससुराल वालों द्वारा दहेज की मांग के संबंध में उसके साथ क्रूरता की थी और उसको तंग किया था । अभियुक्त साक्ष्य अधिनियम की धारा 113ख के अधीन उद्भूत उपधारणा का खंडन करने में सफल नहीं रहे हैं । अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के अधीन दोषसिद्ध करते हुए निचले न्यायालयों के एक जैसे निष्कर्ष साक्ष्य के उचित विवेचन और विश्वासप्रद कारणों पर आधारित हैं । निचले न्यायालयों ने अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख और 498क तथा दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 3 और 4 के अधीन ठीक ही दोषसिद्ध किया है और भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन अधिकारिता का प्रयोग करते हुए हम अपीलार्थियों की दोषसिद्धि में हस्तक्षेप करने का कोई आधार नहीं पाते हैं ।

40. भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के अधीन अपराध के लिए दंड ऐसी अवधि का कारावास है जो सात वर्ष से कम नहीं होगा किंतु इसका आजीवन कारावास तक विस्तार किया जा सकता है । अतः भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख में न्यूनततम कानूनी दंड सात वर्ष विहित किया गया है । **कुलवंत सिंह और अन्य** बनाम **पंजाब राज्य**[1] वाले मामले में, जिसमें विवाह के सात वर्ष के भीतर विष देकर हत्या कारित की गई थी, दहेज मृत्यु से संबंधित उपबंधों, भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख और 498क, पर विचार करते हुए दोषसिद्धि की पुष्टि की गई । उक्त मामले में ससुर की आयु लगभग 80 वर्ष थी और गंभीर डायबिटीज के कारण उसकी टांगें काट दी गई थीं तथा सास की आयु 78 वर्ष थी और उच्चतम न्यायालय ने सहानुभूति के आधार पर न्यूनतम कानूनी दंड से नीचे दंडादेश में कमी करने को अननुज्ञेय ठहराया ।

---

[1] (2013) 4 एस. सी. सी. 177.

41. कारागार के अभिलेख के अनुसार, अभियुक्त राहुल मिश्रा पांच वर्ष से अधिक समय से अभिरक्षा में है जिसमें परिहार भी सम्मिलित है । मामले के तथ्यों और परिस्थितियों तथा घटना वर्ष 1997 में घटित हुई थी और अभियुक्त राहुल मिश्रा पांच वर्ष से अधिक समय से अभिरक्षा में है, को ध्यान में रखते हुए, यदि उसे दिए गए आजीवन कारावास को कम करके दस वर्ष की अवधि का कारावास किया जाता है तो न्याय की पूर्ति हो जाएगी । अपीलार्थी वी. के. मिश्रा और नीलिमा मिश्रा में से प्रत्येक ने एक वर्ष से अधिक अवधि का कारावास भुगत लिया है । अपीलार्थी सं. 1 और 2 की आयु लगभग 70 वर्ष और 64 वर्ष है और यह कहा गया है कि वे विभिन्न रोगों से ग्रस्त हैं । उनकी आयु और उनके रोगों तथा मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए अपीलार्थी वी. के. मिश्रा और नीलिमा मिश्रा पर प्रत्येक पर अधिरोपित आजीवन कारावास को भी कम करके सात वर्ष किया जाता है ।

42. परिणामतः, हम अपीलार्थियों की भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख और अन्य अपराधों की दोषसिद्धि को कायम रखते हैं, जबकि राहुल मिश्रा पर अधिरोपित आजीवन कारावास को कम करके दस वर्ष का कारावास करते हैं । इसी प्रकार वी. के. मिश्रा और नीलिमा मिश्रा पर अधिरोपित आजीवन कारावास को भी कम करके प्रत्येक के कारावास को सात वर्ष करते हैं । अपीलार्थियों की अन्य अपराधों के लिए की गई दोषसिद्धि और उन में से प्रत्येक पर अधिरोपित कारावास के दंडादेश की पुष्टि की जाती है । उच्च न्यायालय का निर्णय उपरोक्त सीमा तक उपांतरित किया जाता है और अपीलें भागतः मंजूर की जाती हैं और उनका निपटारा किया जाता है ।

अपीलें भागतः मंजूर की गईं ।

जस.

[2015] 4 उम. नि. प. 137

विजय शंकर

बनाम

हरियाणा राज्य

4 अगस्त, 2015

न्यायमूर्ति वी. गोपाल गौड़ा और न्यायूमर्ति (श्रीमती) आर. बानुमति

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302 – हत्या – पारिस्थितिक साक्ष्य – अपीलार्थी-अभियुक्त को अंतिम बार मृतक के साथ देखे जाने, उसके द्वारा न्यायिकेतर संस्वीकृति किए जाने और बरामदगी संबंधी परिस्थितियों को अभियोजन पक्ष द्वारा विश्वसनीय साक्ष्य द्वारा सिद्ध नहीं करने के कारण ऐसी पूर्ण शृंखला का गठन नहीं होने पर जो अभियुक्त की दोषिता को इंगित करती हो, अभियुक्त को दोषमुक्त करना उचित होगा ।

अभियोजन के पक्षकथन के अनुसार मृतक सतीश कुमार दिल्ली पुलिस में उप-निरीक्षक के रूप में कार्यरत था । मृतक और उसके भाई सुखबीर सिंह की गांव दुजाना में कृषि भूमि और एक कुक्कुट-पालन फार्म (मुर्गी-फार्म) भी था । मृतक सतीश कुमार अपने परिवार सहित तारीख 16 मार्च, 1995 को होली का पर्व मनाने के लिए गांव गया । उसकी पत्नी और बच्चे गांव दुजाना चले गए और सतीश कुमार कुक्कुट-पालन फार्म में रुक गया । दोनों भाइयों ने आतिशबाजी चलाकर होली मनाई और वे पूर्वाह्न के 2.00 बजे तक बातचीत करते रहे । सुखबीर सिंह सतीश कुमार को कुक्कुट-पालन फार्म में छोड़कर गांव में अपने घर आ गया । अगली सुबह अर्थात् 17 मार्च, 1995 को किशोर ने सतीश कुमार को फर्श पर क्षतिग्रस्त पड़े हुए देखा और उसने इसके बारे में अभि. सा. 10 को सूचित किया । सुखबीर सिंह तुरंत फार्म पर गया और अपने भाई को उपचार के लिए चिकित्सा महाविद्यालय और अस्पताल, रोहतक ले गया और पुलिस को घटना की संसूचना दी गई । जब पुलिस थाने से पुलिस दल सतीश कुमार का कथन अभिलिखित करने के लिए अस्पताल गया तो डाक्टर ने यह राय व्यक्त की कि सतीश कुमार कथन करने की हालत में नहीं है । इसके पश्चात् पुलिस ने सुखबीर सिंह का कथन अभिलिखित किया, जिसने यह कथन किया कि पूर्व रात्रि में लगभग 10.00/11.00 बजे गांव दुजाना

का रहने वाला अपीलार्थी-अभियुक्त शराब के नशे में उनके फार्म पर आया था और अपनी साइकिल उनके फार्म पर खड़ी न करने देने और उनके फार्म पर शराब न पीने देने की बात का विरोध करते हुए उसके भाई सतीश कुमार के साथ गाली-गलौज की और अभियुक्त विजय शंकर ने यह कहते हुए उन्हें धमकी दी कि वह उन्हें होली मनाने लायक नहीं छोड़ेगा । सुखबीर सिंह के कथन के आधार पर झज्जर पुलिस थाने में भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई । डॉग-स्कवायड लाया गया और स्नीफर-डॉग पदचिह्नों का पीछा करते हुए अपीलार्थी की "बैठक" पर गया । गांव दुजाना के विद्या रत्तन ने पुलिस को सूचित किया कि तारीख 16 मार्च, 1995/17 मार्च, 1995 की मध्यवर्ती रात्रि में लगभग 2.30 बजे पूर्वाह्न में जब वह अपनी गुम हुई भैंस को ढूंढने गया था तब उसने अभियुक्त को सतीश कुमार के कमरे से बाहर आते हुए देखा था । तारीख 19 मार्च, 1995 को अपीलार्थी ने कथित रूप से गांव दुजाना की ग्राम पंचायत के एक सदस्य बुध राम को एक न्यायिकेतर संस्वीकृति की थी । क्षतिग्रस्त सतीश कुमार की क्षतियों के कारण तारीख 20 मार्च, 1995 को मृत्यु हो गई । उसकी मृत्यु के पश्चात् प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में परिवर्तन करके भारतीय दंड संहिता की धारा 302 लगाई गई । सम्यक् अन्वेषण के पश्चात् अपीलार्थी के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और 449 के अधीन आरोप पत्र फाइल किया गया । सेशन न्यायालय ने साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात् यह अभिनिर्धारित किया कि अभियोजन पक्ष ने अभियुक्त की दोषिता को युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध किया है और अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध किया और आजीवन कारावास का दंडादेश दिया । अपीलार्थी ने दोषसिद्धि के निर्णय से व्यथित होकर उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की और उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय द्वारा दोषसिद्धि और कारावास के दंडादेश की पुष्टि की । अभियुक्त-अपीलार्थी ने व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की । उच्च न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – अभियोजन पक्ष ने अपने पक्षकथन को मुख्य रूप से इन परिस्थितियों पर आधारित किया है – (i) हेतु ; (ii) अंतिम बार देखे जाने के सिद्धांत ; (iii) न्यायिकेतर संस्वीकृति ; (iv) डॉग-स्कवायड द्वारा पद-चिह्नों का अनुसरण करते हुए अभियुक्त की बैठक पर जाना ; और (v) रक्तरंजित वस्त्रों और चाकू की बरामदगी । जहां तक हेतु का संबंध है, मृतक के भाई

सुखबीर सिंह ने यह कथन किया कि अपीलार्थी-विजय शंकर उनके फार्म पर साइकिल खड़ा किया करता था और उसके भाई सतीश कुमार ने घटना से लगभग पंद्रह दिन पहले साइकिल खड़ा करने को लेकर उसे डांटा था । अभि. सा. 10 ने यह भी कथन किया कि तारीख 16 मार्च, 1995/17 मार्च, 1995 की मध्यवर्ती रात्रि में अपीलार्थी नशे की हालत में फार्म पर आया और कहा कि चूंकि सतीश और यह साक्षी उसे अपनी साइकिल खड़ा नहीं करने दे रहे हैं और अपने फार्म पर उसे शराब नहीं पीने दे रहे हैं, इसलिए वह उन्हें होली मनाने लायक नहीं छोड़ेगा । अपीलार्थी, अभि. सा. 10 और मृतक सतीश कुमार का पड़ोसी है । अपीलार्थी और मृतक के परिवार के बीच पुरानी दुश्मनी का अभिकथन साबित नहीं किया गया है । अभि. सा. 10 के सिवाय, किसी अन्य स्वतंत्र साक्षी की यह साबित करने के लिए परीक्षा नहीं की गई कि सतीश कुमार ने अपीलार्थी को डांटा था और सुझाए गए हेतु और अभिकथित पुरानी दुश्मनी के बारे में गंभीर संदेह उत्पन्न होता है । अभि. सा. 10 के बयान के अनुसार, तारीख 16 मार्च, 1995 को उसका भाई सतीश कुमार होली का पर्व मनाने के लिए फार्म पर आया और उसके बच्चे गांव दुजाना में घर चले गए जबकि सतीश कुमार फार्म पर रुक गया और उन्होंने आतिशबाजी चलाकर होली का पर्व मनाया तथा तारीख 17 मार्च, 1995 की देर रात्रि तक बातचीत करते रहे और उसके पश्चात् वह अपने घर चला गया जबकि सतीश कुमार कुक्कुट-पालन फार्म पर रह गया । कुक्कुट-पालन फार्म में तीन नौकर थे, उनमें से दो उस कमरे से सटे कमरे में सो रहे थे जिसमें सतीश कुमार सो रहा था और तीसरा नौकर फार्म से कुछ दूरी पर खड़े ट्रक में सो रहा था । फार्म के किसी नौकर की परीक्षा नहीं कराई गई और इस बात से पुनः अभि. सा. 10 के साक्ष्य तथा सुझाए गए हेतु के बारे में संदेह उत्पन्न होता है । प्रत्येक मामले में, अभियोजन पक्ष पर यह बाध्यता नहीं होती है कि वह अपराध के हेतु को साबित करे । प्रायः, हेतु को अपराध की इस अधिसंभाव्यता को उच्चतर करने के लिए उपदर्शित किया जाता है कि अभियुक्त अपराध करने के लिए उस हेतु द्वारा प्रेरित हुआ था । हेतु के सबूत से अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य को केवल बल और महत्व मिल जाता है । यदि अभियोजन पक्ष हेतु के आधार पर अपने पक्षकथन को साबित कर देता है तो यह एक संपुष्टिकारी साक्ष्य होगा । किंतु यदि अभियोजन पक्ष हेतु के आधार पर अपने पक्षकथन को साबित करने में सफल नहीं रहा है तो यह अभियोजन के पक्षकथन को

नकारने का आधार नहीं होगा और न ही इस बात से अभियोजन के पक्षकथन की विश्वसनीयता कम हो जाती है । हेतु का सबूत न होने पर अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य की केवल सावधानीपूर्वक संवीक्षा करने की आवश्यकता होती है । वर्तमान मामले में हेतु के बारे में विश्वासप्रद साक्ष्य न होने पर साक्ष्य के निर्धारण के विषय में न्यायालय को चौकन्ना करता है और उच्च न्यायालय तथा विचारण न्यायालय द्वारा इस पहलू को ध्यान में नहीं रखा गया । (पैरा 8, 9, 10 और 11)

विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी की दोषसिद्धि विद्या रत्तन, जिसने अपीलार्थी को अभिकथित रूप से तारीख 16 मार्च, 1995/17 मार्च, 1995 की मध्यवर्ती रात्रि में सतीश कुमार के कमरे से बाहर आते हुए देखा था, के साक्ष्य पर निर्भर रहते हुए मुख्य रूप से अंतिम बार देखे जाने के सिद्धांत के आधार पर की है । अभि. सा. 11 ने अपने साक्ष्य में यह कथन किया कि तारीख 16 मार्च, 1995/17 मार्च, 1995 की मध्यवर्ती रात्रि में उसकी भैंस उसके फार्म हाउस से गुम हो गई थी और इसलिए वह उसको ढूंढने के लिए गांव बुढा की ओर गया था । अभि. सा. 11 ने यह कथन किया कि रात्रि में चंद्रमा की रोशनी थी और लगभग 2.30 बजे पूर्वाह्न में जब वह दुजाना बस अड्डे पर पहुंचा, तो उसने अपीलार्थी-विजय शंकर को सतीश कुमार के कमरे से बाहर आते हुए देखा और उसने अभियुक्त को कमरे के बरामदे में लगे बल्ब की रोशनी में पहचान लिया था । अभि. सा. 11 ने आगे यह कथन किया कि उसके पश्चात् वह अपनी भैंस को ढूंढने गांव ढीघल गया । अभि. सा. 11 ने यह भी कथन किया कि जब वह 3.00 बजे अपराह्न में दुजाना आया तो उसने बस अड्डे पर लोगों की भीड़ देखी और उसे पता चला कि पूर्व रात्रि में किसी ने सतीश कुमार की चाकू से क्षतियां कारित करके हत्या कर दी है और 10/15 मिनट पश्चात् पुलिस घटनास्थल पर आई और अभि. सा. 11 ने जो कुछ पूर्व रात्रि में देखा था उसे पुलिस को बताया । अभियोजन पक्ष ने दोषिता को सिद्ध करने के लिए अभि. सा. 11 के इस साक्ष्य का पुरजोर अवलंब लिया कि अभियुक्त अंतिम बार मृतक के साथ देखा गया था । क्योंकि अभियोजन का पक्षकथन मुख्य रूप से अभि. सा. 11 के साक्ष्य पर टिका है, इसलिए इस बात पर सावधानीपूर्वक विचार किया जाना आवश्यक है कि क्या उच्च न्यायालय और विचारण न्यायालय ने अभि. सा. 11 के साक्ष्य का उचित रूप से मूल्यांकन किया है और क्या निचले न्यायालयों ने अभि. सा. 11 के साक्ष्य पर आधारित अभियोजन के पक्षकथन को स्वीकार करके ठीक किया है । अभि. सा. 11 गांव ढीघल का निवासी है । यदि अभि. सा. 11 की

आर्थिक स्थिति पर विचार करें तो स्वीकृत रूप से वह साठ एकड़ भूमि का स्वामी है और एक पेट्रोल पंप भी है । यह विश्वास करना पूर्णतः अनधिसंभाव्य है कि वह अर्ध-रात्रि में अपनी भैंस को ढूंढने अकेले गांव दुजाना से ढीघल जा रहा था, जो कि दस किलोमीटर की दूरी पर है । विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करने में गलती की कि अभि. सा. 11 के साक्ष्य की उपेक्षा नहीं की जा सकती है क्योंकि एक धनी व्यक्ति भी तुच्छ वस्तुओं की चोरी को गंभीरता से ले सकता है और उसे ढूंढने का पूरा प्रयास कर सकता है । यह बात पूर्णतः अस्वाभाविक है कि अभि. सा. 11 अर्ध-रात्रि में किसी को बताए बिना और न ही किसी को साथ लेकर अकेला गया था । इसके अतिरिक्त, जैसा कि सुखबीर सिंह द्वारा बताया गया, उस कमरे की दूरी जहां सतीश कुमार सो रहा था और गांव दुजाना जाने वाली सड़क की दूरी तीन किल्ला है अर्थात् कमरे से उत्तरी दिशा और दक्षिण दिशा तथा पश्चिम दिशा में तीन एकड़ है जहां उनके खेत हैं और विद्या रत्तन के बयान के अनुसार उसने अपीलार्थी को चन्द्रमा की रोशनी में और कमरे के बरामदे में लगे बिजली के बल्ब की रोशनी में पच्चीस फुट की दूरी से पहचाना था । यह पूर्णतः अनधिसंभाव्य है कि अभि. सा. 11 ने रात्रि में इतनी लंबी दूरी से अभियुक्त को पहचान लिया था । अभियोजन पक्ष द्वारा अवलंब ली गई एक अन्य परिस्थिति अपीलार्थी द्वारा अभिकथित रूप से बुध राम को की गई न्यायिकेतर संस्वीकृति है । अभि. सा. 12 ने यह कथन किया कि वह ग्राम पंचायत दुजाना का सदस्य है और तारीख 19 मार्च, 1995 को विजय शंकर-अपीलार्थी उसके निवास पर आया जहां हर सरूप नम्बरदार भी मौजूद था । अभि. सा. 12 ने यह कथन किया कि विजय शंकर ने मृतक सतीश कुमार को क्षतियां पहुंचाने की न्यायिकेतर संस्वीकृति की और अभि. सा. 12 से अनुरोध किया कि उसे बचा ले । जब अभि. सा. 12 केवल ग्राम पंचायत का एक सदस्य था न कि पुलिस के पास प्रभाव रखने वाला व्यक्ति, तब यह संदेहास्पद है कि अपीलार्थी-विजय शंकर न्यायिकेतर संस्वीकृति करने के लिए उसके पास गया और अपने को बचाने का अनुरोध किया । इस प्रक्रम पर, अभि. सा. 10 से उसकी प्रतिपरीक्षा में पूछे गए प्रश्न का उल्लेख करना सुसंगत है । अभि. सा. 10 से प्रतिपरीक्षा में यह पूछा गया था कि उसने बदलू के भाई बुध राम गुज्जर को अपनी दुकान इस शर्त पर किराए पर दी थी कि बुध राम गुज्जर मामले में अभिसाक्ष्य देगा और इसलिए अभि. सा. 12 को एक स्वतंत्र साक्षी नहीं कहा जा सकता है । न्यायिकेतर संस्वीकृति एक कमजोर साक्ष्य होता है और न्यायालयों को

इस पर अधिक सावधानी से विचार करना होता है । न्यायिकेतर संस्वीकृति के आधार पर दोषसिद्धि करने के लिए यह किसी प्रकार की तात्विक कमियों और अंतर्निहित अनधिसंभाव्यताओं से ग्रस्त नहीं होनी चाहिए । प्रस्तुत मामले में, अभिकथित रूप से अभि. सा. 12 को की गई न्यायिकेतर संस्वीकृति विश्वासोत्पादक नहीं है और यह दोषसिद्धि का आधार नहीं बन सकती है । अभियोजन पक्ष के अनुसार, अभिकथित संस्वीकृति के पश्चात् बुध राम और हर सरूप ने अपीलार्थी को अन्वेषण अधिकारी के समक्ष पेश किया और दलीप सिंह ने तारीख 19 मार्च, 1995 को गिरफ्तार किया । उसकी संस्वीकृति के आधार पर उसके मकान में रखे हुए संदूक से रक्तरंजित वस्त्र और खेत से चाकू बरामद किया गया । रक्तरंजित वस्त्रों के साथ-साथ चाकू भी न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला भेजे गए और अपीलार्थी के वस्त्रों पर मानव रक्त पाया गया । जहां रक्तरंजित वस्त्रों और चाकू का संबंध है, यह सामग्री विघटित थी । बुध राम को की गई न्यायिकेतर संस्वीकृति अति संदेहास्पद है और इन परिस्थितियों में रक्तरंजित वस्त्रों और चाकू की अभिकथित बरामदगी को अधिक महत्व नहीं दिया जा सकता है । तथ्यों और साक्ष्यों की समग्रता पर विचार करने पर, इस न्यायालय के मत में, अभियोजन पक्ष द्वारा अवलंब ली गई परिस्थितियां विश्वसनीय साक्ष्य द्वारा सिद्ध नहीं होती हैं और उनसे अपीलार्थी की दोषिता को इंगित करने वाली पूर्ण शृंखला का गठन नहीं होता है । सामान्यतः, उच्चतम न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन अधिकारिता का प्रयोग करते हुए साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन नहीं करता है । जब उच्चतम न्यायालय सामान्यतः साक्ष्य की पुनःपरीक्षा करने से विरत रहता है, तो उच्चतम न्यायालय तब निश्चित रूप से हस्तक्षेप करेगा जब अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गया साक्ष्य पूरी तरह विश्वसनीय न हो और उसके आधार पर दोषसिद्ध करना असुरक्षित हो । निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित की गई दोषसिद्धि भरोसेमंद साक्ष्य द्वारा समर्थित नहीं है और अभियोजन पक्ष अभियुक्त की दोषिता को युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध करने में असफल रहा है और संदेह का फायदा अपीलार्थी को दिया जाना चाहिए । (पैरा 12, 14, 16, 17, 18 और 19)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2012]	(2012) 6 एस. सी. सी. 403 : **सहदेवन** बनाम **तमिलनाडु राज्य** ;	17

[2007]	(2007) 2 एस. सी. सी. (क्रिमिनल) 590 : **बबलू** उर्फ **मुबारिक हुसैन** बनाम **राजस्थान राज्य** ;	7
[1984]	(1984) 4 एस. सी. सी. 116 : **शरद बिरधीचंद शारदा** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ।	7

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2008 की दांडिक अपील सं. 337.

1999 की दांडिक अपील सं. 87 में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ की खंड न्यायपीठ के तारीख 5 अप्रैल, 2006 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री जे. बी. मुदगिल, डी. सी. अहलावत और उमेश्वर वत्स (आर. सी. कौशिक की ओर से)

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री अरुण कुमार और संजय कुमार विसेन

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति (श्रीमती) आर. बानुमति ने दिया ।

न्या. (श्रीमती) बानुमति – अपीलार्थी ने इस अपील में भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और 449 के अधीन अपनी दोषसिद्धि और उसे दिए गए आजीवन कारावास, जिसकी पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय द्वारा दांडिक अपील सं. 87-डीबी/1999 में तारीख 5 अप्रैल, 2006 को पुष्टि की गई, की सत्यता को प्रश्नगत किया है ।

2. अभियोजन का पक्षकथन यह है कि सुखबीर सिंह (अभि. सा. 10) का भाई मृतक सतीश कुमार दिल्ली पुलिस में उप-निरीक्षक के रूप में कार्यरत था । सुखबीर सिंह और मृतक सतीश कुमार की गांव दुजाना में कृषि भूमि और एक कुक्कुट-पालन फार्म (मुर्गी-फार्म) भी था । मृतक सतीश कुमार अपने परिवार सहित तारीख 16 मार्च, 1995 को होली का पर्व मनाने के लिए गांव गया । उसकी पत्नी और बच्चे गांव दुजाना चले गए और सतीश कुमार कुक्कुट-पालन फार्म में रुक गया । दोनों भाइयों ने आतिशबाजी चलाकर होली मनाई और वे पूर्वाह्न के 2.00 बजे तक बातचीत करते रहे । सुखबीर सिंह सतीश कुमार को कुक्कुट-पालन फार्म में छोड़कर गांव में अपने घर आ गया । अगली सुबह अर्थात् 17 मार्च, 1995 को किशोर (अभि. सा. 19) ने सतीश कुमार को फर्श पर क्षतिग्रस्त पड़े हुए देखा और उसने इसके बारे में अभि. सा. 10 को सूचित किया । सुखबीर

सिंह (अभि. सा. 10) तुंरत फार्म पर गया और अपने भाई को उपचार के लिए एक मारूति कार में चिकित्सा महाविद्यालय और अस्पताल, रोहतक ले गया और पुलिस को घटना की संसूचना दी गई । जब झज्जर पुलिस थाने से पुलिस दल सतीश कुमार का कथन अभिलिखित करने के लिए अस्पताल गया तो डा. के. एस. भाटिया (अभि. सा. 6) ने यह राय व्यक्त की कि सतीश कुमार कथन करने की हालत में नहीं है । इसके पश्चात् पुलिस ने सुखबीर सिंह (अभि. सा. 10) का कथन अभिलिखित किया, जिसने यह कथन किया कि पूर्व रात्रि में लगभग 10.00/11.00 बजे गांव दुजाना का रहने वाला अपीलार्थी-अभियुक्त शराब के नशे में उनके फार्म पर आया था और अपनी साइकिल उनके फार्म पर खड़ी न करने देने और उनके फार्म पर शराब न पीने देने की बात का विरोध करते हुए उसके भाई सतीश कुमार के साथ गाली-गलौज की और अभियुक्त विजय शंकर ने यह कहते हुए उन्हें धमकी दी कि वह उन्हें होली मनाने लायक नहीं छोड़ेगा । सुखबीर सिंह के कथन के आधार पर झज्जर पुलिस थाने में भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन 1995 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 60 रजिस्ट्रीकृत की गई । डॉग-स्कवायड लाया गया और स्नीफर-डॉग पदचिह्नों का पीछा करते हुए अपीलार्थी की "बैठक" पर गया । गांव दुजाना के विद्या रत्तन (अभि. सा. 11) ने पुलिस को सूचित किया कि तारीख 16 मार्च, 1995/17 मार्च, 1995 की मध्यवर्ती रात्रि में लगभग 2.30 बजे पूर्वाह्न में जब वह अपनी गुम हुई भैंस को ढूंढने गया था तब उसने अभियुक्त को सतीश कुमार के कमरे से बाहर आते हुए देखा था । तारीख 19 मार्च, 1995 को अपीलार्थी ने कथित रूप से गांव दुजाना की ग्राम पंचायत के एक सदस्य बुध राम (अभि. सा. 12) को एक न्यायिकेतर संस्वीकृति की थी । क्षतिग्रस्त सतीश कुमार की क्षतियों के कारण तारीख 20 मार्च, 1995 को मृत्यु हो गई । उसकी मृत्यु के पश्चात् प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में परिवर्तन करके भारतीय दंड संहिता की धारा 302 लगाई गई । डा. सुभाष जुनेजा (अभि. सा. 13) ने सतीश कुमार के शव की मरणोत्तर परीक्षा की और यह राय व्यक्त की कि मृत्यु अनेक क्षतियों और उनकी जटिलताओं के कारण हुई, जो प्रकृति के मामूली अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त थीं । तारीख 19 मार्च, 1995 को अभियुक्त को गिरफ्तार किया गया और उसके कथन के आधार पर उसके वस्त्र और चाकू बरामद किए गए तथा न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला भेजे गए । सम्यक् अन्वेषण के पश्चात् अपीलार्थी के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और 449 के अधीन आरोप पत्र फाइल किया गया ।

3. अभियोजन पक्ष ने आरोपों को सिद्ध करने के लिए बीस साक्षियों की परीक्षा कराई और प्रतिरक्षा पक्ष की ओर से एक साक्षी की परीक्षा की गई । सेशन न्यायालय ने साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात् यह अभिनिर्धारित किया कि अभियोजन पक्ष ने अभियुक्त की दोषिता को युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध किया है और अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध किया और आजीवन कारावास का दंडादेश दिया तथा 2,000/- रुपए का जुर्माना, व्यतिक्रम खंड सहित, अधिरोपित किया । अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 449 के अधीन भी दोषसिद्ध किया गया और दस वर्ष के कठोर कारावास का दंडादेश दिया गया तथा 1,000/- रुपए का जुर्माना, व्यतिक्रम खंड सहित, अधिरोपित किया गया । अपीलार्थी ने दोषसिद्धि के निर्णय से व्यथित होकर उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की और उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय द्वारा दोषसिद्धि और कारावास के दंडादेश की पुष्टि की, जिसकी सत्यता को इस अपील में चुनौती दी गई है ।

4. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और धारा 449 के अधीन दंडनीय अपराध कारित करने की बाबत अंतर्ग्रस्त करने के लिए कोई प्रत्यक्ष साक्ष्य नहीं है । यह दलील दी गई कि अभियोजन पक्ष द्वारा परिस्थितियों को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किए बिना ही अभियुक्त को दोषसिद्ध किया गया । यह दलील दी गई कि निचले न्यायालयों ने विद्या रत्तन (अभि. सा. 11), जो कथित रूप से अपनी गुम हुई भैंस को ढूंढने के लिए अर्ध-रात्रि में अकेले गांव बुढा की ओर गया था, के साक्ष्य का अवलंब लेकर गलती की है जो पूर्णतः अविश्वसनीय है और निचले न्यायालयों ने अभि. सा. 11 के साक्ष्य को, जहां तक इसका अंतिम बार एक साथ देखे जाने की परिस्थिति से संबंध है, स्वीकार करके गंभीर गलती की है । अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि वस्त्रों और रक्तरंजित चाकू की बरामदगी किसी भी प्रकार से अभियुक्त को अपराध से नहीं जोड़ती है ।

5. इसके विपरीत, प्रत्यर्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि घटनास्थल पर पर्याप्त रोशनी थी और इस साक्षी ने अभियुक्त को पूरी तरह से पहचान लिया था तथा अभि. सा. 11 का साक्ष्य विश्वसनीय और भरोसेमंद है और निचले न्यायालयों ने इसे ठीक ही स्वीकार किया है । यह दलील दी गई कि अभियोजन पक्ष द्वारा अवलंब लिए गए पारिस्थितिक

साक्ष्य अर्थात् हेतु, अंतिम बार देखे जाने की बात, न्यायिकेतर संस्वीकृति और की गई बरामदगी को सटीक साक्ष्य द्वारा साबित किया गया है और निचले न्यायालयों ने अपीलार्थी-अभियुक्त को ठीक ही दोषसिद्ध किया है और दोषसिद्धि में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है ।

6. हमने परस्पर विरोधी दलीलों पर सावधानीपूर्वक विचार किया और साक्ष्य तथा आक्षेपित निर्णय का परिशीलन किया ।

7. घटना का कोई प्रत्यक्षदर्शी साक्षी नहीं है और संपूर्ण पक्षकथन पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित है । पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित किसी मामले में प्रसामान्य सिद्धांत यह है कि वे परिस्थितियां, जिनसे दोषिता का निष्कर्ष निकाला जाना है, सटीक और ठोस रूप से सिद्ध होनी चाहिए ; परिस्थितियां निश्चायक प्रवृत्ति की होनी चाहिए जो अचूक रूप से अभियुक्त की दोषिता की ओर इंगित करती हों ; परिस्थितियों पर संचयी रूप से विचार करने पर ऐसी पूर्ण श्रृंखला बननी चाहिए कि अवश्य ही ऐसा निष्कर्ष निकले कि सभी मानवीय अधिसंभाव्यताओं में अपराध अभियुक्त द्वारा ही किया गया था और उन परिस्थितियों में अभियुक्त की दोषिता के सिवाय और उसकी निर्दोषिता के असंगत किसी परिकल्पना का स्पष्टीकरण न दिया जा सकता हो । (**शरद बिरधीचंद शारदा** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाला मामला देखें) । **बबलू** उर्फ **मुबारिक हुसैन** बनाम **राजस्थान राज्य**[2] वाले मामले में इसी मत को दोहराया गया है ।

8. अभियोजन पक्ष ने अपने पक्षकथन को मुख्य रूप से इन परिस्थितियों पर आधारित किया – (i) हेतु ; (ii) अंतिम बार देखे जाने के सिद्धांत ; (iii) न्यायिकेतर संस्वीकृति ; (iv) डॉग-स्कवायड द्वारा पद-चिह्नों का अनुसरण करते हुए अभियुक्त की बैठक पर जाना ; और (v) रक्तरंजित वस्त्रों और चाकू की बरामदगी । उपरोक्त सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, हम यह परीक्षा करते हैं कि क्या अभियोजन पक्ष ने विश्वासप्रद साक्ष्य द्वारा परिस्थितियों को साबित किया है और क्या वे परिस्थितियां अचूक रूप से अभियुक्त की दोषिता को इंगित करती हैं ।

9. **हेतु** – जहां तक हेतु का संबंध है, मृतक के भाई सुखबीर सिंह (अभि. सा. 10) ने यह कथन किया कि अपीलार्थी-विजय शंकर उनके फार्म पर साइकिल खड़ा किया करता था और उसके भाई सतीश कुमार ने

---

[1] (1984) 4 एस. सी. सी. 116.

[2] (2007) 2 एस. सी. सी. (क्रिमिनल) 590.

घटना से लगभग पंद्रह दिन पहले साइकिल खड़ा करने को लेकर उसे डांटा था । अभि. सा. 10 ने यह भी कथन किया कि तारीख 16 मार्च, 1995/17 मार्च, 1995 की मध्यवर्ती रात्रि में अपीलार्थी नशे की हालत में फार्म पर आया और कहा कि चूंकि सतीश और यह साक्षी उसे अपनी साइकिल खड़ा नहीं करने दे रहे हैं और अपने फार्म पर उसे शराब नहीं पीने दे रहे हैं, इसलिए वह उन्हें होली मनाने लायक नहीं छोड़ेगा । अपीलार्थी, अभि. सा. 10 और मृतक सतीश कुमार का पड़ोसी है । अपीलार्थी और मृतक के परिवार के बीच पुरानी दुश्मनी का अभिकथन साबित नहीं किया गया है । अभि. सा. 10 के सिवाय, किसी अन्य स्वतंत्र साक्षी की यह साबित करने के लिए परीक्षा नहीं की गई कि सतीश कुमार ने अपीलार्थी को डांटा था और सुझाए गए हेतु और अभिकथित पुरानी दुश्मनी के बारे में गंभीर संदेह उत्पन्न होता है ।

10. अभि. सा. 10 के बयान के अनुसार, तारीख 16 मार्च, 1995 को उसका भाई सतीश कुमार होली का पर्व मनाने के लिए फार्म पर आया और उसके बच्चे गांव दुजाना में घर चले गए जबकि सतीश कुमार फार्म पर रुक गया और उन्होंने आतिशबाजी चलाकर होली का पर्व मनाया तथा तारीख 17 मार्च, 1995 की देर रात्रि तक बातचीत करते रहे और उसके पश्चात् वह अपने घर चला गया जबकि सतीश कुमार कुक्कुट-पालन फार्म पर रह गया । कुक्कुट-पालन फार्म में तीन नौकर थे, उनमें से दो उस कमरे से सटे कमरे में सो रहे थे जिसमें सतीश कुमार सो रहा था और तीसरा नौकर फार्म से कुछ दूरी पर खड़े ट्रक में सो रहा था । फार्म के किसी नौकर की परीक्षा नहीं कराई गई और इस बात से पुनः अभि. सा. 10 के साक्ष्य तथा सुझाए गए हेतु के बारे में संदेह उत्पन्न होता है ।

11. प्रत्येक मामले में, अभियोजन पक्ष पर यह बाध्यता नहीं होती है कि वह अपराध के हेतु को साबित करे । प्रायः, हेतु को अपराध की इस अधिसंभाव्यता को उच्चतर करने के लिए उपदर्शित किया जाता है कि अभियुक्त अपराध करने के लिए उस हेतु द्वारा प्रेरित हुआ था । हेतु के सबूत से अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य को केवल बल और महत्व मिल जाता है । यदि अभियोजन पक्ष हेतु के आधार पर अपने पक्षकथन को साबित कर देता है तो यह एक संपुष्टिकारी साक्ष्य होगा । किंतु यदि अभियोजन पक्ष हेतु के आधार पर अपने पक्षकथन को साबित करने में सफल नहीं रहा है तो यह अभियोजन के पक्षकथन को नकारने का आधार नहीं होगा और न ही इस बात से अभियोजन के पक्षकथन की

विश्वसनीयता कम हो जाती है । हेतु का सबूत न होने पर अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य की केवल सावधानीपूर्वक संवीक्षा करने की आवश्यकता होती है । वर्तमान मामले में हेतु के बारे में विश्वासप्रद साक्ष्य न होने पर साक्ष्य के निर्धारण के विषय में न्यायालय को चौकन्ना करता है और उच्च न्यायालय तथा विचारण न्यायालय द्वारा इस पहलू को ध्यान में नहीं रखा गया ।

12. **अंतिम बार देखे जाने का सिद्धांत** – विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी की दोषसिद्धि विद्या रत्तन (अभि. सा. 11), जिसने अपीलार्थी को अभिकथित रूप से तारीख 16 मार्च, 1995/17 मार्च, 1995 की मध्यवर्ती रात्रि में सतीश कुमार के कमरे से बाहर आते हुए देखा था, के साक्ष्य पर निर्भर रहते हुए मुख्य रूप से अंतिम बार देखे जाने के सिद्धांत के आधार पर की है । अभि. सा. 11 ने अपने साक्ष्य में यह कथन किया कि तारीख 16 मार्च, 1995/17 मार्च, 1995 की मध्यवर्ती रात्रि में उसकी भैंस उसके फार्म हाउस से गुम हो गई थी और इसलिए वह उसको ढूंढने के लिए गांव बुढा की ओर गया था । अभि. सा. 11 ने यह कथन किया कि रात्रि में चंद्रमा की रोशनी थी और लगभग 2.30 बजे पूर्वाह्न में जब वह दुजाना बस अड्डे पर पहुंचा, तो उसने अपीलार्थी-विजय शंकर को सतीश कुमार के कमरे से बाहर आते हुए देखा और उसने अभियुक्त को कमरे के बरामदे में लगे बल्ब की रोशनी में पहचान लिया था । अभि. सा. 11 ने आगे यह कथन किया कि उसके पश्चात् वह अपनी भैंस को ढूंढने गांव ढीघल गया । अभि. सा. 11 ने यह भी कथन किया कि जब वह 3.00 बजे अपराह्न में दुजाना आया तो उसने बस अड्डे पर लोगों की भीड़ देखी और उसे पता चला कि पूर्व रात्रि में किसी ने सतीश कुमार की चाकू से क्षतियां कारित करके हत्या कर दी है और 10/15 मिनट पश्चात् पुलिस घटनास्थल पर आई और अभि. सा. 11 ने जो कुछ पूर्व रात्रि में देखा था उसे पुलिस को बताया । अभियोजन पक्ष ने दोषिता को सिद्ध करने के लिए अभि. सा. 11 के इस साक्ष्य का पुरजोर अवलंब लिया कि अभियुक्त अंतिम बार मृतक के साथ देखा गया था ।

13. अभि. सा. 11 के साक्ष्य को यह दलील देते हुए चुनौती दी गई कि अभि. सा. 11 एक विश्वसनीय साक्षी नहीं है और यह कि वह साठ एकड़ भूमि का स्वामी है और उसका एक पट्रोल पंप भी है, यह बात पूर्णतः अविश्वसनीय है कि वह अर्ध-रात्रि में भैंस को ढूंढने के लिए एक गांव से दूसरे गांव गया था । अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने मोडीज़

मेडिकल जुरिसप्रुडेंस एंड टोक्सिकोलॉजी, 19वां संस्करण, पृष्ठ सं. 61 के पैरा (2) का यह दलील देने के लिए अवलंब लिया कि टिडी के अनुसार, "चंद्रमा की पूरी साफ रोशनी में सत्रह गज की दूरी से परे से पूरी तरह जाने-पहचाने व्यक्ति को भी नहीं पहचाना जा सकता है......." और यह पूरी तरह असंभव है कि अभि. सा. 11 ने अभियुक्त-अपीलार्थी को इतनी ज्यादा दूरी से इतना साफ-साफ देख लिया था ।

14. क्योंकि अभियोजन का पक्षकथन मुख्य रूप से अभि. सा. 11 के साक्ष्य पर टिका है, इसलिए इस बात पर सावधानीपूर्वक विचार किया जाना आवश्यक है कि क्या उच्च न्यायालय और विचारण न्यायालय ने अभि. सा. 11 के साक्ष्य का उचित रूप से मूल्यांकन किया है और क्या निचले न्यायालयों ने अभि. सा. 11 के साक्ष्य पर आधारित अभियोजन के पक्षकथन को स्वीकार करके ठीक किया है । अभि. सा. 11 गांव ढीघल का निवासी है । यदि हम अभि. सा. 11 की आर्थिक स्थिति पर विचार करें तो स्वीकृत रूप से वह साठ एकड़ भूमि का स्वामी है और एक पेट्रोल पंप भी है । यह विश्वास करना पूर्णतः अनधिसंभाव्य है कि वह अर्ध-रात्रि में अपनी भैंस को ढूंढने अकेले गांव दुजाना से ढीघल जा रहा था, जो कि दस किलोमीटर की दूरी पर है । विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करने में गलती की कि अभि. सा. 11 के साक्ष्य की उपेक्षा नहीं की जा सकती है क्योंकि एक धनी व्यक्ति भी तुच्छ वस्तुओं की चोरी को गंभीरता से ले सकता है और उसे ढूंढने का पूरा प्रयास कर सकता है । यह बात पूर्णतः अस्वाभाविक है कि अभि. सा. 11 अर्ध-रात्रि में किसी को बताए बिना और न ही किसी को साथ लेकर अकेला गया था । इसके अतिरिक्त, जैसा कि सुखबीर सिंह (अभि. सा. 10) द्वारा बताया गया, उस कमरे की दूरी जहां सतीश कुमार सो रहा था और गांव दुजाना जाने वाली सड़क की दूरी तीन किल्ला है अर्थात् कमरे से उत्तरी दिशा और दक्षिण दिशा तथा पश्चिम दिशा में तीन एकड़ है जहां उनके खेत हैं और विद्या रत्तन (अभि. सा. 11) के बयान के अनुसार उसने अपीलार्थी को चन्द्रमा की रोशनी में और कमरे के बरामदे में लगे बिजली के बल्ब की रोशनी में पच्चीस फुट की दूरी से पहचाना था । यह पूर्णतः अनधिसंभाव्य है कि अभि. सा. 11 ने रात्रि में इतनी लंबी दूरी से अभियुक्त को पहचान लिया था ।

15. यदि अभियोजन पक्ष अंतिम बार देखे जाने की कहानी सिद्ध कर देता है तो अभियुक्त के विरुद्ध निष्कर्ष निकाला जा सकता है और उससे उसकी दोषिता का निष्कर्ष निकाला जा सकता है । अभि. सा. 11 के

साक्ष्य और अनधिसंभाव्यताओं पर विचार करते हुए अभि. सा. 11 के साक्ष्य से न तो विश्वास उत्पन्न होता है और न ही इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि अपीलार्थी को अंतिम बार मृतक के साथ देखा गया था । जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, अभि. सा. 10 और सतीश कुमार के तीन नौकर थे, उनमें से दो उस कमरे से सटे कमरे में सो रहे थे जहां मृतक सतीश कुमार सो रहा था और तीसरा फार्म से कुछ दूरी पर खड़े ट्रक में सो रहा था । मरणोत्तर परीक्षा प्रमाणपत्र, प्रदर्श पीएस, से यह दर्शित होता है कि मृतक को गर्दन, छाती और ऊपरी भुजा पर कई क्षतियां पहुंची थीं । मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट से यह भी दर्शित होता है कि मृतक सतीश कुमार हष्ट-पुष्ट और स्वस्थ था । अधिसंभाव्यतः, मृतक ने विरोध किया होगा और शोर मचाया होगा, किंतु यह पूरी तरह से अनधिसंभाव्य है कि फार्म के नौकरों ने कोई शोर नहीं सुना और कोई भी नौकर मृतक सतीश कुमार को बचाने के लिए नहीं आया और यह बात पुनः अभियोजन के पक्षकथन के बारे में गंभीर संदेह उत्पन्न करती है ।

16. **न्यायिकेतर संस्वीकृति** – अभियोजन पक्ष द्वारा अवलंब ली गई एक अन्य परिस्थिति अपीलार्थी द्वारा अभिकथित रूप से बुध राम (अभि. सा. 12) को की गई न्यायिकेतर संस्वीकृति है । अभि. सा. 12 ने यह कथन किया कि वह ग्राम पंचायत दुजाना का सदस्य है और तारीख 19 मार्च, 1995 को विजय शंकर-अपीलार्थी उसके निवास पर आया जहां हर सरूप नम्बरदार भी मौजूद था । अभि. सा. 12 ने यह कथन किया कि विजय शंकर ने मृतक सतीश कुमार को क्षतियां पहुंचाने की न्यायिकेतर संस्वीकृति की और अभि. सा. 12 से अनुरोध किया कि उसे बचा ले । जब अभि. सा. 12 केवल ग्राम पंचायत का एक सदस्य था न कि पुलिस के पास प्रभाव रखने वाला व्यक्ति, तब यह संदेहास्पद है कि अपीलार्थी-विजय शंकर न्यायिकेतर संस्वीकृति करने के लिए उसके पास गया और अपने को बचाने का अनुरोध किया । इस प्रक्रम पर, अभि. सा. 10 से उसकी प्रतिपरीक्षा में पूछे गए प्रश्न का उल्लेख करना सुसंगत है । अभि. सा. 10 से प्रतिपरीक्षा में यह पूछा गया था कि उसने बदलू के भाई बुध राम गुज्जर को अपनी दुकान इस शर्त पर किराए पर दी थी कि बुध राम गुज्जर मामले में अभिसाक्ष्य देगा और इसलिए अभि. सा. 12 को एक स्वतंत्र साक्षी नहीं कहा जा सकता है ।

17. **सहदेवन** बनाम **तमिलनाडु राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय

[1] (2012) 6 एस. सी. सी. 403.

द्वारा न्यायिकेतर संस्वीकृति के साक्ष्यिक महत्व और विश्वसनीयता के संबंध में सिद्धांत प्रतिपादित किए गए हैं जो निम्नलिखित हैं :–

> "(i) न्यायिकेतर संस्वीकृति अपने आप में एक कमजोर साक्ष्य होता है । न्यायालय द्वारा अधिक सावधानी से इसकी परीक्षा की जानी चाहिए ;
>
> (ii) यह स्वेच्छया की जानी चाहिए और सच्ची होनी चाहिए ;
>
> (iii) यह विश्वासोत्पादक होनी चाहिए ;
>
> (iv) न्यायिकेतर संस्वीकृति की विश्वसनीयता और साक्ष्यिक महत्व तब और अधिक हो जाता है, यदि इसका सटीक परिस्थितियों की शृंखला द्वारा समर्थन होता है और अन्य अभियोजन साक्ष्य द्वारा भी संपुष्टि होती है ;
>
> (v) न्यायिकेतर संस्वीकृति के आधार पर दोषसिद्धि किए जाने के लिए यह किसी प्रकार की तात्विक कमियों या अंतर्निहित अनधिसंभाव्यताओं से ग्रस्त नहीं होनी चाहिए ;
>
> (vi) ऐसा कथन आवश्यक रूप से किसी अन्य तथ्य की तरह और विधि के अनुसार साबित किया जाना चाहिए ।"

न्यायिकेतर संस्वीकृति एक कमजोर साक्ष्य होता है और न्यायालयों को इस पर अधिक सावधानी से विचार करना होता है । न्यायिकेतर संस्वीकृति के आधार पर दोषसिद्धि करने के लिए यह किसी प्रकार की तात्विक कमियों और अंतर्निहित अनधिसंभाव्यताओं से ग्रस्त नहीं होनी चाहिए । प्रस्तुत मामले में, अभिकथित रूप से अभि. सा. 12 को की गई न्यायिकेतर संस्वीकृति विश्वासोत्पादक नहीं है और यह दोषसिद्धि का आधार नहीं बन सकती है ।

18. **बरामदगी** – अभियोजन पक्ष के अनुसार, अभिकथित संस्वीकृति के पश्चात् बुध राम (अभि. सा. 12) और हर सरूप ने अपीलार्थी को अन्वेषण अधिकारी के समक्ष पेश किया और दलीप सिंह (अभि. सा. 20) ने तारीख 19 मार्च, 1995 को गिरफ्तार किया । उसकी संस्वीकृति के आधार पर उसके मकान में रखे हुए संदूक से रक्तरंजित वस्त्र और खेत से चाकू बरामद किया गया । रक्तरंजित वस्त्रों के साथ-साथ चाकू भी न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला भेजे गए और अपीलार्थी के वस्त्रों पर मानव रक्त पाया गया । जहां रक्तरंजित वस्त्रों और चाकू का संबंध है, यह सामग्री विघटित

थी । जैसी कि पहले चर्चा की गई है, बुध राम (अभि. सा. 12) को की गई न्यायिकेतर संस्वीकृति अति संदेहास्पद है और इन परिस्थितियों में रक्तरंजित वस्त्रों और चाकू की अभिकथित बरामदगी को अधिक महत्व नहीं दिया जा सकता है ।

19. तथ्यों और साक्ष्यों की समग्रता पर विचार करने पर, हमारे मत में, अभियोजन पक्ष द्वारा अवलंब ली गई परिस्थितियां विश्वसनीय साक्ष्य द्वारा सिद्ध नहीं होती हैं और उनसे अपीलार्थी की दोषिता को इंगित करने वाली पूर्ण श्रृंखला का गठन नहीं होता है । सामान्यतः, उच्चतम न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन अधिकारिता का प्रयोग करते हुए साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन नहीं करता है । जब उच्चतम न्यायालय सामान्यतः साक्ष्य की पुनःपरीक्षा करने से विरत रहता है, तो उच्चतम न्यायालय तब निश्चित रूप से हस्तक्षेप करेगा जब अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किया गया साक्ष्य पूरी तरह विश्वसनीय न हो और उसके आधार पर दोषसिद्ध करना असुरक्षित हो । निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित की गई दोषसिद्धि भरोसेमंद साक्ष्य द्वारा समर्थित नहीं है और अभियोजन पक्ष अभियुक्त की दोषिता को युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध करने में असफल रहा है और संदेह का फायदा अपीलार्थी को दिया जाना चाहिए ।

20. परिणामतः, उच्च न्यायालय का निर्णय अपास्त किया जाता है और यह अपील मंजूर की जाती है । अपीलार्थी को आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है । अपीलार्थी जमानत पर है और उसके जमानत बंधपत्र उन्मोचित हो जाएंगे ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

[2015] 4 उम. नि. प. 153

न्यायमूर्ति के. एस. पुट्टास्वामी (सेवानिवृत्त) और एक अन्य

बनाम

भारत संघ और अन्य

11 अगस्त, 2015

न्यायमूर्ति जे. चेलमेश्वर, न्यायमूर्ति एस. ए. बोबडे और न्यायमूर्ति सी. नागप्पन

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 21 – एकांतता का अधिकार – आधार कार्ड स्कीम – संविधान के अनुच्छेद 21 के अधीन एकांतता का अधिकार मूल अधिकार के रूप में उपवर्णित नहीं है बल्कि अनुच्छेद 21 से परिलक्षित किया गया है – सरकार उक्त स्कीम के अधीन निवासियों के जन सांख्यिकी और जीव सांख्यिकी दोनों के आंकड़े एकत्रित और संगृहीत कर रही है जिसका उपयोग विभिन्न प्रयोजनों के लिए किया जाना है – निवासियों के जन सांख्यिकी और जीव सांख्यिकी आंकड़ों का संग्रहण उनके एकांतता के मूल अधिकार का अतिक्रमण है या नहीं – मामला वृहत्तर न्यायपीठ को निर्दिष्ट किया गया ।

इन मामलों में "आधार कार्ड स्कीम" के रूप में विख्यात भारत सरकार द्वारा प्रतिपादित स्कीम की चुनौती विभिन्न आधारों पर दी गई है । इस आदेश के प्रयोजन के लिए स्कीम की प्रकृति और विभिन्न आधार जिन पर स्कीम की चुनौती दी गई है पर विस्तार से विचार करना हमारे लिए आवश्यक नहीं है । इतना ही कहना पर्याप्त है कि उक्त स्कीम के अधीन भारत सरकार विभिन्न प्रयोजनों के लिए उपयोग में लाए जाने हेतु इस देश के निवासियों के जन सांख्यिकी और जीव सांख्यिकी दोनों आंकड़े एकत्रित और संगृहीत कर रही है जिसका ब्यौरा इस समय सुसंगत नहीं है । स्कीम पर आक्रमण का एक आधार यह है कि जीव सांख्यिकी आंकड़ों का ऐसा एकत्रीकरण "एकांतता के अधिकार" का अतिक्रमणकारी है । कुछ याचियों का यह प्राख्यान है कि एकांतता का अधिकार भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के अधीन विवक्षित है जबकि अन्य याचियों का यह प्राख्यान है कि ऐसा अधिकार न केवल अनुच्छेद 21 से बल्कि भारत के संविधान के भाग 3 के अधीन प्रत्याभूत मूल अधिकारों से सन्निविष्ट विभिन्न अन्य अनुच्छेदों से भी प्रकट होता है । उच्चतम न्यायालय द्वारा मामले को भारत

के माननीय मुख्य न्यायमूर्ति के समक्ष प्रस्तुत करने का निदेश देते हुए,

अभिनिर्धारित – न्यायालय की यह राय है कि प्रस्तुत मामले संविधान के निर्वचन के लिए एक दूरगामी महत्वपूर्ण प्रश्न पैदा करते हैं । यह बात दांव पर लगी है कि अनुच्छेद 21 के अधीन उस बहुमूल्य और असंक्राम्य अधिकार सहित मूल अधिकारों की महत्ता क्या है । यदि एम. पी. शर्मा और खड़क सिंह वाले मामलों में व्यक्त विचारों को शब्दशः पढ़ा जाए और इस देश की विधि के रूप में स्वीकार किया जाए तो भारत के संविधान के अधीन प्रत्याभूत मूल अधिकार और अति विशिष्टता अनुच्छेद 21 के अधीन स्वतंत्रता का अधिकार अपने ओज और जीवन शक्ति खो देगा । वहीं न्यायालय की यह भी राय है कि संस्थागत गरिमा और न्यायिक अनुशासन की यह अपेक्षा है कि इस न्यायालय के वृहत्तर न्यायपीठों द्वारा दिए गए निर्णय को ऐसे बृहत्तर न्यायपीठ द्वारा दिए गए निर्णय का अनुसरण न करने के लिए समुचित कारण बताए बिना छोटे न्यायपीठों द्वारा उपेक्षित नहीं किया जा सकता । ऐसे सभी विद्वान् न्यायाधीश जिन्होंने पश्चात्वर्ती निर्णय दिए को सम्यक् सम्मान देते हुए, जहां एकांतता के अधिकार को मानव जाति की स्वतंत्रता के लिए माननीय न्यायाधीशों द्वारा प्राख्यान किया गया है या चिंता व्यक्त की गई है, न्यायालय की यह विनम्र राय है कि इस न्यायालय द्वारा घोषित विधि में कुछ हद तक प्रकट अनसुलझा विरोध प्रतीत होता है । अतः एक बार हमेशा के लिए मामलों के समूह में उठाए गए संविवाद से छुटकारा दिलाने के लिए न्यायालय की राय में यह बेहतर है कि एम. पी. शर्मा और खड़क सिंह वाले मामलों के तर्काधार की संवीक्षा की जाए और इस न्यायालय के पश्चात्वर्ती विनिश्चयों की विधि शास्त्रीय शुद्धता जहां एकांतता के अधिकार का प्राख्यान या निर्दिष्ट किया गया है, को समुचित संख्या वाले न्यायपीठ द्वारा परीक्षा की जाए और प्राधिकृत रूप से विनिश्चय किया जाए । (पैरा 12 और 13)

अंतरिम आदेश

1. भारत संघ रेडियो और टेलीविजन सहित इलेक्ट्रानिक और प्रिंट मीडिया में व्यापक रूप से यह प्रचार करेगा कि आधार कार्ड अभी प्राप्त करना किसी नागरिक के लिए आज्ञापक नहीं है ।

2. आधार कार्ड का प्रस्तुतीकरण किसी नागरिक को अन्यथा देय किसी फायदे को अभिप्राप्त करने के लिए शर्त नहीं होगी ।

3. विशिष्ट पहचान संख्या या आधार कार्ड का उपयोग प्रत्यर्थियों द्वारा

पी. डी. एस. स्कीम और विशेषकर खाद्यान्न आदि और मिट्टी के तेल जैसे खाना पकाने के ईंधन के वितरण के प्रयोजन से भिन्न किसी प्रयोजन के लिए नहीं किया जाएगा । आधार कार्ड का उपयोग एल. पी. जी. वितरण स्कीम के प्रयोजन के लिए किया जा सकेगा ।

4. आधार कार्ड जारी करते समय भारतीय विशिष्ट पहचान प्राधिकरण द्वारा अभिप्राप्त किसी व्यक्ति से संबंधित जानकारी को उपरोक्त के सिवाय जहां आपराधिक अन्वेषण के प्रयोजन के लिए न्यायालय द्वारा निदेश किया जाए किसी नए प्रयोजन के लिए नहीं किया जाएगा । (पैरा 14)

विनिर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[1997]	(1997) 1 एस. सी. सी. 301 : **पीपुल्स यूनियन फार सिविल लिबर्टीज (पी. यू. सी. एल.)** बनाम **भारत संघ और एक अन्य** ;	4
[1994]	(1994) 6 एस. सी. सी. 632 : **आर. राजगोपाल और एक अन्य** बनाम **तमिलनाडु राज्य और एक अन्य** ;	4
[1975]	(1975) 2 एस. सी. सी. 148 : **गोविन्द** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य और एक अन्य** ;	4
[1963]	ए. आई. आर. 1963 एस. सी. 1295 : **खड़ग सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** ;	3
[1954]	ए. आई. आर. 1954 एस. सी. 300 : **एम. पी. शर्मा और अन्य** बनाम **सतीश चंद्र और अन्य** ।	3

आरंभिक (सिविल) अधिकारिता : 2012 की रिट याचिका (सिविल) सं. 494 के साथ 2013 का अंतरित मामला (सिविल) सं. 151 और 152, 2013 की सिविल याचिका (सिविल) सं. 829, 833 और 932, 2014 की अंतरण याचिका (सिविल) सं. 312 और 313, 2015 की रिट याचिका

(सिविल) सं. 37 और 220, 2015 की अंतरण याचिका (सिविल) सं. 921, 2012 की रिट याचिका (सिविल) सं. 494 में 2014 की अवमान याचिका (सिविल) सं. 144, 2012 की रिट याचिका (सिविल) सं. 494 में 2015 की अवमान याचिका (सिविल) सं. 470.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 32 के अधीन रिट याचिका ।

पक्षकारों की ओर से सर्वश्री मुकुल रोहतगी, ए. मरियारपुत्थम, महाधिवक्ता, (सुश्री) पिंकी आनंद, अपर महा सालिसिटर, श्याम दीवान, गोपाल सुब्रमनियम, सोली सोराबजी, अनील बी. दीवान, ए. के. सांघी (सुश्री) मिनाक्षी अरोरा, के. के. वेनुगोपाल, जयंत भूषण, जे. एस. अत्री, अशोक देसाई, सज्जन पुवैय्या, अजीत कुमार सिन्हा, ज्येष्ठ अधिवक्ता, सूर्यनारायण सिंह, ज्येष्ठ अपर महाधिवक्ता, संचार आनंद, शिव मंगल शर्मा, अपर महाधिवक्ता, आयुश अग्रवाल, (सुश्री) प्रसन्ना एस., (सुश्री) निहारिका, प्रताप वेनुगोपाल, गौरव नायर (मैसर्स के. जे. जॉन एंड कंपनी की ओर से), (सुश्री) ऐश्वरया भाटी, तल्हा अब्दुल रहमान, प्रतीक चड्डा, अंकुर कश्यप, कुशाग्र पांडे, (सुश्री) अनुशा रमेश, रुद्र प्रताप, सारांश कुमार, अनीरबन सेन, (सुश्री) नेहा मीना, (सुश्री) मधुरिमा घोष, टी. गोपाल, अंकित गोयल, संजय कुमार यादव, अनीश कुमार गुप्ता, (श्रीमती) गीता

कोविलन, पी. आर. कोविलन, एस. एस. रावत, डी. एस. मेहरा, राहुल नारायण, मोहित सिंह, विजय कुमार, अमीत मेहरिया, धृतिमान दास (मैसर्स मेहरिया एंड कंपनी की ओर से), डा. अभिषेक अत्रे सेल्ला कुमार, सुमीत रजोरा, आर. बालासुब्रमनियम, अजय शर्मा, (सुश्री) देवानशी सिंह, (सुश्री) बिनू तमता, जोहेद हुसैन, (सुश्री) कृतिका सचदेवा, (सुश्री) रनजीता रोहतगी, वकुल शर्मा, (सुश्री) मिनाक्षी ग्रोवर, करन सेठ, गोपाल शंकरनारायणन, (सुश्री) प्रेरणा प्रियादर्शनी, अंकुर तलवार, (सुश्री) निधि, (सुश्री) सविता सिंह, एस. उदय कुमार सागर, कृष्णा कुमार सिंह, कुलदीप एस. परिहार, एच. एस. परिहार, जे. एम. कालिया, निनाद लॉड, करन माथुर, जयंत मोहन, के. वी. जगदेश्वरन, (सुश्री) जी. इंदिरा, मैसर्स कारपोरेट ला ग्रुप, वरिन्दर कुमार शर्मा, (सुश्री) प्रगती नीखरा, नचीकेता जोशी, निशांत कतनेश्वरकर, ई. सी. अग्रवाल, अभिनव मुखर्जी, (सुश्री) बिहू शर्मा, गुंतुर प्रभाकर, (सुश्री) प्रेरणा सिंह, जितिन्दर के. भाटिया, बी. बालाजी, आर. राकेश शर्मा, मिश्रा सौरभ, सपम विश्वजीत मेहते, जेड. एच. इस्साक हैदिंग, एस. विजयानंद शर्मा, अशोक कुमार सिंह, के. एन. मधुसूधनन, टी. जे. एन. नायर, (सुश्री) अरुना माथुर, युसूफ खान, के. विजय कुमार, मैसर्स अर्पुथम अरुना एंड कंपनी, (सुश्री) के. एनातोली सेमा, एडवर्ड

बेल्हो, अमित कुमार सिंह, एस. के. मेंदिरत्ता, (सुश्री) मोनिशा नंदा, मोहित डी. राम, प्रवीण सेहरावत, प्रियादर्शी बनर्जी, सारांश जैन, गोपाल सिंह, रितुराज विश्वास, (सुश्री) रशमी श्रीवास्तव, अनिल श्रीवास्तव, (सुश्री) विमला सिन्हा, जॉय स्केरिया, रीगन एस. बेल, अपूर्व सिंघल, जगजीत सिंह छाबरा, तपेश कुमार सिंह, मो. वकास, सी. डी. सिंह, (सुश्री) सिलोना महापात्रा, वी. जी. प्रगासम, प्रभू रामासुब्रमनियम, प्रवीन सेहरावत, निखिल नय्यर, (सुश्री) अनीता शेनोय, सौमित्रा जी. चौधुरी, अनीप सचदे, (सुश्री) अभिनंदिनी शर्मा, निशित अग्रवाल, (सुश्री) अंजली चौहान, श्रेय कपूर, सौरभ राजपाल, मिलिन्द कुमार, (सुश्री) रुचि कोहली, अनिरुद्धा पी. मायी, गर्वेश कब्रा, सुश्री हेमंतिका वाही, (सुश्री) जेसल वाही, (सुश्री) विनाक्षी कादान, साईंकृष्णा राजागोपाल, अर्जुन रंगनाथन, (सुश्री) जुलीयन जॉर्ज, के. सी. सुचरिता, कमल मोहन गुप्ता, दिनकर कालरा, अमित शर्मा, और टी. जी. नारायण नैयर, अधिवक्ता

आदेश

इन मामलों में "आधार कार्ड स्कीम" के रूप में विख्यात भारत सरकार द्वारा प्रतिपादित स्कीम की चुनौती विभिन्न आधारों पर दी गई है । इस आदेश के प्रयोजन के लिए स्कीम की प्रकृति और विभिन्न आधार जिन पर स्कीम की चुनौती दी गई है पर विस्तार से विचार करना हमारे लिए आवश्यक नहीं है । इतना ही कहना पर्याप्त है कि उक्त स्कीम के अधीन भारत सरकार विभिन्न प्रयोजनों के लिए उपयोग में लाए जाने हेतु इस देश के निवासियों के जन सांख्यिकी और जीव सांख्यिकी दोनों आंकड़े एकत्रित

और संगृहित कर रही है जिसका ब्यौरा इस समय सुसंगत नहीं है ।

2. स्कीम पर आक्रमण का एक आधार यह है कि जीव सांख्यिकी आंकड़ों का ऐसा एकत्रीकरण "एकांतता के अधिकार" का अतिक्रमणकारी है । कुछ याचियों का यह प्राख्यान है कि एकांतता का अधिकार भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के अधीन विवक्षित है जबकि अन्य याचियों का यह प्राख्यान है कि ऐसा अधिकार न केवल अनुच्छेद 21 से बल्कि भारत के संविधान के भाग 3 के अधीन प्रत्याभूत मूल अधिकारों से सन्निविष्ट विभिन्न अन्य अनुच्छेदों से भी प्रकट होता है ।

3. जब मामला सुनवाई के लिए आया तो श्री मुकुल रोहतगी विद्वान् महान्यायवादी ने यह निवेदन किया कि **एम. पी. शर्मा और अन्य** बनाम **सतीश चंद्र और अन्य**[1] और **खड़ग सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य**[2] (क्रमशः 8 और 6 न्यायाधीशों द्वारा विनिश्चित) वाले मामलों में इस न्यायालय के निर्णयों को ध्यान में रखते हुए एकांतता के मूल अधिकार के अस्तित्व से संबंधित विधिक स्थिति संदेहास्पद है । इसके अतिरिक्त विद्वान् महान्यायवादी ने यह भी निवेदन किया कि बाद में दिए गए इस न्यायालय के अनेक विनिश्चयों में इस न्यायालय ने पूर्वोक्त मामलों के विनिश्चयों के प्रतिकूल "एकांतता के अधिकार" को निर्दिष्ट किया जिसका परिणाम यह हुआ कि विधिशास्त्र की दृष्टि से न्यायिक राय की अननुज्ञेय विषमता है :–

> "तलाशी और अधिग्रहण की शक्ति विधिशास्त्र की किसी प्रणाली में सामाजिक सुरक्षा के संरक्षण के लिए राज्य की अभिभावी शक्ति है और अनिवार्यतः ही उस शक्ति का विनियमन विधि द्वारा किया जाता है । जब संविधान निर्माताओं ने **एकांतता को मूल अधिकार की मान्यता प्रदान करते हुए** संवैधानिक परिसीमाओं के भीतर ऐसे विनियमन को न लाने के लिए उचित समझा तो अमेरिकी चौथे संशोधन के समतुल्य **हमारे पास अस्वाभाविक अर्थान्वयन के किसी प्रक्रिया द्वारा बिल्कुल भिन्न मूल अधिकार में इसे परिलक्षित करने का कोई औचित्य नहीं है** । [एम. पी. सी और अन्य **बनाम** सतीश चंद्र और अन्य (ए. आई. आर. 1954 एस. सी. 300 पृ. 306 पैरा 18 देखें)] ।"

> "...... न ही क्या हम विचार कर सकते हैं कि अनुच्छेद 21 का संदर्भ में कोई महत्व है जैसाकि याची के विद्वान् काउंसेल द्वारा इंगित

[1] ए. आई. आर. 1954 एस. सी. 300.

[2] ए. आई. आर. 1963 एस. सी. 1295.

किया गया है । जैसाकि पहले ही इंगित किया गया है, **एकांतता का अधिकार हमारे संविधान के अधीन प्रत्याभूत अधिकार नहीं है** अतः ऐसे किसी व्यक्ति के संचरण को सुनिश्चित करने का प्रयास जो मात्र ऐसी रीति है जिसमें एकांतता पर आक्रमण किया गया है, भाग 3 द्वारा प्रत्याभूत मूल अधिकार का अतिलंघन नहीं है । [खड़ग सिंह **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य, (ए. आई. आर. 1963 एस. सी. 1295, पृ. 1303, पैरा 20 देखें)] ।"

(बल देने के लिए मोटे अक्षर में लिखा गया)

4. विद्वान् महान्यायवादी ने यह निवेदन किया कि **गोविन्द** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य और एक अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के निर्णय से राय की ऐसी अननुज्ञेय विषमता आरंभ हुई जो इस न्यायालय के पश्चात्वर्ती विनिश्चय के लिए आधार गठित किया जिसमें "एकांतता के अधिकार" का प्राख्यान किया गया या कम से कम निर्दिष्ट किया गया । ऐसे मामलों में सबसे महत्वपूर्ण मामले **आर. राजगोपाल और एक अन्य** बनाम **तमिलनाडु राज्य और एक अन्य**[2] (ऑटो शंकर वाले मामले के रूप में विख्यात) और **पीपुल्स यूनियन फार सिविल लिबर्टीज (पी. यू. सी. एल.)** बनाम **भारत संघ और एक अन्य**[3] हैं ।

5. उपरोक्त निर्दिष्ट सभी निर्णय दो या तीन न्यायाधीशों के छोटे न्यायपीठों द्वारा दिए गए थे ।

6. एक प्रत्यर्थी की ओर से उपस्थित विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री के. के. वेणुगोपाल ने यह निवेदन किया कि **गोविन्द** (पूर्वोक्त) वाले मामले में इस न्यायालय का विनिश्चय **एम. पी. शर्मा** (पूर्वोक्त) और **खड़क सिंह** (पूर्वोक्त) वाले मामलों में इस न्यायालय के विनिश्चयों से संगत नहीं है । उन्होंने यह निवेदन किया कि ऐसी विषमता पर ध्यान शिक्षाविदों, श्री एफ. एस. नरिमन इस न्यायालय के ज्येष्ठ अधिवक्ता और श्री ए. एम. भट्टाचार्यजी, कलकत्ता और बम्बई उच्च न्यायालय के भूतपूर्व मुख्य न्यायमूर्ति ने भी दिया ।

7. अतः, विद्वान् महान्यायवादी और श्री वेणुगोपाल द्वारा यह निवेदन किया गया कि विधिक स्थिति को स्थिर करने के लिए मामलों के इस समूह को इस न्यायालय के बृहत न्यायपीठ द्वारा सुने जाने की अपेक्षा है

---

[1] (1975) 2 एस. सी. सी. 148.

[2] (1994) 6 एस. सी. सी. 632.

[3] (1997) 1 एस. सी. सी. 301.

क्योंकि ये मामले महत्वपूर्ण प्रश्नों – (i) क्या हमारे संविधान के अधीन कोई "एकांतता का अधिकार" प्रत्याभूत है ; (ii) यदि ऐसा अधिकार विद्यमान है तो इसका स्रोत क्या है और ऐसे अधिकार की रूपरेखा क्या है क्योंकि एकांतता के अधिकार को रेखांकित करने के लिए संविधान में कोई व्यक्त उपबंध नहीं है, बहस करने का विषय पैदा करते हैं । अतः यह निवेदन किया गया कि मामलों के इन समूहों को भारत के संविधान के अनुच्छेद 145(3)[1] के अधीन अधिदेश को ध्यान में रखते हुए कम से कम पांच न्यायाधीशों के बृहत न्यायपीठ द्वारा सुने जाने और विनिश्चय किए जाने की अपेक्षा है ।

8. याचियों की ओर से ज्येष्ठ विद्वान् काउंसेल श्री गोपाल सुब्रमणियम और श्री श्याम दिवान ने बहुत दृढ़तापूर्वक इस सुझाव का विरोध किया कि मामलों के इस समूह को बृहत्तर न्यायपीठ द्वारा सुनने की अपेक्षा है । उनके अनुसार :–

(i) **आर. राजगोपाल** (पूर्वोक्त) और **पी. यू. सी. एल.** (पूर्वोक्त) वाले मामलों में इस न्यायालय द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष इस कारण वैधतः मान्य हैं कि हमारे संविधान के अधीन एकांतता के अधिकार से संबंधित **एम. पी. शर्मा** (पूर्वोक्त) वाले मामले में की गई मताभिव्यक्तियां उस मामले के तर्काधार का भाग नहीं हैं इसलिए पश्चात्वर्ती छोटे न्यायपीठों पर आबद्धकर नहीं हैं ।

(ii) अब हम **खड़क सिंह** (पूर्वोक्त) वाले मामले पर विचार करते हैं जिसमें खड़क सिंह वाले मामले में बहुमत ने यह अभिनिर्धारित किया कि राज्य और उसके अधिकारियों द्वारा उसके निवास को अस्त-व्यस्त न करने के व्यक्ति के अधिकार को अनुच्छेद 21 के अधीन प्रत्याभूत मूल अधिकार

---

[1] अनुच्छेद 145(3). जिस मामले में इस संविधान के निर्वचन के बारे में विधि का कोई सारवान् प्रश्न अंतर्वलित है उसका विनिश्चय करने के प्रयोजन के लिए या इस संविधान के अनुच्छेद 143 के अधीन निर्देश की सुनवाई के प्रयोजन के लिए बैठने वाले न्यायाधीशों की न्यूनतम संख्या पांच होगी :

परंतु जहां अनुच्छेद 132 से भिन्न इस अध्याय के उपबंधों के अधीन अपील की सुनवाई करने वाला न्यायालय पांच से कम न्यायाधीशों से मिलकर बना है और अपील की सुनवाई के दौरान उस न्यायालय का समाधान हो जाता है कि अपील में संविधान के निर्वचन के बारे में विधि का ऐसा सारवान् प्रश्न अंतर्वलित है जिसका अवधारण अपील के निपटारे के लिए आवश्यक है वहां वह न्यायालय ऐसे प्रश्न को उस न्यायालय को, जो ऐसे प्रश्न को अंतर्वलित करने वाले किसी मामले के विनिश्चय के लिए इस खंड की अपेक्षानुसार गठित किया जाता है, उसकी राय के लिए निर्देशित करेगा और ऐसी राय की प्राप्ति पर उस अपील को उस राय के अनुरूप निपटाएगा ।

का भाग होने को मान्य ठहराया गया है जो और कुछ नहीं बल्कि एकांतता का एक पहलू है । अधिक से अधिक बहुमत निर्णय के पैरा 20 की मताभिव्यक्ति का केवल यह अर्थ निकाला जा सकता है कि किसी व्यक्ति के क्रियाकलापों पर निगरानी रखने के राज्य के प्राधिकार के विरुद्ध एकांतता का कोई मूल अधिकार नहीं है । यहां तक कि ऐसे निष्कर्ष को **मेनका गांधी** बनाम **भारत संघ और एक अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के 7 न्यायाधीशों के न्यायपीठों द्वारा किए गए व्यक्त निर्णय को ध्यान में रखते हुए अब कोई अच्छी विधि नहीं कहा जा सकता ।

---

[1] पैरा 54 ..... खड्ग सिंह **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य [1964] 1 एस. सी. आर. 332 में दैहिक स्वाधीनता पद के समुचित प्रविषय और अर्थ का प्रश्न प्रथम बार सूक्ष्म रूप से इस न्यायालय के समक्ष विचारार्थ आया । न्यायाधीशों के बहुमत ने यह दृष्टिकोण अपनाया कि अनुच्छेद में 'दैहिक स्वाधीनता' पद को ऐसे सारगर्भित पद के रूप में प्रयुक्त किया गया है जिससे कि इसके भीतर वे सब अधिकार आ जाएं जिनसे मिलकर किसी व्यक्ति की दैहिक स्वाधीनता बनती है, लेकिन उनको छोड़ते हुए जिनके बारे में अनुच्छेद 19(1) के बहुत से खंडों में चर्चा की गई है । दूसरे शब्दों में, जब कि अनुच्छेद 19(1) उस स्वतंत्रता की विशेष जातियों अथवा विशेषताओं के बारे में है, अनुच्छेद 21 में 'दैहिक स्वाधीनता' के अंतर्गत अवशिष्ट (स्वतंत्रता) हैं । किंतु अल्पमत न्यायाधीश बहुमत द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण से असहमत थे और उन्होंने अपनी स्थिति निम्नलिखित शब्दों में स्पष्ट की – "इसमें संदेह नहीं है कि 'दैहिक स्वाधीनता' पद एक व्यापक पद है और अबाध रूप से संचरण करने का अधिकार दैहिक स्वाधीनता का एक गुण है । यह कहा गया है कि अबाध संचरण करने की स्वतंत्रता दैहिक स्वाधीनता में से निकाली गई है और इसलिए अनुच्छेद 21 में 'दैहिक स्वाधीनता' पद उस गुण को अपवर्जित करता है । हमारा दृष्टिकोण है कि यह सही दृष्टिकोण नहीं है । दोनों ही स्वतंत्र मूल अधिकार है यद्यपि इनमें अतिव्याप्ति है । किसी का दूसरे में से निकाले जाने का कोई प्रश्न ही नहीं है । प्राण और दैहिक स्वाधीनता के मूल अधिकार की बहुत सी विशेषताएं हैं और उनमें से कुछ अनुच्छेद 19 में हैं । यदि अनुच्छेद 21 के अधीन किसी व्यक्ति के मूल अधिकार का अतिलंघन किया जाता है तो राज्य उस कार्य का समर्थन करने के लिए किसी विधि का अवलंब ले सकता है किंतु यह पूर्ण उत्तर नहीं है जब तक कि उक्त विधि अनुच्छेद 19(2) में अधिकथित कसौटी को वहां तक पूरा नहीं करती जहां तक कि वे विशेषताएं अनुच्छेद 19(1) के अंतर्गत आती हैं ? इस बारे में कोई संदेह नहीं हो सकता कि आर. सी. कूपर **बनाम** भारत संघ [1974] 3 उम. नि. प. 1045 = [1970] 3 एस. सी. आर. 530 वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय को ध्यान में रखते हुए अल्पमत दृष्टिकोण को सही माना जाना चाहिए और बहुमत वाले दृष्टिकोण के बारे में यह माना जाना चाहिए कि उसे उलट दिया गया है ।

(iii) उन्होंने आगे यह तर्क किया कि **एम. पी. शर्मा** (पूर्वोक्त) और **खड़क सिंह** (पूर्वोक्त) दोनों मामलों का विनिश्चय **ए. के. गोपालन** बनाम **मद्रास राज्य**[1] वाले मामले में प्रतिपादित सिद्धांतों पर आधारित संविधान के निर्वचन पर किया गया । **ए. के. गोपालन** (उपरोक्त) द्वारा प्रतिपादित ऐसे सिद्धांतों को **रुस्तम कावासजी कूपर** बनाम **भारत संघ**[2] वाले मामले में इस न्यायालय के बृहत्तर न्यायपीठ द्वारा गलत घोषित किया गया है । अतः मामलों के इस वर्तमान समूह को बृहत्तर न्यायपीठ द्वारा सुने जाने की कोई आवश्यकता नहीं है ।

9. यह सही है कि **गोविन्द** (पूर्वोक्त) वाले मामले में यह स्पष्ट घोषणा नहीं की गई थी कि भारत के संविधान के भाग 3 के अधीन प्रत्याभूत किसी मूल अधिकार से एकांतता का अधिकार निकलता है किंतु यह मत व्यक्त किया गया कि "अतः यदि यह मान भी लिया जाए कि व्यक्ति स्वतंत्रता के अधिकार, सम्पूर्ण भारत राज्यक्षेत्र में अबाध संरचरण के अधिकार और वाक् स्वातंत्र्य के अधिकार से एकांतता का स्वतंत्र अधिकार सृजित होता है जिसमें से इसे उद्भूत माना जाए जिसे कोई व्यक्ति मूल अधिकार कह सके तो हम यह नहीं समझते कि वह अधिकार पूर्ण है ।" इस न्यायालय ने इस आधार पर मामले का विनिश्चय करने की आगे कार्यवाही आरंभ की ।

10. तथापि, **आर. राजगोपाल**[3] और **पी. यू. सी. एल.** (पूर्वोक्त) वाले मामलों के पश्चात्वर्ती विनिश्चयों में, न्यायपीठ "एकांतता के अधिकार" के अस्तित्व का प्राख्यान करने में अधिक स्पष्ट थी । जहां **आर. राजगोपाल**[3] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया कि "एकांतता का अधिकार" संविधान के अनुच्छेद 21 के अधीन निहित है वहीं **पी. यू. सी. एल.** (पूर्वोक्त) वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया कि "एकांतता का अधिकार" का जहां तक वाक् स्वातंत्र्य से संबंध है यह संविधान[4] के अनुच्छेद 19(1)(क) और 21 के अधीन मूल अधिकार का भाग है ।

---

[1] ए. आई. आर. 1950 एस. सी. 27.

[2] (1970) 1 एस. सी. सी. 248.

[3] पैरा 9. "एकान्तता के अधिकार को हमारे संविधान में मूल अधिकार के रूप में उपवर्णित नहीं किया गया है बल्कि अनुच्छेद 21 से उपलक्षित किया गया है ।"

[4] पैरा 18. "स्वयं एकांतता के अधिकार को संविधान के अधीन चिह्नित नहीं किया गया है । अवधारणा के रूप में न्यायिकतः इसे परिभाषित करना अधिक व्यापक और नैतिक हो सकता है । क्या एकांतता के अधिकार का इस मामले में दावा किया जा सकता

11. याचियों के विद्वान् काउंसेल द्वारा यह प्रदर्शित करने के लिए न्यायालय के समक्ष विस्तृत दलील दी गई है कि सम्पूर्ण विश्व के सभी देशों में जहां आंग्ल सेक्शन विधि शास्त्र का अनुसरण किया जाता है, एकांतता को मानव जाति की स्वतंत्रता के महत्वपूर्ण पहलू के रूप में माना जाता है । आगे यह निवेदन किया गया कि भारत संघ की ओर से आज यह तर्क करना काफी विलंब से है कि भारत का संविधान अनुच्छेद 21 के अधीन स्वतंत्रता के पहलू के रूप में एकांतता को मान्यता प्रदान नहीं करता । कम से कम व्यक्ति को अपने मकान में सुरक्षित रहने और राज्य या उसके अधिकारियों द्वारा अयुक्तियुक्ततः विक्षुब्ध न करने के अधिकार को **खड़क सिंह** (पूर्वोक्त) वाले मामले में व्यक्ततः मान्यता प्रदान किया गया और संरक्षित किया गया यद्यपि बहुमत ने यह उल्लेख नहीं किया कि एकांतता के अधिकार के रूप में स्वतंत्रता का पहलू और कुछ नहीं बल्कि एकांतता का अधिकार है ।

12. हमारी यह राय है कि प्रस्तुत मामले संविधान के निर्वचन के लिए एक दूरगामी महत्वपूर्ण प्रश्न पैदा करते हैं । यह बात दांव पर लगी है कि अनुच्छेद 21 के अधीन उस बहुमूल्य और असंक्राम्य अधिकार सहित मूल अधिकारों की महत्ता क्या है । यदि **एम. पी. शर्मा** (पूर्वोक्त) और **खड़क सिंह**

है या इसका अतिलंघन हुआ है, उक्त मामले के तथ्यों पर निर्भर करेगा । किंतु हस्तक्षेप के बिना किसी के घर या कार्यालय के एकांतता में टेलीफोन बातचीत करने के अधिकार को निश्चित रूप से "एकांतता के अधिकार" के रूप में दावा किया जा सकता है । टेलीफोन पर बातचीत प्रायः अंतरंग और गोपनीय प्रकृति का होता है । टेलीफोन की बातचीत आधुनिक मानव जीवन का भाग है । इसे इतना महत्वपूर्ण माना जाता है कि अधिकांश लोग अपने पॉकेट में मोबाइल टेलीफोन उपकरण लेकर चलते हैं । टेलीफोन की बातचीत मानव के व्यक्तिगत जीवन का एक महत्वपूर्ण पहलू है । एकांतता का अधिकार निश्चित रूप से व्यक्ति के घर या कार्यालय के एकांतता के टेलीफोन बातचीत को सम्मिलित करेगा । इस प्रकार टेलीफोन का टेप किया जाना भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 का अतिक्रमण करेगा जब तक यह विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अधीन अनुज्ञात न हो ।

19. वाक् स्वातंत्र्य और अभिव्यक्ति का अधिकार संविधान के अनुच्छेद 19(1)(क) के अधीन प्रत्याभूत है । इस स्वतंत्रता का अभिप्राय मौखिक, लिखित, मुद्रण, चित्र या किसी अन्य रीति से स्वतंत्र रूप से अपने विचार और राय व्यक्त करने के अधिकार से है । जब कोई व्यक्ति टेलीफोन पर बात कर रहा है तो वह अपने वाक् और अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य के अधिकार का प्रयोग कर रहा है । टेलीफोन का टेप किया जाना संविधान के अनुच्छेद 19(1)(क) का उल्लंघन करेगा जब तक यह अनुच्छेद 19(2) के अधीन निर्बंधनों के आधारों के भीतर नहीं आता ।

(पूर्वोक्त) वाले मामलों में व्यक्त विचारों को शब्दशः पढ़ा जाए और इस देश की विधि के रूप में स्वीकार किया जाए तो भारत के संविधान के अधीन प्रत्याभूत मूल अधिकार और अतिविशिष्टता अनुच्छेद 21 के अधीन स्वतंत्रता का अधिकार अपने ओज और जीवन शक्ति खो देगा । वहीं हमारी यह भी राय है कि संस्थागत गरिमा और न्यायिक अनुशासन की यह अपेक्षा है कि इस न्यायालय के वृहत्तर न्यायपीठों द्वारा दिए गए निर्णय को ऐसे बृहत्तर न्यायपीठ द्वारा दिए गए निर्णय का अनुसरण न करने के लिए समुचित कारण बताए बिना छोटे न्यायपीठों द्वारा उपेक्षित नहीं किया जा सकता । ऐसे सभी विद्वान् न्यायाधीश जिन्होंने पश्चात्वर्ती निर्णय दिए को सम्यक् सम्मान देते हुए, जहां एकांतता के अधिकार को मानव जाति की स्वतंत्रता के लिए माननीय न्यायाधीशों द्वारा प्राख्यान किया गया है या चिंता व्यक्त की गई है, हमारी यह विनम्र राय है कि इस न्यायालय द्वारा घोषित विधि में कुछ हद तक प्रकट अनसुलझा विरोध प्रतीत होता है ।

13. अतः एक बार हमेशा के लिए मामलों के समूह में उठाए गए संविवाद से छुटकारा दिलाने के लिए हमारी राय में यह बेहतर है कि **एम. पी. शर्मा** (पूर्वोक्त) और **खड़क सिंह** (पूर्वोक्त) वाले मामलों के तर्काधार की संवीक्षा की जाए और इस न्यायालय के पश्चात्वर्ती विनिश्चयों की विधि शास्त्रीय शुद्धता जहां एकांतता के अधिकार का प्राख्यान या निर्दिष्ट किया गया है, को समुचित संख्या वाले न्यायपीठ द्वारा परीक्षा की जाए और प्राधिकृत रूप से विनिश्चय किया जाए ।

14. अतः हम रजिस्ट्रार को समुचित आदेश के लिए इन मामलों को भारत के माननीय मुख्य न्यायमूर्ति के समक्ष प्रस्तुत करने का निदेश देते हैं ।

अंतरिम निर्णय

मामला बृहत्तर न्यायपीठ द्वारा विनिश्चय के लिए विनिर्दिष्ट किए जाने के पश्चात् याचियों के विद्वान् काउंसेल ने आगे अंतरिम आदेश के लिए अनुरोध किया । प्रवृत्त अंतिम अंतरिम आदेश इस न्यायालय का 23 सितंबर, 2013 का आदेश है जो इस प्रकार है :–

> "..........
>
> सभी मामलों को अंतिम रूप से सुने जाने की अपेक्षा है । संविधान न्यायपीठ गठित होने के पश्चात् सभी मामलों को अंतिम सुनवाई के लिए सूचीबद्ध करें ।

इस बीच किसी भी व्यक्ति को इस तथ्य के बावजूद आधार कार्ड न लेने के लिए परेशान न किया जाए कि कुछ प्राधिकारियों ने इसे आज्ञापक बनाते हुए परिपत्र जारी किया है और जब कोई व्यक्ति स्वैच्छया आधार कार्ड लेने के लिए आवेदन करता है तो यह जांच की जाए कि क्या वह व्यक्ति विधि के अधीन इसे पाने का हकदार है और इसे किसी अवैध अप्रवासी को न दिया जाए ।''

याचियों के विद्वान् काउंसेल श्री श्याम दीवान ने यह निवेदन किया कि याचियों ने अपने निवेदनों में निर्देश के पूर्व एकांतता के घोर भंग को इंगित करते हुए इस न्यायालय को आधार कार्ड के लिए जीव सांख्यिकी आदि अभिप्राप्त करने के मामले में आगे कार्यवाही करने से प्राधिकारियों को अवरुद्ध करते हुए व्यादेश जारी करें । श्री श्याम दीवान ने यह निवेदन किया कि किसी व्यक्ति की जीव सांख्यिकी जानकारी को अन्य प्राधिकारी या निर्मित निकाय को परिचालित किया जा सकता है जो परिणामस्वरूप इसका उपयोग वाणिज्यिक शोषण के लिए उसके द्वारा किया जा सकता है इसलिए इसे रोका जाए ।

दूसरी ओर विद्वान् महान्यायवादी ने यह इंगित किया कि इस न्यायालय ने तारीख 23 सितंबर, 2013 को अंतरिम आदेश देते हुए भी किसी भी समय भारतीय विशिष्ट पहचान प्राधिकरण को ''आधार कार्ड'' के रूप से ज्ञात विशिष्ट पहचान संख्या के प्रयोजन के लिए किसी नागरिक से आगे कार्यवाही करने और जीव सांख्यिकी या अन्य जानकारी अभिप्राप्त करने से भारतीय विशिष्टि पहचान प्राधिकरण को अवरुद्ध करते हुए व्यादेश मंजूर नहीं किया है । आगे यह निवेदन किया गया कि प्रत्यर्थियों ने परियोजना में आगे कार्यवाही की है और लगभग 90 प्रतिशत जनसंख्या को आधार कार्ड जारी किया है । यह भी कि संघ सरकार द्वारा आधार कार्ड जारी करने की इस परियोजना में काफी धन खर्च किया गया था और इन परिस्थितियों में व्यादेश मंजूर करने के लिए कोई भी सुज्ञात प्रतिफल याचियों के पक्ष में नहीं है ।

विद्वान् महान्यायवादी ने यह कहा कि प्रत्यर्थी किसी अन्य व्यक्ति या प्राधिकारी से जीव सांख्यिकी या अन्यथा के माध्यम से आधार कार्ड धारक की किसी व्यक्तिगत जानकारी का आदान-प्रदान नहीं करते । यह कथन इस आशंका से संगत है कि यह उन लोगों की एकांतता का व्यापक भंग है जिन्हें आधार कार्ड जारी किया गया है । याचियों की ओर से आगे यह

दलील दी गई कि अब भी एकांतता का भंग है । यह ऐसा विषय है जिस पर इस प्रक्रम पर आगे विचार किए जाने की आवश्यकता है ।

विद्वान् महान्यायवादी ने आगे यह निवेदन किया कि आधार कार्ड का बहुत फायदा है क्योंकि यह मनरेगा, पी. डी. एस. प्रणाली के माध्यम से खाद्य, राशन और तेल वितरण तथा एल. पी. जी. के वितरण में सहायता के अनुदान जैसे सरकार की कई सामाजिक फायदा स्कीमों का प्रभावी क्रियान्वयन सुनिश्चित करता है । अतः यह निवेदन किया गया कि प्रत्यर्थियों को आगे आधार कार्ड जारी करने से निवारित न करने और सरकार की सामाजिक स्कीमों के लिए विद्यमान आधार कार्ड का पूरी तरह से उपयोग करने की अनुज्ञा दी जाए ।

विद्वान् महान्यायवादी ने यह निवेदन किया कि प्रत्यर्थी भारत संघ यह सुनिश्चित करेगा कि आम जनता को इस तथ्य की सूचना देने के पश्चात् सहमति आधार पर ही आधार कार्ड जारी किया जाएगा कि व्यक्ति की जीव सांख्यिकी की जानकारी देने सहित आधार कार्ड की तैयारी का उपयोग सामाजिक फायदा स्कीमों के अलावा किसी अन्य प्रयोजन के लिए नहीं किया जाएगा ।

मामले पर विचार करते हुए हमारा यह मत है कि हित का संतुलन सर्वोत्तम रूप से पूरा होगा यदि मामले का बृहत्तर न्यायपीठ द्वारा अंतिम रूप से विनिश्चय करने तक भारत संघ या भारतीय विशिष्ट पहचान प्राधिकरण निम्नलिखित रीति से आगे कार्यवाही करे :–

1. भारत संघ रेडियो और टेलीविजन सहित इलेक्ट्रानिक और प्रिंट मीडिया में व्यापक रूप से यह प्रचार करेगा कि आधार कार्ड अभी प्राप्त करना किसी नागरिक के लिए आज्ञापक नहीं है ।

2. आधार कार्ड का प्रस्तुतीकरण किसी नागरिक को अन्यथा देय किसी फायदे को अभिप्राप्त करने के लिए शर्त नहीं होगी ।

3. विशिष्ट पहचान संख्या या आधार कार्ड का उपयोग प्रत्यर्थियों द्वारा पी. डी. एस. स्कीम और विशेषकर खाद्यान्न आदि और मिट्टी के तेल जैसे खाना पकाने के ईंधन के वितरण के प्रयोजन के लिए से भिन्न किसी प्रयोजन के लिए नहीं किया जाएगा । आधार कार्ड का उपयोग एल. पी. जी. वितरण स्कीम के प्रयोजन के लिए किया जा सकेगा ।

4. आधार कार्ड जारी करते समय भारतीय विशिष्ट पहचान प्राधिकरण द्वारा अभिप्राप्त किसी व्यक्ति से संबंधित जानकारी को उपरोक्त के सिवाय किसी नए प्रयोजन के लिए नहीं किया जाएगा तथा उसको छोड़कर जहां आपराधिक अन्वेषण के प्रयोजन के लिए न्यायालय द्वारा निदेश किया जाए ।

तदनुसार निदेश दिया गया ।

पा.

[2015] 4 उम. नि. प. 168

सेल्वराज

बनाम

कर्नाटक राज्य

18 अगस्त, 2015

मुख्य न्यायमूर्ति एच. एल. दत्तू, न्यायमूर्ति अरुण मिश्र और न्यायमूर्ति अमिताव राय

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1947 (1947 का 2) – धारा 5(1)(घ) – रिश्वत की स्वीकृति – मामले के तथ्यों और परिस्थितियों, साक्षियों के साक्ष्यों और प्रस्तुत दस्तावेजों से युक्तियुक्त संदेह से परे यह साबित नहीं होता है कि अभियुक्त ने रिश्वत की मांग की और उसे स्वीकार किया, अतः अभियुक्त को रिश्वत की स्वीकृति के अपराध के लिए दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता ।

अभियोजन पक्षकथन इस प्रकार है कि अपीलार्थी जिला कोषागार, हस्सान में प्रथम उपखंड सहायक के रूप में कार्यरत था । पीटर फिलिप ने उससे इस संबंध में संपर्क किया कि वह अपीलार्थी को 13,990/- रुपए की छूट उसकी ऋण की रकम पर दिला सकता है । वह अभियुक्त से तारीख 28 जनवरी, 1988 को मिला जिसने 200/- रुपए अवैध पारितोषण के रूप में मांगे । चूंकि शिकायतकर्ता ने यह बात स्वीकार नहीं की, इसलिए उसने तारीख 1 फरवरी, 1988 को पुलिस लोकायुक्त से संपर्क किया और शिकायत दर्ज कराई । उसी दिन छापा मारने का प्रबंध किया । अन्वेषण

अधिकारी ने अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2, जो जिला परिषद् में कार्यरत पदधारी हैं, को छाया साक्षी बनाया और रिश्वत में दिए जाने वाले धन पर फिनोफ्थलीन चूर्ण लगाया और वह धन इस निर्देश के साथ न्यायालय साक्षी-1 को सौंप दिया कि वह मांगे जाने पर उसका संदाय करेगा । अभि. सा. 2 को छापा साक्षी के रूप में मौजूद रहने को कहा गया । पीटर फिलिप अभि. सा. 2 के साथ उक्त कार्यालय में गया । न्यायालय साक्षी-1 ने बिल मंजूर करने के लिए अभियुक्त से निवेदन किया । मांगे जाने पर, न्यायालय साक्षी-1 ने अभियुक्त को धन का संदाय कर दिया जो अभियुक्त ने अपनी मेज पर रखी पुस्तक के नीचे रख लिया । अभि. सा. 2 ने यह संव्यवहार होते हुए देखा । न्यायालय साक्षी-1 द्वारा संकेत किए जाने पर, अन्वेषण अधिकारी अभि. सा. 1 के साथ वहां पहुंचा, अभियुक्त के हाथों पर फिनोफ्थलीन परीक्षण किया गया, विलियन का रंग गुलाबी हो गया और उसे एक अलग बोतल में लेकर मुहरबंद कर लिया गया, अभिग्रहण ज्ञापन के अनुसार वह धन भी अभियुक्त के कब्जे से बरामद कर लिया गया । विचारण के आरंभ होने के पूर्व ही शिकायतकर्ता की मृत्यु हो गई । अभियोजन पक्ष ने कुल मिलाकर 9 साक्षियों की परीक्षा की, 23 दस्तावेज प्रदर्शित किए और 8 तात्विक वस्तुएं प्रस्तुत कीं । विशेष न्यायाधीश, हस्सान ने तारीख 16 अप्रैल, 1999 को पारित निर्णय और आदेश द्वारा अभियुक्त को दोषमुक्त कर दिया । अपील किए जाने पर, उच्च न्यायालय ने इस दोषमुक्ति को उलट दिया, इसीलिए इस न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की गई है । अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – उच्च न्यायालय ने दोषमुक्ति के निर्णय को उलटते समय एक संक्षिप्त निर्णय देते हुए विचारण न्यायालय द्वारा अपनाए गए अनेक तर्कों पर विचार नहीं किया है । इस न्यायालय ने केवल दो तथ्यात्मक पहलुओं पर विचार किया है अर्थात् पहला पहलू प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराए जाने और साक्षियों को बुलाए जाने के समय में आया फर्क है जो कि महत्वपूर्ण नहीं पाया गया है; दूसरा पहलू यह है कि क्या मेज की दराज से धन बरामद किया गया था या वह धन मेज पर पड़ा हुआ था, यह तथ्य भी महत्वपूर्ण नहीं है क्योंकि समय बीतने के साथ-साथ कोई भी इसे भूल सकता है, यही ऐसे एकमात्र कारण हैं जिनके आधार पर दोषमुक्ति के निर्णय को उलटा गया है । यह स्पष्ट है कि दोषमुक्ति के निर्णय को उलटते समय उच्च न्यायालय विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए तर्कों पर गहराई से विचार करने में असफल रहा है । साक्ष्य को विश्वसनीय ठहराने के लिए जो आवश्यक है उसका अनुपालन उच्च न्यायालय द्वारा बिलकुल

नहीं किया गया है । दोषमुक्ति के इस निर्णय को सरसरी तौर पर साक्ष्य का मूल्यांकन करके और संभाव्यताओं पर विचार करके उलटा गया है । यद्यपि उच्च न्यायालय को दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील में साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करने की शक्ति है किंतु उस शक्ति का प्रयोग नहीं किया गया है । उच्च न्यायालय से यह अपेक्षा की जाती है कि दोषमुक्ति के आदेश के संबंध में साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन और दोषमुक्ति के आदेश को उलटते समय विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए कारणों सहित अभिलेख पर उपलब्ध सम्पूर्ण सामग्री पर विचार करना चाहिए और न्यायालय को अभियुक्त के पक्ष में सभी परिस्थितियों पर विचार करना चाहिए जबकि ऐसा नहीं किया गया है । विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए कारणों पर विचार करने और साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् न्यायालय की यह सुविचारित राय है कि विचारण न्यायालय द्वारा व्यक्त किया गया मत एक संभव मत है । इस प्रकार, उच्च न्यायालय को दोषमुक्ति के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए था । इस न्यायालय ने जगन एम. शेषाद्री बनाम तमिलनाडु राज्य वाले मामले में यह अधिकथित किया है कि दोषमुक्ति अभिलिखित करते समय विचारण न्यायालय द्वारा किया गया साक्ष्य का मूल्यांकन एक तर्कसम्मत मत है, इसलिए अपील में हस्तक्षेप करना अनुज्ञेय नहीं होगा । दोषमुक्ति के आदेश को उलटते समय उच्च न्यायालय का जो कर्तव्य है उस पर इस न्यायालय द्वारा इस प्रकार मत व्यक्त किया गया है पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों की सहायता से न्यायालय ने साक्ष्य का सावधानीपूर्वक परिशीलन किया है और अभि. सा. 34 के अतिरिक्त अभि. सा. 19, अभि. सा. 27, अभि. सा. 30 और अभि. सा. 31 के साक्ष्य पर विशेष रूप से विचार किया है । न्यायालय की राय में, विचारण न्यायालय द्वारा इन साक्षियों के साक्ष्य का जो मूल्यांकन किया गया है वह ठीक और उचित है । दूसरी ओर, उच्च न्यायालय ने इस मामले पर अधिनियम 1988 की धारा 13(2) के साथ पठित धारा 13(1)(ङ) के अधीन कार्यवाही करने में त्रुटि की है और अपीलार्थी को धारा 13(1)(ङ) के स्पष्टीकरण को लागू करते हुए दोषी अभिनिर्धारित करने में भी त्रुटि की है और यह स्पष्टीकरण, जहां तक अधिनियम की धारा 5(1)(ङ) का संबंध है, पूर्णतया स्पष्ट है । हम राज्य के विद्वान् काउंसेल की दलील को स्वीकार करने में आनत हैं कि अभि. सा. 31 ने अपीलार्थी की सास होने के नाते, जिसने अपीलार्थी द्वारा किए गए इस कथन का समर्थन किया है अपीलार्थी ने अपनी सास से 50,000/- रुपए और 40,000/- रुपए प्राप्त किए थे, विश्वास नहीं किया जाना चाहिए । वह महिला अभियोजन साक्षी है । उसे कभी भी पक्षद्रोही

घोषित नहीं किया गया है । अभियोजन पक्ष सास के कथन का खंडन नहीं कर सकता । वास्तव में उच्च न्यायालय द्वारा मुख्य रूप से इसी साक्षी के साक्ष्य का अवलंब लिया गया है । अपीलार्थी द्वारा जो स्पष्टीकरण दिया गया है वह धारा 13(1)(ङ) के परंतुक का अवलंब लेते हुए उच्च न्यायालय द्वारा स्वीकार नहीं किया गया है । उच्च न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है कि चूंकि अपीलार्थी द्वारा अपनी सास से अभिकथित रूप से प्राप्त की गई रकम के संबंध में विधि के उपबंधों के अनुसरण में संसूचना नहीं दी गई थी इसलिए अपीलार्थी का स्पष्टीकरण स्वीकार्य नहीं है और यह समझा जाएगा कि अपीलार्थी ने अधिनियम, 1988 की धारा 13(2) के अर्थांतर्गत आपराधिक अवचार कारित किया है । हमें यही मत व्यक्त करना होगा कि उच्च न्यायालय ने दोषमुक्ति के विरुद्ध की गई अपील पर विचार किया है । ऐसे मामले में यह अपेक्षित है कि उन सभी आधारों पर विचार किया जाना चाहिए जिनके अनुसार दोषमुक्ति की गई है और उन सभी आधारों को खारिज किया जाना चाहिए । जबकि ऐसा नहीं किया गया है । दोषमुक्ति के विरुद्ध की गई अपील के मामले में उच्च न्यायालय द्वारा हितकर सिद्धांतों को अनदेखा किया गया है । यदि विचारण न्यायालय द्वारा किए गए साक्ष्य के मूल्यांकन में कोई कमी नहीं है, जैसाकि आक्षेपित निर्णय में किसी भी व्यक्ति ने इंगित नहीं किया है, दोषमुक्ति के आदेश को अपास्त नहीं किया जा सकता । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा व्यक्त किया गया मत एक तर्कसम्मत मत है और यदि किसी भी प्रकार से यह कहा जा सकता है कि कोई अन्य मत भी संभव है, तब दोषमुक्ति के आदेश को अपास्त करने के लिए पर्याप्त आधार नहीं होगा । इस प्रश्न पर विचार करने पर कि क्या अभियुक्त को दोषमुक्त किए जाने के संबंध में विचारण न्यायालय द्वारा व्यक्त किया गया मत संभव मत है, न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि इस तथ्य को दृष्टिगत करते हुए कि शिकायतकर्ता पीटर फिलिप की मृत्यु विचारण के पूर्व ही हो गई थी, इसलिए यह साक्षी उन तथ्यों के संबंध में प्रतिपरीक्षा किए जाने के लिए उपलब्ध नहीं हो सका था जो रिश्वत की मांग किए जाने और उसका संदाय किए जाने के बाबत उसकी जानकारी में थे । न्यायालय को अन्य उपलब्ध साक्ष्य पर सावधानीपूर्वक विचार करना चाहिए । शिकायतकर्ता की अनुपस्थिति में विश्वसनीय साक्ष्य प्रस्तुत करने और संदेह के परे दोष साबित करने का भार अभियोजन पक्ष पर आता है । के. एम. इरिगोडा ने यह कथन किया है कि जिस कमरे में रिश्वत दी गई थी उसमें 10 से 12 अन्य पदधारी भी बैठे हुए थे । कोषागार कार्यालय के 10 से 12 पदधारियों की मौजूदगी में रिश्वत

लेना अत्यंत असंभावी है । इन परिस्थितियों में यह महत्वपूर्ण हो जाता है कि धन कहां से बरामद किया गया था; अर्थात् धन अभियुक्त के कब्जे से बरामद किया गया था या नहीं । अभि. सा. 1 ने यह कथन किया है कि उसने मेज पर करेंसी नोट रखे देखे थे और अभियुक्त मेज के पीछे खड़ा हुआ था । के. एम. इरिगोडा ने यह कथन किया है कि अभियुक्त ने मेज पर रखी किताब के नीचे करेंसी नोट रख लिए थे । एक अन्य साक्षी एल. सोमशेखर अर्थात् अन्वेषण अधिकारी ने यह कथन किया है कि उसने मेज की दराज में से धन बरामद किया था । तीन साक्षियों द्वारा इस संबंध में दिया गया साक्ष्य एक-दूसरे से भिन्न है । यदि न्यायालय अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 के साक्ष्य में आए विरोधाभासों को अनदेखा कर दे, तब भी धन की बरामदगी के स्थान के संबंध में आया विरोधाभास अर्थात् धन मेज की दराज में था या मेज पर रखी किताब के नीचे था, बहुत महत्वपूर्ण है और इस विरोधाभास को अनदेखा नहीं किया जा सकता । इसके अतिरिक्त, न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि अन्वेषण अधिकारी ने यह कथन किया है कि उसने तारीख 1 फरवरी, 1988 को छूट जारी किए जाने का आदेश ज्ञापन प्रदर्श पी-14 के अनुसार अभिगृहीत किया था और उसमें यह उल्लेख किया था कि संदाय कर दिया गया है । चूंकि छूट का संदाय किया जा चुका था, इसलिए यह साबित करना अभियोजन पक्ष का कर्तव्य था कि वास्तव में यह संदाय कब किया गया था । यह संदाय तारीख 1 फरवरी, 1988 को किया गया था या उसके पूर्व, यह तथ्य साबित नहीं किया गया है और इस अपराध का मूल आधार इसी छूट का जारी किया जाना है जिसके लिए अभियुक्त द्वारा रिश्वत की मांग की गई थी । यद्यपि यह साबित करना आवश्यक नहीं कि अभियुक्त उस कार्य को करने की स्थिति में था या नहीं या वह उस कार्य को पूरा करने के लिए सक्षम था या नहीं जिसके लिए रिश्वत मांगी गई थी, तथापि, वर्तमान मामले के इन विशिष्ट तथ्यों को ध्यान में रखते हुए कि जब अभियुक्त का स्थानांतरण किए जाने की प्रक्रिया चल रही थी तब उसे तारीख 30 जनवरी, 1988 को भारोन्मुक्त कर दिया गया था और श्री जी. टी. शिवरमैया को उस पद का कार्य सौंप दिया गया जिस पर अभियुक्त था, अभियुक्त तारीख 1 फरवरी, 1988 को ड्यूटी पर नहीं था । यदि न्यायालय यह स्वीकार कर ले कि वह तारीख 1 फरवरी, 1988 को कार्यभार सूची तैयार कर रहा था, जो कि प्रस्तुत नहीं की गई है, और यह तथ्य कि शिकायत उसी दिन दर्ज कराई गई थी और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराए जाने के पूर्व भी यह प्रतीत होता है कि छापा साक्षियों को बुलाया गया था,

इन सभी तथ्यों से अभियोजन वृत्तांत असंभावी हो जाता है और विचारण न्यायालय ने इन परिस्थितियों में यह राय व्यक्त की है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अभिलिखित किए जाने के पूर्व कुछ जानबूझकर कार्यवाहियां की गई हैं । चूंकि शिकायतकर्ता की प्रतिपरीक्षा नहीं की जा सकी, इसलिए विचारण न्यायालय द्वारा व्यक्त किए गए मत को ऐसा मत नहीं कहा जा सकता है जो आच्छादित परिस्थितियों में संभव न हो । यदि तथ्यों के आधार पर दो मत संभव हों, तब भी विचारण न्यायालय द्वारा व्यक्त किए गए मत में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता विशेषकर दोषमुक्ति के विरुद्ध की गई अपील के मामले में । इस प्रकार, रिश्वत का स्वीकार किया जाना प्रस्तुत किए गए तर्कसम्मत साक्ष्य द्वारा सिद्ध नहीं किया गया है । परिस्थितियों को दृष्टिगत करते हुए विचारण न्यायालय द्वारा व्यक्त किया गया मत एक तर्कसम्मत मत है और इसमें उच्च न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता वह ऐसी स्थिति में जब कोई तर्क न दिया गया हो और साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन न किया गया हो । उच्च न्यायालय का निर्णय केवल तर्कहीन निर्णय नहीं है अपितु उच्च न्यायालय द्वारा मौखिक और दस्तावेज दोनों ही साक्ष्यों पर विचार करने का प्रयास नहीं किया गया है । (पैरा 10, 11, 13 और 17)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2011]	(2011) 6 एस. सी. सी. 450 : **केरल राज्य और एक अन्य** बनाम **सी. पी. राव** ;	15
[2009]	(2009) 6 एस. सी. सी. 587 : **ए. सुबेर** बनाम **केरल राज्य** ;	14
[2005]	(2005) 8 एस. सी. सी. 364 : **आंध्र प्रदेश राज्य द्वारा पुलिस निरीक्षक** बनाम **के. नरसिम्हाचारी** ;	12
[2002]	(2002) 9 एस. सी. सी. 639 : **जगन एम. शेषाद्री** बनाम **तमिलनाडु राज्य** ;	12
[1987]	(1987) (सप्ली.) एस. सी. सी. 266 : **जी. वी. ननजुंदिया** बनाम **राज्य (दिल्ली प्रशासन)** ;	16
[1971]	(1971) 1 एस. सी. सी. 503 : **कानू अंबू विष** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ।	15

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2008 की दांडिक अपील सं. 1172.

1999 की दांडिक अपील सं. 878 में तारीख 7 फरवरी, 2006 को पारित कर्नाटक उच्च न्यायालय, बैंगलोर के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सुश्री किरन सूरी (ज्येष्ठ अधिवक्ता) और श्री एस. जे. अमित, डा. (श्रीमती) विपिन गुप्ता

प्रत्यर्थी की ओर से सुश्री अनिता शिनॉय

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति अरुण मिश्र ने दिया ।

न्या. मिश्र – यह अपील उस निर्णय और आदेश के विरुद्ध की गई है जिसके द्वारा अपीलार्थी को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1947 की धारा 5(1)(घ) के अधीन दंडनीय अपराध कारित करने के लिए दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया और इस प्रकार विचारण न्यायालय द्वारा पारित किए गए दोषमुक्ति के निर्णय को उलटा गया और अपीलार्थी को 50,000/- रुपए जुर्माने के साथ 3 मास का कारावास भोगने और जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम किए जाने पर 6 मास का अतिरिक्त साधारण कारावास भोगने के लिए दंडादिष्ट किया गया ।

2. संक्षेप में, अभियोजन पक्षकथन इस प्रकार है कि अपीलार्थी जिला कोषागार, हस्सान में प्रथम उपखंड सहायक के रूप में कार्यरत था । पीटर फिलिप (न्यायालय साक्षी-1) ने उससे इस संबंध में संपर्क किया कि वह अपीलार्थी को 13,990/- रुपए की छूट उसकी ऋण की रकम पर दिला सकता है । वह अभियुक्त से तारीख 28 जनवरी, 1988 को मिला जिसने 200/- रुपए अवैध पारितोषण के रूप में मांगे । चूंकि शिकायतकर्ता (न्यायालय साक्षी-1) ने यह बात स्वीकार नहीं की, इसलिए उसने तारीख 1 फरवरी, 1988 को पुलिस लोकायुक्त से संपर्क किया और शिकायत दर्ज कराई । उसी दिन छापा मारने का प्रबंध किया । अन्वेषण अधिकारी ने अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2, जो जिला परिषद में कार्यरत पदधारी हैं, को छापा साक्षी बनाया और रिश्वत में दिए जाने वाले धन पर फिनोफ्थलीन चूर्ण लगाया और वह धन इस निर्देश के साथ न्यायालय साक्षी-1 को सौंप दिया कि वह मांगे जाने पर उसका संदाय करेगा । अभि. सा. 2 को छाया साक्षी के रूप में मौजूद रहने को कहा गया ।

3. पीटर फिलिप (न्यायालय साक्षी-1) अभि. सा. 2 के साथ उक्त कार्यालय में गया । न्यायालय साक्षी-1 ने बिल मंजूर करने के लिए अभियुक्त से निवेदन किया । मांगे जाने पर, न्यायालय साक्षी-1 ने अभियुक्त को धन का संदाय कर दिया जो अभियुक्त ने अपनी मेज पर रखी पुस्तक के नीचे रख लिया । अभि. सा. 2 ने यह संव्यवहार होते हुए देखा । न्यायालय साक्षी-1 द्वारा संकेत किए जाने पर, अन्वेषण अधिकारी अभि. सा. 1 के साथ वहां पहुंचा, अभियुक्त के हाथों पर फिनोफ्थलीन परीक्षण किया गया, विलियन का रंग गुलाबी हो गया और उसे एक अलग बोतल में लेकर मुहरबंद कर लिया गया, अभिग्रहण ज्ञापन के अनुसार वह धन भी अभियुक्त के कब्जे से बरामद कर लिया गया ।

4. विचारण के आरंभ होने के पूर्व ही शिकायतकर्ता (न्यायालय साक्षी-1) की मृत्यु हो गई । अभियोजन पक्ष ने कुल मिलाकर 9 साक्षियों की परीक्षा की, 23 दस्तावेज प्रदर्शित किए और 8 तात्विक वस्तुएं प्रस्तुत कीं । विशेष न्यायाधीश, हस्सान ने तारीख 16 अप्रैल, 1999 को पारित निर्णय और आदेश द्वारा अभियुक्त को दोषमुक्त कर दिया । अपील किए जाने पर, उच्च न्यायालय ने इस दोषमुक्ति को उलट दिया, इसीलिए इस न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की गई है ।

5. अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल द्वारा यह दलील दी गई है कि विद्वान् विचारण न्यायाधीश द्वारा अनेक महत्वपूर्ण परिस्थितियों पर विचार किया गया है जिन पर उच्च न्यायालय ने दोषमुक्ति के निर्णय को उलटते समय ध्यान नहीं दिया है । इस प्रकार, अवैधता कारित की गई है । प्रस्तुत किए गए साक्ष्य को विश्वसनीय नहीं कहा जा सकता है । अंतर्निहित असंभाव्यताओं को अनदेखा किया गया है और महत्वपूर्ण विरोधाभासों को हल्के तौर पर लिया गया है । दोषमुक्ति के निर्णय को उलटते समय, उच्च न्यायालय द्वारा साक्ष्य का कोई भी आंकलन नहीं किया गया है ।

6. राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने निर्णय का समर्थन किया है और यह दलील दी है कि उच्च न्यायालय ने छोटे-मोटे विरोधाभासों को त्यक्त करने के लिए समुचित कारण दिए हैं । अभियोजन पक्ष ने अभियुक्त का दोष संदेह के परे साबित किया है । इस अपील में किसी भी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है ।

पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को विस्तार से सुनने और अभिलेख पर प्रस्तुत मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य का परिशीलन करने के पश्चात्,

हमारी यह सुविचारित राय है कि वर्तमान मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर दोषमुक्ति के निर्णय और आदेश में उच्च न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए ।

7. विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को दोषमुक्त करने में कई कारण दिए हैं । विचारण न्यायालय ने साक्ष्य का बारीकी से परिशीलन करने में पूरी सावधानी बरती है जैसे कि शिकायतकर्ता (न्यायालय साक्षी-1) अर्थात् पीटर फिलिप की मृत्यु हो जाना और परिणामस्वरूप उसकी परीक्षा नहीं किया जाना और अभियुक्त द्वारा उसकी प्रतिपरीक्षा नहीं किया जाना । विशेषकर, जब शिकायतकर्ता की मृत्यु हो गई थी और उसकी प्रतिपरीक्षा नहीं की जा सकी थी, हमारी राय में, अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य की गुणवत्ता और विश्वसनीयता समाप्त नहीं हो सकती ।

8. अभियुक्त प्रथम उपखंड सहायक के पद पर था । प्रोन्नति होने पर उसका स्थानान्तरण प्रधान लेखाकार के रूप में उप कोषागार, सागर में कर दिया गया । उसे इस घटना के पूर्व तारीख 30 जनवरी, 1988 को भारोन्मुक्त कर दिया गया । अभियुक्त तारीख 1 फरवरी, 1988 को जिला कोषागार कार्यालय, हस्सान में प्रथम उपखंड सहायक के रूप में कार्यरत नहीं था । विचारण न्यायालय ने भारोन्मुक्ति आदेश (प्रदर्श डी-1) का अवलंब लिया है । विचारण न्यायालय ने यह भी विचार किया है कि के. सी. राजन (अभि. सा. 4) ने यह स्वीकार किया है कि अभियुक्त को प्रोन्नत किया गया था और उसे प्रधान लेखाकार के रूप में स्थानान्तरित किया गया था और तारीख 30 जनवरी, 1988 को भारोन्मुक्त कर दिया गया था । तथापि, उसने कार्यभार आगे नहीं सौंपा और तारीख 1 फरवरी, 1988 को उसने अपनी उपस्थिति दर्ज नहीं की क्योंकि उसका स्थानान्तरण किया जाना था । अभियुक्त को अपना कार्यभार शिवरमैया को सौंपना था जो तारीख 1 फरवरी, 1988 को उपलब्ध नहीं था क्योंकि शिवरमैया कोई विभागीय परीक्षा में उपस्थित होने गया था । तारीख 1 फरवरी, 1988 को अभियुक्त "कार्यभार संबंधी सूची" तैयार कर रहा था । प्रदर्श पी-8 का अवलंब लेते हुए विचारण न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि तारीख 1 फरवरी, 1988 को अभियुक्त का स्थानान्तरण किए जाने पर, जी. टी. शिवरमैया को कार्यभार सौंपा गया जो इसके पूर्व अभियुक्त द्वारा किया जा रहा था । कार्यभार सूची प्रस्तुत नहीं की गई है जो तारीख 1 फरवरी, 1988 को अभियुक्त द्वारा तैयार की गई थी । तारीख 1 फरवरी, 1988 को अभियुक्त को कोई भी कार्यालयिक कारबार करने का प्राधिकार

प्राप्त नहीं था । कार्य-वितरण-रजिस्टर, उपस्थिति रजिस्टर और भारोन्मुक्ति आदेश, के. सी. राजन (अभि. सा. 4) का कथन विचारण न्यायालय द्वारा स्वीकार नहीं किया गया है । यह भी मत व्यक्त किया गया है कि संबद्ध परिस्थितियों से अभियोजन वृत्तांत की विश्वसनीयता साबित नहीं होती है ।

9. विचारण न्यायालय ने दोषमुक्ति के कारण भी दिए हैं कि के. सी. राजन (अभि. सा. 4) अंतिम स्वीकृति देने के लिए सक्षम है । अभियुक्त अंतिम प्राधिकारी नहीं है । जिला कोषागार कार्यालय द्वारा आक्षेप किया गया था । तारीख 21 जनवरी, 1988 को मंजूरी के लिए कोषागार के समक्ष बिल पुनः प्रस्तुत किया गया था । इस प्रकार, यह संदेह हुआ कि अभियुक्त ने जानबूझकर बिल रोका है और तारीख 28 जनवरी, 1988 को पीटर फिलिप से 200/- रुपए अवैध पारितोषण के रूप में मांगे थे । यह बात असंभावी पाई गई है । इन परिस्थितियों में तर्कसम्मत साक्ष्य अपेक्षित होता है । विचारण न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अभिलिखित किए जाने के पूर्व ही अन्वेषण अधिकारी ने साक्षियों को उपस्थित करने का प्रबंध पहले ही कर लिया था । इस प्रकार, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट पीटर फिलिप और एल. सोमसेखर (अभि. सा. 8) के बीच मिलीभगत के आधार पर दर्ज कराई गई थी । विचारण न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला है कि जहां से धन बरामद किया गया था इस संबंध में विरोधाभास है कि धन मेज पर रखा हुआ था या मेज की दराज में । यह अभिनिर्धारित किया गया है कि धन अभियुक्त के कब्जे से बरामद नहीं किया गया था । फिनोफ्थलीन के विलियन (तात्विक वस्तु-4) का रंग गुलाबी नहीं पाया गया है अपितु उसमें अनावश्यक कण पाए गए हैं । अभियुक्त के कब्जे से छूट दिए जाने से संबंधित बिल भी नहीं बरामद किया गया है । इस प्रकार, अभियुक्त को धन दिए जाने का कोई कारण दिखाई नहीं देता है । अभियोजन का यह पक्षकथन कि अभियुक्त तारीख 1 फरवरी, 1988 को प्रथम उपखंड सहायक के पद पर कार्यरत था और बिल अनुभाग का भारसाधक था, साबित नहीं किया गया है ।

10. उच्च न्यायालय ने दोषमुक्ति के निर्णय को उलटते समय एक संक्षिप्त निर्णय देते हुए विचारण न्यायालय द्वारा अपनाए गए अनेक तर्कों पर विचार नहीं किया है । इस न्यायालय ने केवल दो तथ्यात्मक पहलुओं पर विचार किया है अर्थात् पहला पहलू प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराए जाने और साक्षियों को बुलाए जाने के समय में आया फर्क है जो कि महत्वपूर्ण नहीं पाया गया है; दूसरा पहलू यह है कि क्या मेज की दराज से धन

बरामद किया गया था या वह धन मेज पर पड़ा हुआ था, यह तथ्य भी महत्वपूर्ण नहीं है क्योंकि समय बीतने के साथ-साथ कोई भी इसे भूल सकता है, यही ऐसे एकमात्र कारण हैं जिनके आधार पर दोषमुक्ति के निर्णय को उलटा गया है ।

11. यह स्पष्ट है कि दोषमुक्ति के निर्णय को उलटते समय उच्च न्यायालय विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए तर्कों पर गहराई से विचार करने में असफल रहा है । साक्ष्य को विश्वसनीय ठहराने के लिए जो आवश्यक है उसका अनुपालन उच्च न्यायालय द्वारा बिलकुल नहीं किया गया है । दोषमुक्ति के इस निर्णय को सरसरी तौर पर साक्ष्य का मूल्यांकन करके और संभाव्यताओं पर विचार करके उलटा गया है । यद्यपि उच्च न्यायालय को दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील में साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करने की शक्ति है किंतु उस शक्ति का प्रयोग नहीं किया गया है । उच्च न्यायालय से यह अपेक्षा की जाती है कि दोषमुक्ति के आदेश के संबंध में साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन और दोषमुक्ति के आदेश को उलटते समय विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए कारणों सहित अभिलेख पर उपलब्ध सम्पूर्ण सामग्री पर विचार करना चाहिए और न्यायालय को अभियुक्त के पक्ष में सभी परिस्थितियों पर विचार करना चाहिए जबकि ऐसा नहीं किया गया है । **कानू अंबू विष** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में निम्न मत व्यक्त किया गया है :–

> "15. साक्ष्य पर विचार करने पर, हमारा यह मत है कि उच्च न्यायालय द्वारा दोषमुक्ति के आदेश का उलटना अपेक्षित नहीं है । यद्यपि उच्च न्यायालय को दोषमुक्ति के आदेश को उलटने के लिए साक्ष्य का पुनर्विलोकन करने की शक्ति प्राप्त है, फिर भी ऐसा करने के लिए न्यायालय को केवल दोषमुक्ति के आदेश से संबंधित विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए कारणों सहित अभिलेख पर उपलब्ध सम्पूर्ण सामग्री पर ही विचार नहीं करना चाहिए अपितु उन पहलुओं पर भी विशेष रूप से विचार करना चाहिए जो अभियुक्त के पक्ष में होते हैं और यह आदेश अनुमानों और अटकलों के आधार पर नहीं दिया जाना चाहिए और ऐसे निष्कर्षों के आधार पर भी आदेश पारित नहीं किया जाना चाहिए जो मामले में उपलब्ध साक्ष्य से उद्भूत न हों । हमारे इस मत के अनुसार अपील मंजूर की जाती है, उच्च न्यायालय

---

[1] (1971) 1 एस. सी. सी. 503.

का निर्णय उलटा जाता है और अपीलार्थी को दोषमुक्त किया जाता है । अपीलार्थी जमानत पर है, उसके बंधपत्र रद्द किए जाते हैं ।"

12. विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए कारणों पर विचार करने और साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् हमारी यह सुविचारित राय है कि विचारण न्यायालय द्वारा व्यक्त किया गया मत एक संभव मत है । इस प्रकार, उच्च न्यायालय को दोषमुक्ति के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए था । इस न्यायालय ने **जगन एम. शेषाद्री** बनाम **तमिलनाडु राज्य**[1] वाले मामले में यह अधिकथित किया है कि दोषमुक्ति अभिलिखित करते समय विचारण न्यायालय द्वारा किया गया साक्ष्य का मूल्यांकन एक तर्कसम्मत मत है, इसलिए अपील में हस्तक्षेप करना अनुज्ञेय नहीं होगा । दोषमुक्ति के आदेश को उलटते समय उच्च न्यायालय का जो कर्तव्य है उस पर इस न्यायालय द्वारा इस प्रकार मत व्यक्त किया गया है :–

"9. पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों की सहायता से हमने साक्ष्य का सावधानीपूर्वक परिशीलन किया है और अभि. सा. 34 के अतिरिक्त अभि. सा. 19, अभि. सा. 27, अभि. सा. 30 और अभि. सा. 31 के साक्ष्य पर विशेष रूप से विचार किया है । हमारी राय में, विचारण न्यायालय द्वारा इन साक्षियों के साक्ष्य का जो मूल्यांकन किया गया है वह ठीक और उचित है । दूसरी ओर, उच्च न्यायालय ने इस मामले पर अधिनियम, 1988 की धारा 13(2) के साथ पठित धारा 13(1)(ङ) के अधीन कार्यवाही करने में त्रुटि की है और अपीलार्थी को धारा 13(1)(ङ) के स्पष्टीकरण को लागू करते हुए दोषी अभिनिर्धारित करने में भी त्रुटि की है और यह स्पष्टीकरण, जहां तक अधिनियम की धारा 5(1)(ङ) का संबंध है, पूर्णतया स्पष्ट है । हम राज्य के विद्वान् काउंसेल की दलील को स्वीकार करने में आनत हैं कि अभि. सा. 31 ने अपीलार्थी की सास होने के नाते, जिसने अपीलार्थी द्वारा किए गए इस कथन का समर्थन किया है अपीलार्थी ने अपनी सास से 50,000/- रुपए और 40,000/- रुपए प्राप्त किए थे, विश्वास नहीं किया जाना चाहिए । वह महिला अभियोजन साक्षी है । उसे कभी भी पक्षद्रोही घोषित नहीं किया गया है । अभियोजन पक्ष सास के कथन का खंडन नहीं कर सकता । वास्तव में उच्च न्यायालय द्वारा मुख्य रूप से इसी साक्षी के साक्ष्य का अवलंब लिया गया है । अपीलार्थी द्वारा जो स्पष्टीकरण दिया गया है वह धारा 13(1)(ङ) के परंतुक का

[1] (2002) 9 एस. सी. सी. 639.

अवलंब लेते हुए उच्च न्यायालय द्वारा स्वीकार नहीं किया गया है । उच्च न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है कि चूंकि अपीलार्थी द्वारा अपनी सास से अभिकथित रूप से प्राप्त की गई रकम के संबंध में विधि के उपबंधों के अनुसरण में संसूचना नहीं दी गई थी इसलिए अपीलार्थी का स्पष्टीकरण स्वीकार्य नहीं है और यह समझा जाएगा कि अपीलार्थी ने अधिनियम 1988 की धारा 13(2) के अर्थांतर्गत आपराधिक अवचार कारित किया है । हमें यही मत व्यक्त करना होगा कि उच्च न्यायालय ने दोषमुक्ति के विरुद्ध की गई अपील पर विचार किया है । ऐसे मामले में यह अपेक्षित है कि उन सभी आधारों पर विचार किया जाना चाहिए जिनके अनुसार दोषमुक्ति की गई है और उन सभी आधारों को खारिज किया जाना चाहिए । जबकि ऐसा नहीं किया गया है । दोषमुक्ति के विरुद्ध की गई अपील के मामले में उच्च न्यायालय द्वारा हितकर सिद्धांतों को अनदेखा किया गया है । यदि विचारण न्यायालय द्वारा किए गए साक्ष्य के मूल्यांकन में कोई कमी नहीं है, जैसाकि आक्षेपित निर्णय में किसी भी व्यक्ति ने इंगित नहीं किया है, दोषमुक्ति के आदेश को अपास्त नहीं किया जा सकता । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा व्यक्त किया गया मत एक तर्कसम्मत मत है और यदि किसी भी प्रकार से यह कहा जा सकता है कि कोई अन्य मत भी संभव है, तब दोषमुक्ति के आदेश को अपास्त करने के लिए पर्याप्त आधार नहीं होगा ।"

इस न्यायालय द्वारा **आंध्र प्रदेश राज्य द्वारा पुलिस निरीक्षक** बनाम **के. नरसिम्हाचारी**[1] वाले मामले में ऐसा ही मत व्यक्त किया गया है :–

"24. इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए, हमारा यह मत है कि दो मत संभव हैं और उच्च न्यायालय द्वारा व्यक्त किया गया मत पूर्णतया असंभावी नहीं कहा जा सकता है; यह नहीं कहा जा सकता है कि ऊपर की गई चर्चा को दृष्टिगत करते हुए अभिलेख पर प्रस्तुत सामग्री से केवल एक ही निष्कर्ष निकलता है अर्थात् अभियुक्त ही दोषी है । अतः आक्षेपित निर्णय कायम रखा जाता है ।"

13. इस प्रश्न पर विचार करने पर कि क्या अभियुक्त को दोषमुक्त किए जाने के संबंध में विचारण न्यायालय द्वारा व्यक्त किया गया मत संभव मत है, हमारा यह निष्कर्ष है कि इस तथ्य को दृष्टिगत करते हुए कि

[1] (2005) 8 एस. सी. सी. 364.

शिकायतकर्ता पीटर फिलिप (न्यायालय साक्षी-1) की मृत्यु विचारण के पूर्व ही हो गई थी, इसलिए यह साक्षी उन तथ्यों के संबंध में प्रतिपरीक्षा किए जाने के लिए उपलब्ध नहीं हो सका था जो रिश्वत की मांग किए जाने और उसका संदाय किए जाने के बाबत उसकी जानकारी में थे । हमें अन्य उपलब्ध साक्ष्य पर सावधानीपूर्वक विचार करना चाहिए । शिकायतकर्ता की अनुपस्थिति में विश्वसनीय साक्ष्य प्रस्तुत करने और संदेह के परे दोष साबित करने का भार अभियोजन पक्ष पर आता है । के. एम. इरिगोडा (अभि. सा. 2) ने यह कथन किया है कि जिस कमरे में रिश्वत दी गई थी उसमें 10 से 12 अन्य पदधारी भी बैठे हुए थे । कोषागार कार्यालय के 10 से 12 पदधारियों की मौजूदगी में रिश्वत लेना अत्यंत असंभावी है । इन परिस्थितियों में यह महत्वपूर्ण हो जाता है कि धन कहां से बरामद किया गया था; अर्थात् धन अभियुक्त के कब्जे से बरामद किया गया था या नहीं । अभि. सा. 1 ने यह कथन किया है कि उसने मेज पर करेंसी नोट रखे देखे थे और अभियुक्त मेज के पीछे खड़ा हुआ था । के. एम. इरिगोडा (अभि. सा. 2) ने यह कथन किया है कि अभियुक्त ने मेज पर रखी किताब के नीचे करेंसी नोट रख लिए थे । एक अन्य साक्षी एल. सोमशेखर (अभि. सा. 8) अर्थात् अन्वेषण अधिकारी ने यह कथन किया है कि उसने मेज की दराज में से धन बरामद किया था । तीन साक्षियों द्वारा इस संबंध में दिया गया साक्ष्य एक-दूसरे से भिन्न है । यदि हम अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 के साक्ष्य में आए विरोधाभासों को अनदेखा कर दें, तब भी धन की बरामदगी के स्थान के संबंध में आया विरोधाभास अर्थात् धन मेज की दराज में था या मेज पर रखी किताब के नीचे था, बहुत महत्वपूर्ण है और इस विरोधाभास को अनदेखा नहीं किया जा सकता । इसके अतिरिक्त, हमारा यह निष्कर्ष है कि अन्वेषण अधिकारी ने यह कथन किया है कि उसने तारीख 1 फरवरी, 1988 को छूट जारी किए जाने का आदेश ज्ञापन प्रदर्श पी-14 के अनुसार अभिगृहीत किया था और उसमें यह उल्लेख किया था कि संदाय कर दिया गया है । चूंकि छूट का संदाय किया जा चुका था, इसलिए यह साबित करना अभियोजन पक्ष का कर्तव्य था कि वास्तव में यह संदाय कब किया गया था । यह संदाय तारीख 1 फरवरी, 1988 को किया गया था या उसके पूर्व, यह तथ्य साबित नहीं किया गया है और इस अपराध का मूल आधार इसी छूट का जारी किया जाना है जिसके लिए अभियुक्त द्वारा रिश्वत की मांग की गई थी । यद्यपि यह साबित करना आवश्यक नहीं कि अभियुक्त उस कार्य को करने की स्थिति में था या नहीं या वह उस कार्य को पूरा करने के लिए सक्षम था या नहीं जिसके लिए रिश्वत मांगी गई थी, तथापि, वर्तमान मामले के इन

विशिष्ट तथ्यों को ध्यान में रखते हुए कि जब अभियुक्त का स्थानांतरण किए जाने की प्रक्रिया चल रही थी तब उसे तारीख 30 जनवरी, 1988 को भारोन्मुक्त कर दिया गया था और श्री जी. टी. शिवरमैया को उस पद का कार्य सौंप दिया गया जिस पर अभियुक्त था, अभियुक्त तारीख 1 फरवरी, 1988 को ड्यूटी पर नहीं था । यदि हम यह स्वीकार कर लें कि वह तारीख 1 फरवरी, 1988 को कार्यभार सूची तैयार कर रहा था, जो कि प्रस्तुत नहीं की गई है, और यह तथ्य कि शिकायत उसी दिन दर्ज कराई गई थी और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराए जाने के पूर्व भी यह प्रतीत होता है कि छापा साक्षियों को बुलाया गया था, इन सभी तथ्यों से अभियोजन वृत्तांत असंभावी हो जाता है और विचारण न्यायालय ने इन परिस्थितियों में यह राय व्यक्त की है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अभिलिखित किए जाने के पूर्व कुछ जानबूझकर कार्यवाहियां की गई हैं । चूंकि शिकायतकर्ता की प्रतिपरीक्षा नहीं की जा सकी, इसलिए विचारण न्यायालय द्वारा व्यक्त किए गए मत को ऐसा मत नहीं कहा जा सकता है जो आच्छादित परिस्थितियों में संभव न हो । यदि तथ्यों के आधार पर दो मत संभव हों, तब भी विचारण न्यायालय द्वारा व्यक्त किए गए मत में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता विशेषकर दोषमुक्ति के विरुद्ध की गई अपील के मामले में ।

14. **ए. सुबेर** बनाम **केरल राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अधिकथित किया है कि अवैध पारितोषण प्राप्त करने के अपराध को अन्य किसी दंडनीय अपराध की भांति साबित किया जाना चाहिए और जब अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य में न तो गुणवत्ता हो और न ही विश्वसनीयता, तब ऐसी स्थिति में ऐसे साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्ध करना अनुचित होगा । इस न्यायालय ने दोषमुक्ति अभिलिखित करते हुए इस प्रकार अधिकथित किया है :–

> "31. जब अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य में न तो गुणवत्ता हो और न ही विश्वसनीयता, तब ऐसी स्थिति में ऐसे साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्ध करना अनुचित होगा । यह सत्य है कि निचले न्यायालयों के निर्णय समवर्ती हैं किंतु मामले पर गंभीरता से विचार करने पर हमारा यह निष्कर्ष है कि उच्च न्यायालय तथा विशेष न्यायाधीश ने अनावश्यक हस्तक्षेप करके स्पष्ट त्रुटि कारित की है । इस मामले में अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्य अपीलार्थी के दोष को

[1] (2009) 6 एस. सी. सी. 587.

साबित करने के लिए पर्याप्त नहीं है । अपीलार्थी संदेह का लाभ पाने का हकदार है ।"

15. **केरल राज्य और एक अन्य** बनाम **सी. पी. राव**[1] वाले मामले में यह अधिकथित किया गया है कि संदिग्ध धन की बरामदगी अभियुक्त को दोषसिद्ध करने के लिए पर्याप्त नहीं है । रिश्वत की मांग के संबंध में शिकायतकर्ता के परिसाक्ष्य के साथ सम्पुष्टि होनी चाहिए और जब शिकायतकर्ता विचारण के दौरान परीक्षा किए जाने के लिए उपलब्ध न हो, तब न्यायालय को अन्य साक्षियों के साक्ष्य का मूल्यांकन करते समय कड़ी सतर्कता बरतनी चाहिए । आरोप संदेह के परे साबित किया जाना चाहिए । इस न्यायालय ने निम्न प्रकार अधिकथित किया है :–

"12. ऊपर कोट की गई मताभिव्यक्तियां इस मामले में स्पष्ट रूप से लागू होती हैं । इन अभिव्यक्तियों के संदर्भ में इस न्यायालय ने **ए. सुबेर** (उपरोक्त) वाले मामले के पैरा 28 में यह स्पष्ट किया है कि अभियोजन पक्ष को अन्य किसी दंडनीय अपराध की भांति संदेह के परे आरोप सिद्ध करना चाहिए और अभियुक्त को तब तक निर्दोष मानना चाहिए जब तक कि इसके प्रतिकूल अवैध परितोषण की मांग और उसका स्वीकार किया जाना समुचित रूप से साबित न हो जाए और यह रिश्वत के मामले में दोषसिद्ध किए जाने के लिए एक महत्वपूर्ण संघटक है । विधि की उपरोक्त सुस्थापित स्थिति को दृष्टिगत करते हुए उच्च न्यायालय द्वारा व्यक्त किए गए मत से भिन्न मत व्यक्त करना हमारे लिए उचित नहीं होगा ।

13. इस निष्कर्ष पर पहुंच कर हमारा ध्यान एक सुस्थापित सिद्धांत की ओर जाता है कि जब न्यायालय को दोषमुक्ति के आदेश के विरुद्ध की गई अपील में अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करना होता है, तब न्यायालय को यह ध्यान रखना चाहिए कि अभियुक्त की निर्दोषिता उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए दोषमुक्ति के निर्णय द्वारा पुनः प्रबलित हो जाती है । उच्च न्यायालय के ऐसे विनिश्चय के विरुद्ध, इस न्यायालय द्वारा दोषमुक्ति के आदेश में हस्तक्षेप किए जाने को इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने सावंत सिंह **बनाम** राजस्थान राज्य, [1961] 3 एस. सी. आर. 120 वाले मामले में बहुत किफायत के साथ अधिकथित किया गया है । इस निर्णय के

---

[1] (2011) 6 एस. सी. सी. 450.

पृष्ठ 129 पर माननीय न्यायमूर्ति जे. सुब्बाराव ने निम्न सिद्धांत प्रतिपादित किए हैं –

> 9. पूर्वगामी चर्चा से निम्न परिणाम उद्भूत होते हैं – (1) अपील न्यायालय को ऐसे साक्ष्य का पुनर्विलोकन करने की पूर्ण शक्ति है जिसके आधार पर दोषमुक्ति का आदेश किया गया है ; (2) शिव स्वरूप [(1934-34) 61 आई. ए. 398] वाले मामले में अधिकथित सिद्धांतों के आधार पर अपील न्यायालयों को ऐसी अपील में मामले का निपटारा करने के लिए उचित दिग्दर्शिका उपलब्ध कराई गई है ; और (3) इस न्यायालय के निर्णयों में प्रयोग की गई भिन्न शब्द रचना जैसे (i) 'सारवान् और आबद्धकारी कारण', (ii) उचित और पर्याप्त रूप से तर्कसम्मत कारण, और (iii) 'ठोस कारण' , का उद्देश्य दोषमुक्ति के विरुद्ध की गई अपील में सम्पूर्ण साक्ष्य का पुनर्विलोकन करने के लिए और स्वयं अपना निष्कर्ष अभिलिखित करने के लिए अपील न्यायालय की असंदिग्ध शक्ति को कम करना नहीं है ; किंतु ऐसा करने में न्यायालय को केवल तथ्य के प्रश्न से संबंधित अभिलेख पर प्रस्तुत प्रत्येक सामग्री पर ही विचार नहीं करना चाहिए और उन तथ्यों के आधार पर दोषमुक्ति के आदेश के समर्थन में केवल निचले न्यायालय द्वारा दिए गए कारणों पर ही विचार नहीं करना चाहिए अपितु उस अपने निर्णय में उन कारणों को भी व्यक्त करना चाहिए जिनके आधार पर यह अभिनिर्धारित किया जा सके कि दोषमुक्ति न्यायोचित नहीं है ।"

16. **जी. वी. ननजुंदिया** बनाम **राज्य (दिल्ली प्रशासन)**[1] वाले मामले में यह अधिकथित किया गया है कि रिश्वत लिए जाने के अभिकथन पर अन्य महत्वपूर्ण परिस्थितियों के साथ विचार किया जाना चाहिए । रिश्वत की मांग प्रस्तुत किए गए ठोस साक्ष्य द्वारा साबित की जानी चाहिए । जब तथ्य से यह उपदर्शित होता हो कि शिकायतकर्ता को उस धन की जानकारी थी जो अभियुक्त द्वारा प्राप्त नहीं किया गया, तब इस न्यायालय ने शिकायतकर्ता के इस अभिकथन को अप्राकृतिक होने के आधार पर अविश्वसनीय ठहरा दिया कि शिकायतकर्ता अभियुक्त से मिला था और उसने अज्ञात व्यक्तियों की मौजूदगी में अभियुक्त को रिश्वत दी थी ।

17. इस प्रकार, रिश्वत का स्वीकार किया जाना प्रस्तुत किए गए

---

[1] (1987) (सप्ली.) एस. सी. सी. 266.

तर्कसम्मत साक्ष्य द्वारा सिद्ध नहीं किया गया है । ऊपर चर्चा की गई परिस्थितियों को दृष्टिगत करते हुए विचारण न्यायालय द्वारा व्यक्त किया गया मत एक तर्कसम्मत मत है और इसमें उच्च न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता वह ऐसी स्थिति में जब कोई तर्क न दिया गया हो और साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन न किया गया हो । उच्च न्यायालय का निर्णय केवल तर्कहीन निर्णय नहीं है अपितु उच्च न्यायालय द्वारा मौखिक और दस्तावेज दोनों ही साक्ष्यों पर विचार करने का प्रयास नहीं किया गया है । इस प्रकार, हमें उच्च न्यायालय द्वारा पारित किए गए निर्णय और आदेश को अपास्त करने और विचारण न्यायालय के निर्णय को प्रत्यावर्तित करने में कोई संकोच नहीं है । अपील मंजूर की जाती है ।

अपील मंजूर की गई ।

अस.

[2015] 4 उम. नि. प. 185

इदारा हरिबाबू

बनाम

तुल्लुरी वेंकट नरसिंघम और अन्य

15 सितंबर, 2015

न्यायमूर्ति चेलामेश्वर और न्यायमूर्ति अभय मनोहर सप्रे

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – आदेश 39, नियम 1 और 2 तथा आदेश 41, नियम 5 [सपठित आंध्र प्रदेश मंडल परिषद् सदस्य (सहयोजित), अध्यक्ष और उपाध्यक्ष और जिला परिषद् सदस्य (सहयोजित), सभापति और उप सभापति निर्वाचन संचालन नियम, 2006 – नियम 22(1)] – अधिकारिता का वर्जन – आंध्र प्रदेश जिला परिषद् के सभापति को निरर्हता के आधार पर पद से हटाने का निदेश देकर उप सभापति को सभापति का प्रभार ग्रहण करने के लिए कहना विधि के सुस्थिर सिद्धांतों के विरुद्ध है, अतः सभापति को निर्वाचन अर्जियों के निष्कर्ष के आधार पर ही हटाया जा सकता है ।

अपीलार्थी प्रकाशम जिले के पोन्नालुरू मंडल के जिला परिषद् राज्य क्षेत्र निर्वाचन क्षेत्र का सम्यक् निर्वाचित सदस्य है । उसने प्रकाशम जिले, ओंगोले के लिए तेलुगूदेशम पार्टी के अभ्यर्थी के रूप में यह निर्वाचन लड़ा था । तारीख 26 जून, 2014 को आंध्र प्रदेश राज्य निर्वाचन आयोग – इसमें प्रत्यर्थी सं. 3 ने तारीख 5 जुलाई, 2014 को जिला प्रजा परिषद् के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष के पद के निर्वाचन के संचालन के लिए प्रकाशम के जिला कलक्टर-सह-पीठासीन अधिकारी सहित विभिन्न जिला कलक्टरों को निदेश देते हुए आदेश जारी किया । तथापि, उक्त तारीख अर्थात् 5 जुलाई, 2014 को प्रकाशम जिले के जेड. पी. पी. के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष के पदों के निर्वाचन नहीं हो सके और तदनुसार वे बाद की तारीख को मुल्तवी किए गए । तारीख 9 जुलाई, 2014 को टी. डी. पी. के राज्य अध्यक्ष ने यह सूचित करते हुए राज्य निर्वाचन आयोग को पत्र लिखा कि श्री बोन्डा उमा महेश्वर राव, टी. डी. पी. के महासचिव आंध्र प्रदेश सदस्य (सहयोजित), मंडल परिषद् के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष और जिला परिषद् के सदस्य (सहयोजित), अध्यक्ष और उपाध्यक्ष निर्वाचन संचालन नियम, 2006 के नियम 22 में यथा विहित प्ररूप 'क' और 'ख' जारी करने के लिए प्राधिकृत है और आंध्र प्रदेश राज्य में उक्त निर्वाचनों के लिए सचेतक की नियुक्ति जारी करने के लिए भी प्राधिकृत है । तब श्री बोन्डा उमा महेश्वर राव ने तारीख 10 जुलाई, 2014 को टी. डी. पी. के प्रकाशम जिले के जिलाध्यक्ष श्री डी. जनार्दन राव को पूर्वोक्त निर्वाचन में टी. डी. पी. द्वारा गठित अभ्यर्थियों को प्ररूप 'ख' जारी करने को प्राधिकृत करते हुए प्ररूप 'क' जारी किया जहां तक जेड. पी. पी., प्रकाशम जिले का संबंध है और उसी दिन उन्होंने ओंगोले, प्रकाशम जिला के जिला कलक्टर-सह-पीठासीन अधिकारी को भी इसकी जानकारी दी । तारीख 22 जुलाई, 2014 को श्री डी. जनार्दन राव ने जिला कलक्टर-सह-पीठासीन अधिकारी को सूचित किया कि श्री तुल्लुरी वेंकट नरसिंघम को प्रकाशम जिले के जे. पी. पी. के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष पद के निर्वाचन के संबंध में टी. डी. पी. की ओर से सचेतक नियुक्त किया गया है । तब श्री तुल्लुरी वेंकट नरसिंघम ने अध्यक्ष पद के लिए श्री मन्नेरविन्द्र के पक्ष में मत देने के लिए टी. डी. पी. के सभी जे. पी. टी. सी. सदस्यों को निदेश देते हुए तारीख 12 जुलाई, 2014 को व्हिप जारी किया । अगले दिन अर्थात् 13 जुलाई, 2014 को प्रत्यर्थी सं. 1 ने उपाध्यक्ष पद के लिए श्री पी. कोटेश्वरम्मा के पक्ष में मत देने के लिए जे. पी. टी. सी. के सभी टी. डी. पी. सदस्यों को निदेश देते हुए दूसरी व्हिप जारी की । तारीख 25 नवंबर, 2014 को श्री लक्ष्मी नारायण नाम के

व्यक्ति ने सी. ई. ओ. के तारीख 12 अगस्त, 2014 की कार्यवाहियों को निलंबित करने की ईप्सा करते हुए, जिसमें उपाध्यक्ष को अध्यक्ष के रूप में कार्य करने का निदेश दिया गया था, जो लंबित 2014 की रिट याचिका सं. 31113 की पहले से ही विषयवस्तु थी, 2014 की रिट याचिका सं. 36421 फाइल की । तारीख 26 नवंबर, 2014 को अपीलार्थी ने यह साबित करने के लिए दस्तावेजों को अभिलेख पर लाने का आवेदन फाइल किया कि उन्होंने 2014 की रिट याचिका सं. 30790 और 30791 में विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा पारित तारीख 7 नवंबर, 2014 के अंतिम आदेश के अनुसरण में पहले ही अध्यक्ष का पद ग्रहण कर लिया है और 8 नवंबर, 2014 से कार्य कर रहा है । अतः उन्होंने यह दलील दी कि अध्यक्ष का पद पुनः ग्रहण करने के लिए किसी को अनुज्ञात करने का कोई अवसर ही नहीं पैदा होता और कम से कम जिला न्यायालय के समक्ष लंबित मुख्य निर्वाचन याचिकाओं के अंतिम निपटान तक अध्यक्ष के पद के लिए कोई रिक्ति नहीं पैदा होती । 2014 के रिट आवेदन सं. 1386 में 2014 के डब्ल्यू. ए. एम. पी. सं. 3416 और 2014 के रिट आवेदन सं. 1388 में 2014 की डब्ल्यू. ए. एम. पी. सं. 3418 में पारित तारीख 12 दिसंबर, 2014 के आक्षेपित अंतरिम आदेश द्वारा खंड न्यायपीठ ने अगले आदेशों तक उपाध्यक्ष को अध्यक्ष के कृत्यों का निर्वहन करने का निदेश दिया और आगे प्रत्यर्थियों को अध्यक्ष की रिक्ति भरने से निवारित किया । खंड न्यायपीठ ने तीन माह के भीतर लंबित निर्वाचन याचिकाओं को विनिश्चित करने के लिए भी जिला न्यायाधीश को भेज दिया और अपीलों की सुनवाई दो माह पश्चात् करने के लिए कहा । पूर्वोक्त अंतरिम आदेश के विरुद्ध अपीलार्थी ने उच्चतम न्यायालय के समक्ष विशेष इजाजत के माध्यम से ये अपीलें फाइल कीं । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपीलें मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – विधि का यह सुस्थिर सिद्धांत है कि न्यायालयों में हमेशा वाद के लंबित रहने के दौरान वाद में आक्षेपित कार्रवाई के निष्पादन पर रोक/अवरोध लगाने की अंतर्निहित और कानूनी शक्ति निहित है । ये शक्तियां सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 39, नियम 1 और 2 और आदेश 41, नियम 5 में अंतर्विष्ट हैं । इस सुस्थिर सिद्धांत, जिसे यहां विस्तार से स्पष्ट करने की आवश्यकता नहीं है, को ध्यान में रखते हुए न्यायालय का यह मत है कि खंड न्यायपीठ का यह मत व्यक्त करना न्यायसंगत नहीं था कि जब तक निरर्हता का आदेश अपास्त नहीं किया जाता है यह प्रवर्तनशील बना रहे । खंड न्यायपीठ भी यह समझने में

असफल रहा कि एक बार इसमें अपीलार्थी द्वारा फाइल रिट याचिकाओं को तारीख 11 अगस्त, 2014 की कार्यवाही को रद्द करते हुए तारीख 7 नवंबर, 2014 द्वारा मंजूर किया अतः, प्रत्यर्थियों के पास अपीलार्थी को जेड. पी. पी. के अध्यक्ष के रूप में कार्य करने की अनुज्ञा देने के सिवाय कोई विकल्प नहीं था । इसी प्रकार खंड न्यायपीठ भी आक्षेपित आदेश के समर्थन में उपरोक्त उद्धृत दृष्टांत के कारण सही नहीं था । न्यायालय की राय में दृष्टांत पूर्णतः भ्रामक है और इसमें अंतर्वलित संक्षिप्त प्रश्न से इसका कुछ लेना-देना नहीं है । अब मुद्दे पर विचार करते हुए न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि निर्विवादितः जिला न्यायालय ने अपीलार्थी के पक्ष में कोई अंतरिम आदेश मंजूर करने के लिए कोई व्यादेश देने से इनकार किया किंतु विद्वान् एकल न्यायाधीश ने 2014 की रिट याचिका सं. 30790 में तारीख 7 नवंबर, 2014 के आदेश द्वारा जिला कलक्टर द्वारा पारित तारीख 11 अगस्त, 2014 के निरर्हता आदेश के प्रवर्तन पर रोक लगा दी थी । न्यायालय की विचारित राय में विद्वान् एकल न्यायाधीश के तारीख 7 नवंबर, 2014 के निलंबन आदेश का प्रभाव यह था कि अपीलार्थी का जेड. पी. टी. सी. के सदस्य और जेड. पी. पी. के अध्यक्ष के पद से निरर्हता को निर्वाचन अर्जियों के निपटान तक आश्रित रखा गया था । दूसरे शब्दों में निर्वाचन अर्जियों के निपटान तक सदस्य और अध्यक्ष के रूप में उसकी प्रास्थिति के संबंध में अपीलार्थी की निरर्हता के बारे में कुछ नहीं कहा गया था । इन अविवादित तथ्यों के आलोक में न्यायालय का यह मत है कि अपीलार्थी के लिए प्रकाशम जिले के जेड. पी. पी. के अध्यक्ष का पद ग्रहण करने में कोई विधिक बाधा नहीं थी जो उसने विद्वान् एकल न्यायाधीश के तारीख 7 नवंबर, 2014 के आदेश के अनुसरण में तारीख 8 नवंबर, 2014 को ग्रहण किया था । अपीलार्थी द्वारा अध्यक्ष का पद एक बार ग्रहण कर लेने पर, खंड न्यायपीठ को अंतर्वर्ती आवेदनों को निरर्थक होने के कारण खारिज कर देना चाहिए था क्योंकि उसमें किया गया अनुरोध अर्थात् अध्यक्ष का पद ग्रहण करने से अपीलार्थी को अवरुद्ध करना और उपाध्यक्ष को अध्यक्ष का पदभार ग्रहण करने के लिए कहना, आवेदनों पर विचार करने के पूर्व पहले ही क्रियान्वित हो चुका था और एक अन्य अंतरिम आदेश द्वारा अध्यक्ष के पद से अपीलार्थी को वंचित करने का कोई प्रकट औचित्य नहीं था । न्यायालय की विचारित राय में अध्यक्ष के पद से अपीलार्थी को हटाने का निदेश देने और उपाध्यक्ष को उसके स्थान पर अध्यक्ष का पदभार ग्रहण करने के लिए कहने के खंड न्यायपीठ का आक्षेपित आदेश न केवल अमान्य है बल्कि विप्रतीप भी है । न्यायालय की विचारित मतानुसार यदि न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि अंतरिम

आदेश पारित करते समय उच्च न्यायालय द्वारा दिया गया तर्काधार विप्रतीप है और वैधतः इस न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि के स्थिर सिद्धांत के विरुद्ध होने के कारण असंधार्य है तो ऐसे आदेश में अपील में आक्षेपित आदेश की प्रकृति की परवाह किए बिना इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता है । इस मामले में यह ध्यान दिए जाने पर कि उपरोक्त प्रकटित दो तर्काधार विधि के सुस्थिर सिद्धांत के विरुद्ध होने के कारण पूर्णतः असंधार्य हैं अतः इस न्यायालय का हस्तक्षेप करना आवश्यक है । अपीलार्थी का उसकी सदस्यता और अध्यक्षता के बारे में भविष्य निर्वाचन अर्जियों के परिणाम पर निर्भर होगा । (पैरा 45, 47, 49, 50, 54, 57, 58 और 59)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[1967] ए. आई. आर. 1967 एस. सी. 1386 :
मूलराज बनाम **मूर्ति रघुनाथजी महाराज** । 46

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2015 की सिविल अपील सं. 7115.

2014 की रिट आवेदन सं. 1386 में 2014 की डब्ल्यू. ए. एम. पी. सं. 3416 में तेलंगाना राज्य और आंध्र प्रदेश राज्य के हैदराबाद उच्च न्यायालय के तारीख 10 दिसंबर, 2014 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

पक्षकारों की ओर से सर्वश्री पी. पी. राव, बी. आदि नारायण, ए. के. गांगुली (ज्येष्ठ अधिवक्ता), (सुश्री) वाई. विस्मई राव, एम. कार्तिक पवन कुमार, हितेन्द्रनाथ रथ, पी. गोविन्दैया, संदीप सिंह, वाई राजा गोपाल राव, (सुश्री) प्रेरणा सिंह, जी. प्रमोद कुमार, प्रशांत चौधरी, वेंकटेश्वर राव अनुमोलू, गोली रामकृष्ण, शाश्वत गोयल और गुंटूर प्रभाकर

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति अभय मनोहर सप्रे ने दिया ।

2014 की विशेष इजाजत याचिका सं. 36764 और 26773

न्या. सप्रे – इजाजत दी गई ।

2. ये अपीलें 2014 की रिट आवेदन सं. 1386 में 2014 की डब्ल्यू. ए. एम. पी. सं. 3416 और 2014 की रिट आवेदन सं. 1388 में 2014 की डब्ल्यू. ए. एम. पी. सं. 3418 में तेलंगाना राज्य और आंध्र प्रदेश राज्य के हैदराबाद उच्च न्यायालय द्वारा पारित तारीख 10 दिसंबर, 2014 के एक ही अंतरिम आदेश के विरुद्ध फाइल की गई हैं जिसके दौरान इन अपीलों में फाइल किए गए आवेदनों का निपटान करते समय उच्च न्यायालय ने अगले आदेश तक जिला प्रजा परिषद् प्रकाशम जिला, ओंगोले के कार्यालय के अध्यक्ष के रूप में कार्य का निर्वहन करने के लिए जिला प्रजा परिषद् (संक्षेप में "जेड. पी. पी.") प्रकाशम जिला, ओंगोले के उपाध्यक्ष को निदेश दिया ।

3. इन अपीलों में अंतर्वलित मुद्दा जिसकी परिधि काफी संकीर्ण है, का मूल्यांकन करने के लिए विशेष इजाजत याचिकाओं के अभिलेख से कुछ सुसंगत तथ्यों का उल्लेख करना आवश्यक है ।

4. अपीलार्थी प्रकाशम जिले के पोन्नालुरू मंडल के जिला परिषद् राज्य क्षेत्र निर्वाचन क्षेत्र (संक्षेप में "जेड. पी. टी. सी.") का सम्यक् निर्वाचित सदस्य है । उसने प्रकाशम जिले, ओंगोले के लिए तेलुगूदेशम पार्टी (संक्षेप में "टी. डी. पी.") के अभ्यर्थी के रूप में यह निर्वाचन लड़ा था । तारीख 26 जून, 2014 को आंध्र प्रदेश राज्य निर्वाचन आयोग (संक्षेप में "राज्य निर्वाचन आयोग") – इसमें प्रत्यर्थी सं. 3 ने तारीख 5 जुलाई, 2014 को जिला प्रजा परिषद् (संक्षेप में "जेड. पी. पी.") के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष के पद के निर्वाचन के संचालन के लिए प्रकाशम के जिला कलक्टर-सह-पीठासीन अधिकारी (यहां प्रत्यर्थी सं. 2) सहित विभिन्न जिला कलक्टरों को निदेश देते हुए आदेश जारी किया ।

5. तथापि, उक्त तारीख अर्थात् 5 जुलाई, 2014 को प्रकाशम जिले के जेड. पी. पी. के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष के पदों के निर्वाचन नहीं हो सके और तदनुसार वे बाद की तारीख को मुल्तवी किए गए ।

6. तारीख 7 जुलाई, 2014 को प्रकाशम जिले के जिला कलक्टर (यहां प्रत्यर्थी सं. 4) द्वारा राज्य निर्वाचन आयोग (यहां प्रत्यर्थी सं. 3) से 13 जुलाई, 2014 को निर्वाचन कराने का अनुरोध करते हुए आदेश जारी किया ।

7. तारीख 9 जुलाई, 2014 को टी. डी. पी. के राज्य अध्यक्ष ने यह सूचित करते हुए राज्य निर्वाचन आयोग (प्रत्यर्थी सं. 3) को पत्र लिखा कि

श्री बोन्डा उमा महेश्वर राव, टी. डी. पी. के महासचिव आंध्र प्रदेश सदस्य (सहयोजित), मंडल परिषद् के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष और जिला परिषद् के सदस्य (सहयोजित), अध्यक्ष और उपाध्यक्ष निर्वाचन संचालन नियम, 2006 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "नियम" कहा गया है) के नियम 22 में यथा विहित प्ररूप "क" और "ख" जारी करने के लिए प्राधिकृत है और आंध्र प्रदेश राज्य में उक्त निर्वाचनों के लिए सचेतक की नियुक्ति जारी करने के लिए भी प्राधिकृत है । तब श्री बोन्डा उमा महेश्वर राव ने तारीख 10 जुलाई, 2014 को टी. डी. पी. के प्रकाशम जिले के जिलाध्यक्ष श्री डी. जनार्दन राव को पूर्वोक्त निर्वाचन में टी. डी. पी. द्वारा गठित अभ्यर्थियों को प्ररूप "ख" जारी करने को प्राधिकृत करते हुए प्ररूप "क" जारी किया जहां तक जेड. पी. पी., प्रकाशम जिले का संबंध है और उसी दिन उन्होंने ओंगोले, प्रकाशम जिला के जिला कलक्टर-सह-पीठासीन अधिकारी को भी इसकी जानकारी दी ।

8. तारीख 22 जुलाई, 2014 को श्री डी. जनार्दन राव ने जिला कलक्टर-सह-पीठासीन अधिकारी (प्रत्यर्थी सं. 2) को सूचित किया कि श्री तुल्लुरी वेंकट नरसिंघम (प्रत्यर्थी सं. 1) को प्रकाशम जिले के जे. पी. पी. के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष पद के निर्वाचन के संबंध में टी. डी. पी. की ओर से सचेतक नियुक्त किया गया है । तब श्री तुल्लुरी वेंकट नरसिंघम (प्रत्यर्थी सं. 1) ने अध्यक्ष पद के लिए श्री मन्नेरविन्द्र के पक्ष में मत देने के लिए टी. डी. पी. के सभी जे. पी. टी. सी. सदस्यों को निदेश देते हुए तारीख 12 जुलाई, 2014 को व्हिप जारी किया । अगले दिन अर्थात् 13 जुलाई, 2014 को प्रत्यर्थी सं. 1 ने उपाध्यक्ष पद के लिए श्री पी. कोटेश्वरम्मा के पक्ष में मत देने के लिए जे. पी. टी. सी. के सभी टी. डी. पी. सदस्यों को निदेश देते हुए दूसरी व्हिप जारी की ।

9. अपीलार्थी की ओर से जब व्हिप जारी की गई तब अपीलार्थी ओंगोले में उपस्थित नहीं था बल्कि 7 जुलाई, 2014 से 12 जुलाई, 2014 तक हैदराबाद में था । अपीलार्थी का यह भी अभिकथन है कि इसी कारण इन दो चेतावनियों की प्रति न तो उसे प्राप्त हुई न तामील की जा सकीं जिसका जारी किया जाना अभिकथित है । उसका यह भी अभिकथन है कि उक्त चेतावनियों की अभिस्वीकृति की प्राप्ति पर उसके हस्ताक्षर कूट रचित या जाली हैं ।

10. 13 जुलाई, 2014 को जिला कलक्टर-सह-पीठासीन अधिकारी द्वारा उक्त निर्वाचन संचालित किए गए । तथापि, अपीलार्थी ने "स्वतंत्र

अभ्यर्थी" के रूप में प्रकाशम जिले के जेड. पी. पी. के अध्यक्ष के पद का चुनाव लड़ा और अपने पक्ष में तथा उपाध्यक्ष पद के लिए स्वतंत्र अभ्यर्थी श्री एन. बालाजी के पक्ष में अपना मत दिया । अपीलार्थी चुनाव जीत गया और तदनुसार अध्यक्ष के पद के अभ्यर्थी के रूप में टी. डी. पी. द्वारा प्रस्तावित अभ्यर्थी श्री मन्नेरविन्द्र को एक मत से हरा कर अध्यक्ष के रूप में निर्वाचित घोषित हुआ ।

11. इसके परिणामस्वरूप अन्य बातों के साथ-साथ यह अभिकथित करते हुए जिला कलक्टर-सह-पीठासीन अधिकारी (प्रत्यर्थी सं. 2) के समक्ष तारीख 14 जुलाई, 2014 को अपीलार्थी के विरुद्ध श्री तुल्लुरी वेंकट नरसिंघम (प्रत्यर्थी सं. 1) द्वारा एक परिवाद फाइल किया गया कि उसे 13 जुलाई, 2014 को हुए उक्त निर्वाचन के संबंध में टी. डी. पी. द्वारा सचेतक नियुक्त किया गया था और यह कि अपीलार्थी ने तारीख 12 जुलाई, 2014 और 13 जुलाई, 2014 को टी. डी. पी. द्वारा जारी चेतावनियों के अतिक्रमण में अपीलार्थी ने अपना मत दिया ।

12. तारीख 16 जुलाई, 2014 को अपीलार्थी को यह कारण बताओ नोटिस जारी करते हुए उससे यह बताने के लिए कहा गया कि क्यों न उसके विरुद्ध चेतावनियों में जारी निदेशों के अतिक्रमण के लिए उसके विरुद्ध कार्रवाई की जाए और उसे आंध्र प्रदेश पंचायत राज अधिनियम, 1994 (जिसे इसमें इसके पश्चात "अधिनियम" कहा गया है) की धारा 22(5) और तारीख 10 मई, 2014 के जी. ओ. एम. सं. 173 के अनुसार उसे निरर्हित क्यों न किया जाए ।

13. अपीलार्थी ने अन्य बातों के साथ-साथ यह उल्लेख करते हुए 4 अगस्त, 2014 को अपना स्पष्टीकरण प्रस्तुत किया कि उसने चेतावनियों का अतिक्रमण नहीं किया था । उसका यह भी पक्षकथन था कि उसे कोई व्हिप नहीं मिली और व्हिप की प्राप्ति पर उसके हस्ताक्षर किसी अन्य के द्वारा जाली या कूटचरित थे । उसने यह भी कहा कि वह 7 जुलाई, 2014 से 12 जुलाई, 2014 तक हैदराबाद में था अतः अभिकथित चेतावनियों को प्राप्त नहीं किया गया चाहे वे जाली किए गए थे । अतः उसने मामले में विस्तृत जांच कराने के लिए जिला कलक्टर-सह-पीठासीन अधिकारी (प्रत्यर्थी सं. 2) से अनुरोध किया ।

14. आर. सी. सं. पी.-1/4598-अप्रत्यक्ष निर्वाचन/13 में तारीख 11 अगस्त, 2014 के आदेश के अनुसार, पीठासीन अधिकारी और जिला कलक्टर, प्रकाशम जिला, ओंगोल में पोन्नालुरू के जेड. पी. टी. सी. के

सदस्य के रूप में अपीलार्थी को निरर्हित किया और ओंगोल के प्रकाशम जिले के जेड. पी. पी. के अध्यक्ष का पद रिक्त करने का उसे निदेश दिया।

15. तारीख 12 अगस्त, 2014 को आर. सी. सं. पी. 1/4959/2014 में कार्यवाहियों द्वारा ओंगोले के जेड. पी. पी. के मुख्य कार्यपालक अधिकारी (संक्षेप में "सी. ई. ओ.") ने उपाध्यक्ष श्री एन. बालाजी को सम्यक् रूप से नया अध्यक्ष निर्वाचित किए जाने तक अध्यक्ष का पदभार अस्थायी रूप से ग्रहण करने का निदेश दिया ।

16. ओंगोले के प्रकाशम जिले के पीठासीन अधिकारी और जिला कलक्टर द्वारा पारित तारीख 11 अगस्त, 2014 के आदेश को चुनौती देते हुए अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय के समक्ष 2014 की रिट याचिका सं. 23541 फाइल की । तारीख 22 अगस्त, 2014 के आदेश द्वारा उच्च न्यायालय ने अधिनियम की धारा 181(क) के अधीन उपलब्ध उपचार का अवलंब लेकर इसमें याची को जिला न्यायालय में आवेदन करने की स्वतंत्रता प्रदान करते हुए याचिका खारिज कर दी ।

17. तदनुसार अपीलार्थी ने इसमें अभिवाचित आधारों पर पीठासीन अधिकारी द्वारा पारित तारीख 11 अगस्त, 2014 के आदेश के विरुद्ध ओंगोले के प्रथम अपर जिला न्यायाधीश के समक्ष 2014 की ई. ओ. पी. सं. 8 और 2014 की ई. ओ. पी. सं. 9 फाइल की । उसने आर. सी. सं. पी. 1/4598-अप्रत्यक्ष निर्वाचन/बी. में ओंगोले के पीठासीन अधिकारी द्वारा पारित तारीख 11 अगस्त, 2014 के आदेश को रद्द कर अंतरिम व्यादेश मंजूर करने के लिए 2014 के ई. ओ. पी. सं. 8 में 2014 का अंतर्वर्ती आवेदन सं. 1697 और 2014 के ई. ओ. पी. सं. 9 में 2014 की अंतर्वर्ती सं. 1684 भी फाइल की । तारीख 7 अक्तूबर, 2014 के आदेशों द्वारा प्रथम अपर जिला न्यायाधीश ने उक्त अंतर्वर्ती आवेदनों को खारिज किया और अपीलार्थी द्वारा प्रार्थित व्यादेश को मंजूर करने से इनकार किया ।

18. 2014 के ई. ओ. पी. सं. 8 में 2014 के अंतर्वर्ती आवेदन सं. 1697 और 2014 के ई. ओ. पी. सं. 9 में 2014 के अंतर्वर्ती आवेदन सं. 1684 में ओंगोले के प्रथम अपर जिला न्यायाधीश द्वारा पारित तारीख 7 अक्तूबर, 2014 के आदेश को प्रश्नगत करते हुए अपीलार्थी ने तेलंगाना राज्य और आंध्र प्रदेश राज्य के हैदराबाद उच्च न्यायालय के समक्ष 2014 की रिट याचिका सं. 30790 और 30791 फाइल कीं ।

19. इसमें अपीलार्थी की निरर्हता को ध्यान में रखते हुए श्री

गरिनीपुदी स्टीवेन और 24 अन्य व्यक्तियों द्वारा तारीख 28 अगस्त, 2014 को नए सिरे से निर्वाचन कराने के लिए राज्य निर्वाचन आयोग और जिला कलक्टर-सह-पीठासीन अधिकारी को अभ्यावेदन किया गया । क्योंकि राज्य निर्वाचन आयोग द्वारा उक्त आवेदन पर विचार नहीं किया गया अतः उच्च न्यायालय के समक्ष उपरोक्त याचियों द्वारा 2014 की रिट याचिका सं. 30799 फाइल की गई ।

20. उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने 2014 की रिट याचिका सं. 30790, 30791 और 30799 की एक साथ सुनवाई की और तारीख 7 नवंबर, 2014 के एक ही आदेश द्वारा इसने अपीलार्थी द्वारा फाइल 2014 की रिट याचिका सं. 39790 और 30791 को मंजूर किया तथा प्रथम अपर जिला न्यायाधीश द्वारा पारित तारीख 7 अक्तूबर, 2014 के आदेश को अभिखंडित किया । तब विद्वान् एकल न्यायाधीश ने तारीख 11 अगस्त, 2014 की कार्यवाहियों को निलंबित किया जिसके द्वारा अपीलार्थी को जेड. पी. टी. सी. सदस्य और परिणामतः जेड. पी. पी. के अध्यक्ष के रूप में निरर्हित किया गया था । जहां तक 2014 की रिट याचिका सं. 20799, जो इसमें अपीलार्थी की निरर्हता को ध्यान में रखते हुए नए निर्वाचन कराने के लिए फाइल की गई थी, का संबंध है, यह खारिज की गई ।

21. तारीख 8 नवंबर, 2014 को अपीलार्थी ने ओंगोले के प्रकाशम जिले के जेड. पी. पी. के सी. ई. ओ. को उन्हें सूचित करते हुए एक पत्र लिखा कि जेड. पी. टी. सी. की उसकी सदस्यता और जेड. पी. पी. के अध्यक्ष की निरर्हता के बारे में प्रकाशम जिले के जिला कलक्टर-सह-पीठासीन अधिकारी द्वारा पारित तारीख 11 अगस्त, 2014 के आदेश को 2014 की रिट याचिका सं. 39790 और 30791 में उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा पारित तारीख 7 नवंबर, 2014 के आदेश द्वारा निलंबित किया गया था अतः अपीलार्थी को प्रकाशम जिले के जेड. पी. पी. के अध्यक्ष का पद पुनः ग्रहण करने की अनुज्ञा दी जाए ।

22. तदनुसार अपीलार्थी ने 8 नवंबर, 2014 को अध्यक्ष का पद पुनः ग्रहण किया और प्रकाशम जिले के जेड. पी. पी. के अध्यक्ष का पदभार ग्रहण किया और विभिन्न बैठकें आयोजित करना आरंभ किया और विभिन्न विनिश्चय किए ।

23. तथ्यों के वृत्तांत को पूरा करते हुए यहां यह उल्लेखनीय है कि राजेन्द्र प्रसाद नामक व्यक्ति ने आर. सी. सं. पी. 1/4959/2014 में सी. ई. ओ. द्वारा पारित तारीख 12 अगस्त, 2014 के आदेश से व्यथित हुआ जिसके द्वारा श्री एन. बालाजी उपाध्यक्ष को अध्यक्ष के पद के लिए अपीलार्थी की निरर्हता की घोषणा के परिणामस्वरूप अस्थायी रूप से अध्यक्ष का पद ग्रहण करने की अनुज्ञा दी गई थी और उच्च न्यायालय के समक्ष 2014 की रिट याचिका सं. 31113 फाइल की ।

24. तारीख 12 नवंबर, 2014 के आदेश द्वारा उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने एम. राजेन्द्र प्रसाद द्वारा फाइल 2014 की रिट याचिका सं. 31113 को मंजूर किया और अगले आदेशों के अधीन रहते हुए तारीख 12 अगस्त, 2014 की कार्यवाहियों को निलंबित किया ।

25. इसी बीच श्री तुल्लुरी वेंकट नरसिंघम-प्रत्यर्थी सं. 1 ने विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा पारित तारीख 7 नवंबर, 2014 के आदेश को चुनौती देते हुए उच्च न्यायालय के समक्ष 2014 की रिट आवेदन सं. 1386 में 2014 की डब्ल्यू. ए. एम. पी. सं. 3416 और 2014 की रिट आवेदन सं. 1388 में 2014 की डब्ल्यू. ए. एम. पी. सं. 3418 फाइल की ।

26. तारीख 12 नवंबर, 2014 को मुख्य कार्यपालक अधिकारी (सी. ई. ओ.), जेड. पी. पी. यह उल्लेख करते हुए पंचायत राज और ग्रामीण विकास आयुक्त को आर. सी. सं. पी. 1/4598/उच्च न्यायालय मामला/2013 पत्र लिखा की उच्च न्यायालय द्वारा पारित तारीख 7 नवंबर, 2014 के आदेश के अनुसरण में अपीलार्थी ने 8 नवंबर, 2014 को प्रकाशम जिले के जेड. पी. पी. के अध्यक्ष का पद पुनः ग्रहण कर लिया है । तथापि, प्रत्यर्थी सं. 1 ने अपनी ओर से यह सूचित किया कि उसने उच्च न्यायालय के समक्ष तारीख 7 नवंबर, 2014 के विरुद्ध अपील फाइल की है । यद्यपि उच्च न्यायालय के समक्ष जिसमें प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा फाइल रिट अपीलों में कोई अंतरिम आदेश पारित नहीं किया गया फिर भी सी. ई. ओ. ने इस मुद्दे पर आयुक्त से स्पष्टीकरण की मांग की कि इस मामले में क्या किया जाए ?

27. तारीख 13 नवंबर, 2014 को अपीलार्थी ने विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा पारित तारीख 7 नवंबर, 2014 के आदेश के अनुपालन को सुनिश्चित करने और अध्यक्ष के रूप में अपीलार्थी को उसके कर्तव्यों के निर्वहन को समर्थ बनाने में सहायता करने और तत्काल आयुक्त को उसके

द्वारा भेजे गए तारीख 12 नवंबर, 2014 के स्पष्टीकरण पत्र जो अपीलार्थी के अनुसार कतई आवश्यक नहीं था, को वापस लेने के लिए सी. ई. ओ. को विधिक नोटिस दिया ।

28. तारीख 14 नवंबर, 2014 को अपीलार्थी ने सी. ई. ओ. और उप सी. ई. ओ. के विरुद्ध आयुक्त को एक पत्र भेजा और उनके विरुद्ध अनुशासनिक कार्रवाई करने के लिए उनसे अनुरोध किया । तारीख 15 नवंबर, 2014 के पत्र द्वारा आयुक्त ने सरकार के सचिव को सूचित किया कि अपीलार्थी ने 8 नवंबर, 2014 से अध्यक्ष का पद ग्रहण कर लिया है ।

29. तारीख 25 नवंबर, 2014 को श्री लक्ष्मी नारायण नाम के व्यक्ति ने सी. ई. ओ. के तारीख 12 अगस्त, 2014 के कार्यवाहियों को निलंबित करने की ईप्सा करते हुए, जिसमें उपाध्यक्ष को अध्यक्ष के रूप में कार्य करने का निदेश दिया गया था, जो लंबित 2014 की रिट याचिका सं. 31113 की पहले से ही विषयवस्तु थी, 2014 की रिट याचिका सं. 36421 फाइल की । तारीख 26 नवंबर, 2014 को अपीलार्थी ने यह साबित करने के लिए दस्तावेजों को अभिलेख पर लाने का आवेदन फाइल किया कि उन्होंने 2014 की रिट याचिका सं. 30790 और 30791 में विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा पारित तारीख 7 नवंबर, 2014 के अंतिम आदेश के अनुसरण में पहले ही अध्यक्ष का पद ग्रहण कर लिया है और 8 नवंबर, 2014 से कार्य कर रहा है । अतः उन्होंने ने यह दलील दी कि अध्यक्ष का पद पुनः ग्रहण करने के लिए किसी को अनुज्ञात करने का कोई अवसर ही नहीं पैदा होता और कम से कम जिला न्यायालय के समक्ष लंबित मुख्य निर्वाचन याचिकाओं के अंतिम निपटान तक अध्यक्ष के पद के लिए कोई रिक्ति नहीं पैदा होती ।

30. इसी बीच उच्च न्यायालय ने सी. ई. ओ. की तारीख 12 अगस्त, 2014 की कार्यवाही जिसके द्वारा उसने उपाध्यक्ष को अध्यक्ष के रूप में कार्य करने का निदेश दिया था, 2014 की रिट याचिका सं. 36241 में 28 नवंबर, 2014 के आदेश द्वारा निलंबित किया जैसाकि 22 नवंबर, 2014 के आदेश द्वारा समान रिट याचिका सं. 31113 में पहले से ही किया गया था ।

31. उक्त आदेशों अर्थात् 2014 की रिट याचिका सं. 31113 में पारित तारीख 12 नवंबर, 2014 का आदेश और रिट याचिका सं. 36241/2014 में पारित तारीख 28 नवंबर, 2014 का आदेश के विरुद्ध 2014 की

रिट आवेदन सं. 1484 और 1485 वाली दो रिट अपीलें फाइल की गईं ।

32. तारीख 1 दिसंबर, 2014 को अपीलार्थी ने रिट आवेदन सं. 1386/2014 में 2014 की डब्ल्यू. ए. एम. पी. सं. 3690 और 2014 के रिट आवेदन सं. 1388 में 2014 की डब्ल्यू. ए. एम. पी. सं. 3691 वाले आवेदन अपने इस दलील के समर्थन में अतिरिक्त दस्तावेजों पर विचार करने का अनुरोध करने के साथ-साथ फाइल की कि अध्यक्ष के पद की कोई रिक्ति नहीं है ।

33. 2014 के रिट आवेदन सं. 1386 में 2014 के डब्ल्यू. ए. एम. पी. सं. 3416 और 2014 के रिट आवेदन सं. 1388 में 2014 की डब्ल्यू. ए. एम. पी. सं. 3418 में पारित तारीख 12 दिसंबर, 2014 के आक्षेपित अंतरिम आदेश द्वारा खंड न्यायपीठ ने अगले आदेशों तक उपाध्यक्ष को अध्यक्ष के कृत्यों का निर्वहन करने का निदेश दिया और आगे प्रत्यर्थियों को अध्यक्ष की रिक्ति भरने से निवारित किया । खंड न्यायपीठ ने तीन माह के भीतर लंबित निर्वाचन याचिकाओं को विनिश्चित करने के लिए भी जिला न्यायाधीश को भेज दिया और अपीलों की सुनवाई दो मास पश्चात् करने के लिए कहा ।

34. पूर्वोक्त अंतरिम आदेश के विरुद्ध अपीलार्थी ने इस न्यायालय के समक्ष विशेष इजाजत के माध्यम से ये अपीलें फाइल कीं ।

35. अपीलार्थी की ओर से उपस्थित विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री पी. पी. राव ने आक्षेपित आदेश की वैधता और शुद्धता की चुनौती देते हुए यह दलील दी कि उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने इसमें प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा फाइल अंतर्वर्ती आवेदनों को मंजूर करने और आक्षेपित निदेश देने की गलती की । उन्होंने निवेदन किया कि इसमें अपीलार्थी द्वारा फाइल रिट याचिकाओं को मंजूर करते हुए विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा पारित उचित कारण सहित आदेश के आलोक में और निर्वाचन अर्जियों के निपटान तक निलंबनाधीन सदस्यता/अध्यक्षता की उसकी निरर्हता को ध्यान में रखते हुए दोनों अंतर्न्यायालयी अपीलें और आवेदन वस्तुतः निरर्थक हो गईं अतः इस प्रकार खारिज किए जाने योग्य है ।

36. विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने तब यह दलील दी कि आक्षेपित आदेश पारित करने के लिए प्रथमदृष्ट्या कोई मामला नहीं बनता क्योंकि इसमें अपीलार्थी ने विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा पारित तारीख 7 नवंबर, 2014 के अनुसरण में तारीख 8 नवंबर, 2014 को अध्यक्ष का पद पहले ही ग्रहण

कर लिया था ।

37. विद्वान् काउंसेल ने यह इंगित किया कि विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश के अनुसरण में अध्यक्ष का पद अपीलार्थी द्वारा एक बार ग्रहण कर लिए जाने पर खंड न्यायपीठ द्वारा अपील/आवेदन के निपटान करते हुए केवल यह निदेश दिया जाना चाहिए था कि ओंगोले के प्रथम अपर जिला न्यायाधीश द्वारा यथाशीघ्र गुणागुण के आधार पर अपीलार्थी के निर्वाचन अर्जियों का विनिश्चय किया जाए ।

38. विद्वान् काउंसेल ने आगे यह दलील दी कि यदि यह मान भी लिया जाए कि उच्च न्यायालय संविवाद के गुणदोष पर विचार कर सकता था यद्यपि उसने ऐसा नहीं किया फिर भी यह अपीलार्थी ही है जिसके पक्ष में प्रथमदृष्ट्या मामला बनता है जैसाकि विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा उसके पक्ष में ठीक ही अभिनिर्धारित किया गया था जब उसे अपर जिला न्यायाधीश के अंतरिम आदेश से उद्भूत अपीलार्थी की रिट याचिका मंजूर की गई थी ।

39. नियम 21 और 22 को निर्दिष्ट करते हुए विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि प्रश्नगत निर्वाचन के संबंध में टी. डी. पी. द्वारा जारी अभिकथित व्हिप वैध नहीं थे क्योंकि ये दोनों नियमों की अपेक्षाओं को पूरा नहीं करते । विद्वान् काउंसेल ने ऐसी रीति की आलोचना करते हुए जिसमें खंड न्यायपीठ ने विधि के सुस्थिर सिद्धांतों के विरुद्ध कतिपय निष्कर्ष अभिलिखित किए गए थे, यह दलील दी कि आक्षेपित आदेश प्रकृतितः अंतरिम होने के अलावा पूर्णतः वैधतः कायम रखे जाने योग्य नहीं है अतः अपास्त किए जाने योग्य है ।

40. प्रतिकूलतः प्रत्यर्थी सं. 1 की ओर से उपस्थित विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री ए. के. गांगुली ने आक्षेपित आदेश का समर्थन करते हुए यह दलील दी कि यह अंतरिम प्रकृति का होने के कारण भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है ।

41. पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को सुनने और मामले के अभिलेख और लिखित निवेदनों का परिशीलन करते हुए हम अपीलार्थी के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल के निवेदन में कोई सार नहीं पाते ।

42. इन अपीलों में विचारार्थ संक्षिप्त प्रश्न यह है कि क्या खंड न्यायपीठ द्वारा लंबित रिट अपीलों में फाइल आवेदनों को अनुज्ञात किया जाना न्यायोचित था और आज्ञापक निदेश जारी किया जाना न्यायसंगत था ?

43. आक्षेपित निदेश इस प्रकार हैं :–

"अतः हम पूर्वोक्त विधिक उपबंध के निबंधनानुसार, उपाध्यक्ष को इस न्यायालय के अगले आदेशों तक अध्यक्ष के कृत्यों का निर्वहन करने का निदेश देते हैं । अतः हम प्रत्यर्थी सभी अधिकारियों से ऐसी रिक्ति जो निरर्हता आदेश के कारण हुई, को भरने के लिए कोई कदम उठाने या आगे कदम उठाने से अवरुद्ध करते हैं ।

यह उचित होगा यदि जिला न्यायाधीश इस आदेश की संसूचना की तारीख से छह मास के बजाय तीन मास के भीतर उनकी फाइल पर लंबित मामले का विनिश्चय करे ।

ये दो अपीलें दो मास के पश्चात् सुनवाई के लिए प्रस्तुत की जाएं ।

डब्ल्यू. ए. एम. पी. पर तदनुसार आदेश किया जाता है ।"

पूर्वोक्त निदेश उच्च न्यायालय द्वारा अभिलिखित दो निष्कर्षों पर आधारित हैं :–

"हमारी यह राय है कि जब तक निरर्हता का आदेश अपास्त नहीं हो जाता यह प्रवर्तनशील बना रहता है । न्यायालय के असमान, कलक्टर को व्यादेश मंजूर करने की कोई शक्ति नहीं है । हमारी दृष्टि से वस्तुतः प्रथमदृष्ट्या, पूर्वोक्त विधिक और तथ्यात्मक परिदृश्य में विद्वान् विचारण न्यायाधीश का निलंबन आदेश निरर्थक है और इसे क्रियान्वित भी नहीं किया जा सकता ।"

"...... हम यह सोचते हैं कि सुविधा के संतुलन को ध्यान में रखते हुए कोई व्यवहार्य अंतरिम आदेश पारित किया जाए क्योंकि संविधान के अधीन कोई ऐसा व्यक्त उपबंध नहीं है कि प्रधानमंत्री के पद की रिक्ति की दशा में कोई अन्य व्यक्ति मंत्रिपरिषद् के अध्यक्ष के रूप में प्रधान मंत्री के रूप में कार्य करेगा । प्रतिकूलतः रिक्ति होने की दशा में संपूर्ण मंत्रिमंडल विघटित हो जाता है ।"

44. हमारी विचारित राय में पूर्वोक्त दो निष्कर्ष नीचे वर्णित कारणों से वैधतः कायम रखे जाने योग्य नहीं हैं ।

45. विधि का यह सुस्थिर सिद्धांत है कि न्यायालयों में हमेशा वाद के लंबित रहने के दौरान वाद में आक्षेपित कार्रवाई के निष्पादन पर रोक/अवरोध लगाने की अंतर्निहित और कानूनी शक्ति निहित है । ये शक्तियां सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 39, नियम 1 और 2 और आदेश

41, नियम 5 में अंतर्विष्ट हैं ।

46. इस न्यायालय को **मूलराज** बनाम **मूर्ति रघुनाथजी महराज**[1] वाले मामले में इस सुस्थिर सिद्धांत पर विचार करने का अवसर मिला जिसमें न्यायमूर्ति के. एन. वांचू ने न्यायपीठ की ओर से बोलते हुए व्यादेश और रोक की मंजूरी के बीच सूक्ष्म अंतर को स्पष्ट किया और उनकी समाप्ति के पश्चात् परिणाम सहित दोनों के प्रभाव को स्पष्ट किया ।

47. इस सुस्थिर सिद्धांत जिसे यहां विस्तार से स्पष्ट करने की आवश्यकता नहीं है, को ध्यान में रखते हुए हमारा यह मत है कि खंड न्यायपीठ का यह मत व्यक्त करना न्यायसंगत नहीं था कि जब तक निरर्हता का आदेश अपास्त नहीं किया जाता है यह प्रवर्तनशील बना रहे ।

48. हमारे विचारित मत के अनुसार खंड न्यायपीठ यह विचार करने में असफल रहा कि जब तक अंतिम न्याय निर्णयन निर्वाचन अर्जियों में गुणागुण के आधार पर विधि के अनुसार नहीं किया जाता तब तक जिला न्यायालय को अधिनियम की धारा 22क के अधीन आक्षेपित कार्रवाई के संबंध में समुचित अंतरिम आदेश पारित करने की शक्ति निहित थी, जो इस प्रकार है :–

> "22क. **अधिकारिता का वर्जन** – इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन पारित कोई आदेश या की गई किसी कार्यवाही को किसी वाद या आवेदन में किसी न्यायालय में प्रश्नगत नहीं किया जाएगा और इस अधिनियम द्वारा या इसके अधीन प्रदत्त किसी शक्ति के अनुसरण में की गई किसी कार्रवाई या किए जाने वाले किसी कार्रवाई की बाबत **जिला न्यायालय के सिवाय** किसी न्यायालय द्वारा कोई व्यादेश मंजूर नहीं किया जाएगा ।"

(बल देने के लिए मोटे अक्षरों में लिखा गया है)

49. खंड न्यायपीठ भी यह समझने में असफल रहा कि एक बार इसमें अपीलार्थी द्वारा फाइल रिट याचिकाओं को तारीख 11 अगस्त, 2014 की कार्यवाही को रद्द करते हुए तारीख 7 नवंबर, 2014 द्वारा मंजूर किया अतः, प्रत्यर्थियों के पास अपीलार्थी को जेड. पी. पी. के अध्यक्ष के रूप में कार्य करने की अनुज्ञा देने के सिवाय कोई विकल्प नहीं था ।

50. इसी प्रकार खंड न्यायपीठ भी आक्षेपित आदेश के समर्थन में

---

[1] ए. आई. आर. 1967 एस. सी. 1386.

उपरोक्त उद्धृत दृष्टांत के कारण सही नहीं था । हमारी राय में दृष्टांत पूर्णतः भ्रामक है और इसमें अंतर्वलित संक्षिप्त प्रश्न से इसका कुछ लेना-देना नहीं है ।

51. अब मुद्दे पर विचार करते हुए हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि निर्विवादितः जिला न्यायालय ने अपीलार्थी के पक्ष में कोई अंतरिम आदेश मंजूर करने के लिए कोई व्यादेश देने से इनकार किया किंतु विद्वान् एकल न्यायाधीश ने 2014 की रिट याचिका सं. 30790 में तारीख 7 नवंबर, 2014 के आदेश द्वारा जिला कलक्टर द्वारा पारित तारीख 11 अगस्त, 2014 के निरर्हता आदेश के प्रवर्तन पर रोक लगा दी थी ।

52. हमारे विचारित राय में विद्वान् एकल न्यायाधीश के तारीख 7 नवंबर, 2014 के निलंबन आदेश का प्रभाव यह था कि अपीलार्थी का जेड. पी. टी. सी. के सदस्य और जेड. पी. पी. के अध्यक्ष के पद से निरर्हता को निर्वाचन अर्जियों के निपटान तक आश्रित रखा गया था । दूसरे शब्दों में निर्वाचन अर्जियों के निपटान तक सदस्य और अध्यक्ष के रूप में उसकी प्रास्थिति के संबंध में अपीलार्थी की निरर्हता के बारे में कुछ नहीं कहा गया था ।

53. यह भी विवादित नहीं है कि विद्वान् एकल न्यायाधीश ने दो अन्य लंबित रिट याचिकाओं में (2014 की रिट याचिका सं. 31113 और 2014 की रिट याचिका सं. 36421) साथ-साथ तारीख 12 नवंबर, 2014 और तारीख 28 नवंबर, 2014 के पृथक्-पृथक् अंतरिम आदेशों द्वारा तारीख 12 अगस्त, 2014 के आदेश द्वारा रोक लगा दी थी जिसके द्वारा जेड. पी. पी. के उपाध्यक्ष को अध्यक्ष के पद का भार ग्रहण करने के लिए कहा गया था और यह रोक प्रवर्तन में था ।

54. इन अविवादित तथ्यों के आलोक में हमारा यह मत है कि अपीलार्थी के लिए प्रकाशम जिले के जेड. पी. पी. के अध्यक्ष का पद ग्रहण करने में कोई विधिक बाधा नहीं थी जो उसने विद्वान् एकल न्यायाधीश के तारीख 7 नवंबर, 2014 के आदेश के अनुसरण में तारीख 8 नवंबर, 2014 को ग्रहण किया था । अपीलार्थी द्वारा अध्यक्ष का पद एक बार ग्रहण कर लेने पर, खंड न्यायपीठ को अंतर्वर्ती आवेदनों को निरर्थक होने के कारण खारिज कर देना चाहिए था क्योंकि उसमें किया गया अनुरोध अर्थात् अध्यक्ष का पद ग्रहण करने से अपीलार्थी को अवरुद्ध करना और उपाध्यक्ष को अध्यक्ष का पदभार ग्रहण करने के लिए कहना, आवेदनों पर विचार करने के पूर्व पहले ही क्रियान्वित हो चुका था और एक अन्य अंतरिम

आदेश द्वारा अध्यक्ष के पद से अपीलार्थी को वंचित करने का कोई प्रकट औचित्य नहीं था ।

55. हमारे विचारित राय में अध्यक्ष के पद से अपीलार्थी को हटाने का निदेश देने और उपाध्यक्ष को उसके स्थान पर अध्यक्ष का पदभार ग्रहण करने के लिए कहने के खंड न्यायपीठ का आक्षेपित आदेश न केवल अमान्य है बल्कि विप्रतीप भी है ।

56. यद्यपि अपीलार्थी के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने अन्य बातों के साथ-साथ यह दलील देते हुए टी. डी. पी. द्वारा जारी व्हिप की वैधता से संबंधित मुद्दों पर भी तर्क किया कि यह नियमों की अपेक्षाओं आदि के अनुरूप नहीं था किंतु हम इस सामान्य कारण से इन अपीलों में इस प्रक्रम पर इस प्रश्न पर विचार नहीं करते हैं कि ये मुद्दे निर्वाचन अर्जियों में विचाराधीन हैं अतः विद्वान् एकल न्यायाधीश के तारीख 7 नवंबर, 2014 के आदेश द्वारा विधि के अनुसार गुणागुण पर जिला न्यायाधीश द्वारा विचार किए जाने की आवश्यकता है ।

57. अब हम प्रत्यर्थी सं. 1 के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल द्वारा दिए गए अंतिम निर्णय पर विचार करते हैं कि आक्षेपित आदेश अंतरिम प्रकृति का होने के कारण, इस न्यायालय को भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन इसमें हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए । हम इस निवेदन से सहमत नहीं हैं ।

58. हमारे विचारित मतानुसार यदि हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि अंतरिम आदेश पारित करते समय उच्च न्यायालय द्वारा दिया गया तर्काधार विप्रतीप है और वैधतः इस न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि के स्थिर सिद्धांत के विरुद्ध होने के कारण असंधार्य है तो ऐसे आदेश में अपील में आक्षेपित आदेश की प्रकृति की परवाह किए बिना इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता है ।

59. इस मामले में यह ध्यान दिए जाने पर कि उपरोक्त प्रकटित दो तर्काधार विधि के सुस्थिर सिद्धांत के विरुद्ध होने के कारण पूर्णतः असंधार्य हैं अतः इस न्यायालय का हस्तक्षेप करना आवश्यक है ।

60. अपीलार्थी का उसकी सदस्यता और अध्यक्षता के बारे में भविष्य निर्वाचन अर्जियों के परिणाम पर निर्भर होगा ।

61. निर्वाचन अर्जियों का विनिश्चय इस न्यायालय की तारीख से बाहरी सीमा के रूप में तीन मास के भीतर किया जाए ।

62. पूर्वगामी चर्चा को ध्यान में रखते हुए अपीलें सफल होती हैं और तदनुसार मंजूर की जाती हैं । आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है । परिणामस्वरूप उच्च न्यायालय के समक्ष लंबित सभी अपीलें/याचिकाएं इस निर्णय के आलोक में अंतिम रूप से निपटाई जाती हैं क्योंकि अब उच्च न्यायालय के समक्ष लंबित अपीलों/रिट याचिकाओं में विनिश्चय करने के लिए कुछ शेष नहीं रहता ।

2015 की विशेष इजाजत याचिका (सिविल) सं. 5896-5897

2014 की विशेष इजाजत याचिका (सिविल) सं. 36764 और 36773 की अपीलों में पारित विस्तृत निर्णय को ध्यान में रखते हुए, ये विशेष इजाजत याचिकाएं तदनुसार निपटाई जाती हैं ।

अपीलें मंजूर की गईं।

पा.

संसद् के अधिनियम

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम, 2005

(2005 का अधिनियम संख्यांक 42)

[5 सितम्बर, 2005]

देश के ग्रामीण क्षेत्रों में गृहस्थियों की आजीविका की सुरक्षा को, प्रत्येक ऐसी गृहस्थी को, जिसके वयस्क सदस्य अकुशल शारीरिक कार्य करने के लिए स्वेच्छा से आगे आते हैं, प्रत्येक वित्तीय वर्ष में कम से कम सौ दिनों का गारंटीकृत मजदूरी नियोजन उपलब्ध कराकर, वर्धित करने तथा उससे संसक्त या उसके आनुषंगिक विषयों का उपबंध करने के लिए अधिनियम

भारत गणराज्य के छप्पनवें वर्ष में संसद् द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो :–

अध्याय 1
प्रारंभिक

1. संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारंभ – (1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम [1][महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम,] 2005 है ।

(2) इसका विस्तार, जम्मू-कश्मीर राज्य के सिवाय, सम्पूर्ण भारत पर है ।[2]

---

[1] 2009 के अधिनियम सं. 46 की धारा 2 द्वारा (2 अक्तूबर, 2009 से) "राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[2] राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम, 2005 द्वारा जम्मू-कश्मीर राज्य पर विस्तारित किया गया और विभिन्न क्षेत्रों में 6 जून, 2007 से प्रवृत्त हुआ – देखिए अधिसूचना सं. का. आ. 943(अ), तारीख 4 जून, 2007.

(3) यह उस तारीख[1] को प्रवृत्त होगा जिसे केन्द्रीय सरकार राजपत्र में अधिसूचना द्वारा नियत करे ; और विभिन्न राज्यों या किसी राज्य में विभिन्न क्षेत्रों के लिए विभिन्न तारीखें नियत की जा सकेंगी तथा ऐसे किसी उपबंध में, इस अधिनियम के प्रारंभ के प्रति किसी निर्देश का यह अर्थ लगाया जाएगा कि वह, यथास्थिति, ऐसे राज्य या ऐसे क्षेत्र में उस उपबंध के प्रवृत्त होने के प्रति निर्देश है :

परन्तु यह अधिनियम उस सम्पूर्ण राज्यक्षेत्र को, जिस पर इसका विस्तार है, इस अधिनियम के अधिनियमन की तारीख से पांच वर्ष की कालावधि के भीतर लागू होगा ।

2. **परिभाषाएं** – इस अधिनियम में जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो,–

(क) "वयस्क" से ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जिसने अठारह वर्ष की आयु पूरी कर ली है ;

(ख) "आवेदक" से किसी गृहस्थी का प्रमुख या उसके अन्य वयस्क सदस्यों में से कोई अभिप्रेत है, जिसने स्कीम के अधीन नियोजन के लिए आवेदन किया है ;

(ग) "ब्लाक" से किसी जिले के भीतर कोई सामुदायिक विकास क्षेत्र अभिप्रेत है, जिसमें ग्राम पंचायतों का एक समूह है ;

(घ) "केन्द्रीय परिषद्" से धारा 10 की उपधारा (1) के अधीन गठित केन्द्रीय नियोजन गारंटी परिषद् अभिप्रेत है ;

(ङ) "जिला कार्यक्रम समन्वयक" से किसी जिले में स्कीम के कार्यान्वयन के लिए धारा 14 की उपधारा (1) के अधीन उस रूप में पदाभिहित राज्य सरकार का कोई अधिकारी अभिप्रेत है ;

---

[1] 2 फरवरी, 2006 – देखिए अधिसूचना सं. का. आ. 87(अ), तारीख 24 जनवरी, 2006, द्वारा कतिपय राज्यों के लिए और 1 अप्रैल, 2006 मेघालय राज्य के लिए देखिए अधिसूचना सं. का. आ. 316(अ), तारीख 14 मार्च, 2006, अधिसूचना सं. का. आ. 453(अ), तारीख 26 मार्च, 2007, अधिसूचना सं. 764(अ), तारीख 15 मई, 2007, अधिसूचना सं. 3(अ), तारीख 31 दिसम्बर, 2007 और अधिसूचना सं. 1684(अ), तारीख 28 सितम्बर, 2007 तथा अधिसूचना सं. सा. का. नि. 3(अ), तारीख 31 दिसम्बर, 2007 विभिन्न राज्यों के लिए विभिन्न तारीखों को अधिसूचित की गई ।

(च) "गृहस्थी" से किसी कुटुम्ब के सदस्य अभिप्रेत हैं, जो एक दूसरे से रक्त, विवाह या दत्तकग्रहण द्वारा संबंधित हैं और सामान्यतः एक साथ निवास करते हैं तथा सम्मिलित रूप से भोजन करते हैं या एक सामान्य राशन कार्ड रखते हैं ;

(छ) "कार्यान्वयन अभिकरण" में केन्द्रीय सरकार या किसी राज्य सरकार का कोई विभाग, कोई जिला परिषद्, मध्यवर्ती स्तर पर पंचायत, पंचायत समिति, ग्राम पंचायत या कोई स्थानीय प्राधिकरण या सरकारी उपक्रम या गैर-सरकारी संगठन, जिसे किसी स्कीम के अधीन किए जाने वाले किसी कार्य का कार्यान्वयन करने के लिए केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार द्वारा प्राधिकृत किया गया है, सम्मिलित है ;

(ज) किसी क्षेत्र के संबंध में "न्यूनतम मजदूरी" से कृषि श्रमिकों के लिए न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 (1948 का 11) की धारा 3 के अधीन राज्य सरकार द्वारा नियत न्यूनतम मजदूरी अभिप्रेत है, जो उस क्षेत्र में लागू है ;

(झ) "राष्ट्रीय निधि" से धारा 20 की उपधारा (1) के अधीन स्थापित राष्ट्रीय नियोजन गारंटी निधि अभिप्रेत है ;

(ञ) "अधिसूचना" से राजपत्र में प्रकाशित अधिसूचना अभिप्रेत है ;

(ट) "अधिमानित कार्य" से कोई ऐसा कार्य अभिप्रेत है जिसे किसी स्कीम के अधीन पूर्विकता के आधार पर कार्यान्वयन के लिए किया जाता है ;

(ठ) "विहित" से इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा विहित अभिप्रेत है ;

(ड) "कार्यक्रम अधिकारी" से स्कीम को कार्यान्वित करने के लिए धारा 15 की उपधारा (1) के अधीन नियुक्त कोई अधिकारी अभिप्रेत है ;

(ढ) "परियोजना" से आवेदकों को नियोजन उपलब्ध कराने के प्रयोजन के लिए किसी स्कीम के अधीन किया जाने वाला कोई कार्य

अभिप्रेत है ;

(ण) "ग्रामीण क्षेत्र" से तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन स्थापित या गठित किसी शहरी स्थानीय निकाय या किसी छावनी बोर्ड के अंतर्गत आने वाले क्षेत्रों के सिवाय किसी राज्य में कोई क्षेत्र अभिप्रेत है ;

(त) "स्कीम" से धारा 4 की उपधारा (1) के अधीन राज्य सरकार द्वारा अधिसूचित कोई स्कीम अभिप्रेत है ;

(थ) "राज्य परिषद्" से धारा 12 की उपधारा (1) के अधीन गठित राज्य नियोजन गारंटी परिषद् अभिप्रेत है ;

(द) "अकुशल शारीरिक कार्य" से कोई भौतिक कार्य अभिप्रेत है जिसे कोई वयस्क व्यक्ति किसी कौशल या विशेष प्रशिक्षण के बिना करने में समर्थ है ;

(ध) "मजदूरी दर" से धारा 6 में निर्दिष्ट मजदूरी दर अभिप्रेत है ।

अध्याय 2

ग्रामीण क्षेत्र में नियोजन की गारंटी

3. **निर्धन गृहस्थियों को ग्रामीण नियोजन की गारंटी** – (1) यथा अन्यथा उपबंधित के सिवाय, राज्य सरकार राज्य में ऐसे ग्रामीण क्षेत्र में जो केन्द्रीय सरकार द्वारा अधिसूचित किया जाए, प्रत्येक गृहस्थी को, जिसके वयस्क सदस्य अकुशल शारीरिक कार्य करने के लिए स्वेच्छा से आगे आते हैं, इस अधिनियम के अधीन बनाई गई स्कीम के अनुसार किसी वित्तीय वर्ष में सौ दिनों से अन्यून के लिए ऐसा कार्य उपलब्ध कराएगी ।

(2) प्रत्येक व्यक्ति जिसने स्कीम के अधीन उसे दिया गया कार्य किया है, प्रत्येक कार्य दिवस के लिए मजदूरी की दर से मजदूरी प्राप्त करने का हकदार होगा ।

(3) इस अधिनियम में अन्यथा उपबंधित के सिवाय दैनिक मजदूरी का संवितरण साप्ताहिक आधार पर या किसी भी दशा में उस तारीख के पश्चात् जिसको ऐसा कार्य किया गया था पन्द्रह दिन के अपश्चात् किया जाएगा ।

(4) केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार, अपनी आर्थिक क्षमता और विकास की सीमाओं के भीतर, किसी स्कीम के अधीन किसी गृहस्थी के प्रत्येक वयस्क सदस्य के लिए उपधारा (1) के अधीन गारंटीकृत अवधि के परे किसी अवधि के लिए, जो समीचीन हो, कार्य सुनिश्चित करने के लिए उपबंध कर सकेगी ।

अध्याय 3

नियोजन गारंटी स्कीमें और बेकारी भत्ता

4. **ग्रामीण क्षेत्रों के लिए नियोजन गारंटी स्कीमें** – (1) धारा 3 के उपबंधों को प्रभावी बनाने के प्रयोजनों के लिए, प्रत्येक राज्य सरकार इस अधिनियम के प्रारंभ की तारीख से छह मास के भीतर, स्कीम के अंतर्गत आने वाले ग्रामीण क्षेत्रों में प्रत्येक गृहस्थी को जिसके वयस्क सदस्य इस अधिनियम द्वारा या उसके अधीन और स्कीम में अधिकथित शर्तों के अधीन रहते हुए अकुशल शारीरिक कार्य करने के लिए स्वेच्छा से आगे आते हैं, किसी वित्तीय वर्ष में सौ दिनों से अन्यून का गारंटीकृत नियोजन उपलब्ध कराने के लिए अधिसूचना द्वारा एक स्कीम बनाएगी :

परन्तु यह कि राज्य सरकार द्वारा किसी ऐसी स्कीम को अधिसूचित किए जाने तक सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना के लिए वार्षिक कार्रवाई योजना या भावी योजना या राष्ट्रीय काम के लिए अनाज कार्य कार्यक्रम, जो ऐसी अधिसूचना से ठीक पूर्व संबंधित क्षेत्र में प्रवृत्त है, इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए स्कीम हेतु कार्रवाई योजना समझा जाएगा ।

(2) राज्य सरकार, कम से कम दो स्थानीय समाचार पत्रों में, जिनमें से एक ऐसे क्षेत्र या क्षेत्रों में जिसको ऐसी स्कीम लागू होगी, परिचालित जन भाषा में होगा, उसके द्वारा बनाई गई स्कीम का सार प्रकाशित करेगी ।

(3) उपधारा (1) के अधीन बनाई गई स्कीम अनुसूची 1 में विनिर्दिष्ट न्यूनतम बातों के लिए उपबंध करेगी ।

5. **गारंटीकृत नियोजन उपलब्ध कराने के लिए शर्तें** – (1) राज्य सरकार अनुसूची 2 में विनिर्दिष्ट शर्तों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, इस अधिनियम के अधीन गारंटीकृत नियोजन उपलब्ध कराने के लिए स्कीम में शर्तें विनिर्दिष्ट कर सकेगी ।

(2) इस अधिनियम के अधीन बनाई गई किसी स्कीम के अधीन नियोजित व्यक्ति ऐसी सुविधाओं का हकदार होगा जो अनुसूची 2 में विनिर्दिष्ट न्यूनतम सुविधाओं से कम नहीं है ।

6. **मजदूरी दर** – (1) न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 (1948 का 11) में किसी बात के होते हुए भी, केन्द्रीय सरकार, इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए, अधिसूचना द्वारा, मजदूरी दर विनिर्दिष्ट[1] कर सकेगी :

परन्तु यह कि विभिन्न क्षेत्रों के लिए मजदूरी की भिन्न-भिन्न दरें विनिर्दिष्ट की जा सकेंगी :

परन्तु यह और कि किसी ऐसी अधिसूचना के अधीन समय-समय पर विनिर्दिष्ट मजदूरी दर साठ रुपए प्रतिदिन से कम की दर पर नहीं होगी ।

(2) किसी राज्य में किसी क्षेत्र के संबंध में केन्द्रीय सरकार द्वारा कोई मजदूरी दर नियत किए जाने के समय तक, कृषि श्रमिकों के लिए न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 (1948 का 11) की धारा 3 के अधीन राज्य सरकार द्वारा नियत न्यूनतम मजदूरी उस क्षेत्र को लागू मजदूरी दर समझी जाएगी ।

7. **बेकारी भत्ते का संदाय** – (1) यदि स्कीम के अधीन नियोजन के लिए किसी आवेदक को, नियोजन चाहने वाले उसके आवेदन की प्राप्ति के या उस तारीख से जिसको किसी अग्रिम आवेदन की दशा में नियोजन चाहा गया है, इनमें से जो भी पश्चात्वर्ती हो, पन्द्रह दिन के भीतर ऐसा नियोजन उपलब्ध नहीं कराया जाता है तो वह इस धारा के अनुसार एक दैनिक बेकारी भत्ते का हकदार होगा ।

(2) पात्रता के ऐसे निबंधनों और शर्तों के अधीन रहते हुए, जो राज्य सरकार द्वारा विहित की जाएं तथा इस अधिनियम और स्कीमों और राज्य सरकार की आर्थिक क्षमता के अधीन रहते हुए, उपधारा (1) के अधीन संदेय बेकारी भत्ता किसी गृहस्थी के आवेदकों को गृहस्थी की हकदारी के

---

[1] अधिसूचना सं. का. आ. 1(अ), तारीख 1 जनवरी, 2009 द्वारा अधिसूचित तथा अधिसूचना सं. का. आ. 1387(अ), तारीख 1 जून, 2009 और अधिसूचना सं. का. आ. 286(अ), तारीख 11 नवम्बर, 2009 द्वारा पश्चात्वर्ती संशोधित ।

अधीन रहते हुए, ऐसी दर से जो राज्य परिषद् के परामर्श से, अधिसूचना द्वारा, राज्य सरकार द्वारा विनिर्दिष्ट की जाए, संदत्त किया जाएगा :

परन्तु यह कि कोई ऐसी दर वित्तीय वर्ष के दौरान पहले तीस दिनों के लिए मजदूरी दर के एक चौथाई से कम नहीं होगी और वित्तीय वर्ष की शेष अवधि के लिए मजदूरी दर के एक बटा दो से अन्यून नहीं होगी ।

(3) किसी वित्तीय वर्ष के दौरान किसी गृहस्थी को बेकारी भत्ते का संदाय करने का राज्य सरकार का दायित्व समाप्त हो जाएगा जैसे ही –

(क) आवेदक को, ग्राम पंचायत या कार्यक्रम अधिकारी द्वारा या तो स्वयं कार्य के लिए रिपोर्ट करने या उसकी गृहस्थी के कम से कम एक वयस्क सदस्य को तैनात करने के लिए निदेशित किया जाता है ; या

(ख) वह अवधि जिसके लिए नियोजन चाहा गया है, समाप्त हो जाती है और आवेदक की गृहस्थी का कोई सदस्य नियोजन के लिए नहीं आता है ; या

(ग) आवेदक की गृहस्थी के वयस्क सदस्यों ने उस वित्तीय वर्ष के भीतर कुल मिलाकर कम से कम सौ दिनों का कार्य प्राप्त कर लिया है ; या

(घ) आवेदक की गृहस्थी ने मजदूरी और बेकारी भत्ता, दोनों को मिलाकर उतना उपार्जित कर लिया है, जो वित्तीय वर्ष के दौरान कार्य के सौ दिनों की मजदूरी के बराबर है ।

(4) गृहस्थी के किसी आवेदक को संयुक्त रूप से संदेय बेकारी भत्ता कार्यक्रम अधिकारी या ऐसे स्थानीय प्राधिकारी द्वारा (जिसके अन्तर्गत जिला मध्यवर्ती या ग्राम स्तर का पंचायत है), जिसे राज्य सरकार अधिसूचना द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत करे, मंजूर और संवितरित किया जाएगा ।

(5) उपधारा (1) के अधीन बेकारी भत्ते का प्रत्येक संदाय, उस तारीख से जिसको वह संदाय के लिए शोध्य हो जाता है, पन्द्रह दिन के अपश्चात् किया जाएगा या प्रस्तावित किया जाएगा ।

(6) राज्य सरकार इस अधिनियम के अधीन बेकारी भत्ते के संदाय के

लिए प्रक्रिया विहित कर सकेगी ।

8. **कतिपय परिस्थितियों में बेकारी भत्ते का संवितरण न करना** – (1) यदि कार्यक्रम अधिकारी, अपने नियंत्रण के परे किसी कारण से बेकारी भत्ते का समय पर या बिल्कुल संवितरण करने की स्थिति में नहीं है, तो वह जिला कार्यक्रम समन्वयक को मामले की रिपोर्ट करेगा और अपने सूचना पट्ट पर और ग्राम पंचायत के सूचना पट्ट पर तथा ऐसे अन्य सहजदृश्य स्थानों पर जो वह आवश्यक समझे, संप्रदर्शित की जाने वाली किसी सूचना में ऐसे कारणों की घोषणा करेगा ।

(2) बेकारी भत्ते का संदाय न करने या विलंब से संदाय के प्रत्येक मामले की जिला कार्यक्रम समन्वयक द्वारा राज्य सरकार को प्रस्तुत की गई वार्षिक रिपोर्ट में, ऐसे संदाय न करने या विलंब से संदाय के कारणों सहित, रिपोर्ट की जाएगी ।

(3) राज्य सरकार, उपधारा (1) के अधीन रिपोर्ट किए गए बेकारी भत्ते का संबंधित गृहस्थी को यथासंभव शीघ्रता से संदाय करने के सभी उपाय करेगी ।

9. **कतिपय परिस्थितियों में बेकारी भत्ता प्राप्त करने के हक से वंचित रहना** – कोई आवेदक जो –

(क) किसी स्कीम के अधीन अपनी गृहस्थी को उपलब्ध नियोजन स्वीकार नहीं करता है ; या

(ख) कार्य के लिए रिपोर्ट करने के लिए कार्यक्रम अधिकारी या कार्यान्वयन अभिकरण द्वारा अधिसूचित किए जाने के पन्द्रह दिन के भीतर कार्य के लिए रिपोर्ट नहीं करता है ; या

(ग) संबंधित कार्यान्वयन अभिकरण से कोई अनुज्ञा प्राप्त किए बिना एक सप्ताह से अधिक की अवधि के लिए कार्य से लगातार अनुपस्थित रहता है या किसी मास में एक सप्ताह से अधिक की कुल अवधि के लिए अनुपस्थित रहता है,

तो वह तीन मास की अवधि के लिए इस अधिनियम के अधीन संदेय बेकारी भत्ते का दावा करने का हकदार नहीं होगा किन्तु किसी भी समय स्कीम के अधीन नियोजन चाहने का हकदार होगा ।

अध्याय 4

कार्यान्वित और मानीटर करने वाले प्राधिकारी

10. **केन्द्रीय रोजगार गारंटी परिषद्** – (1) ऐसी तारीख से, जिसे केन्द्रीय सरकार, अधिसूचना द्वारा विनिर्दिष्ट करे, केन्द्रीय रोजगार गारंटी परिषद् के नाम से एक परिषद् इस अधिनियम द्वारा या उसके अधीन उसे समनुदेशित कृत्यों और कर्तव्यों का पालन करने के लिए गठित की जाएगी ।

(2) केन्द्रीय परिषद् का मुख्यालय दिल्ली में होगा ।

(3) केन्द्रीय परिषद् निम्नलिखित सदस्यों से मिलकर बनेगी, जिन्हें केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त किया जाएगा, अर्थात् :–

(क) अध्यक्ष ;

(ख) केन्द्रीय मंत्रालयों के, जिनके अन्तर्गत योजना आयोग भी है, भारत सरकार के संयुक्त सचिव से अन्यून की पंक्ति के उतनी संख्या से अनधिक, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा अवधारित की जाए, प्रतिनिधि ;

(ग) राज्य सरकारों के उतनी संख्या से अनधिक में, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा अवधारित की जाए, प्रतिनिधि ;

(घ) पंचायती राज्य संस्थाओं, कर्मकार संगठनों और असुविधाग्रस्त समूहों का प्रतिनिधित्व करने वाले पंद्रह से अनधिक गैर-सरकारी सदस्य :

परन्तु यह कि ऐसे गैर-सरकारी सदस्यों में केन्द्रीय सरकार द्वारा एक समय में एक वर्ष की अवधि के लिए चक्रानुक्रम से नामनिर्देशित जिला पंचायतों के दो अध्यक्ष सम्मिलित होंगे :

परन्तु यह और कि इस खंड के अधीन नामनिर्देशित एक-तिहाई से अन्यून गैर-सरकारी सदस्य महिलाएं होंगी :

परन्तु यह भी कि गैर-सरकारी सदस्यों के एक-तिहाई से अन्यून सदस्य अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, अन्य पिछड़े वर्गों और अल्पसंख्यकों के होंगे ;

(ङ) राज्यों के उतनी संख्या में प्रतिनिधि होंगे, जो केन्द्रीय सरकार इस निमित्त नियमों द्वारा अवधारित करे ;

(च) भारत सरकार के संयुक्त सचिव की पंक्ति से अन्यून की पंक्ति का एक सदस्य सचिव ।

(4) वे निबन्धन और शर्तें जिनके अधीन रहते हुए, केन्द्रीय परिषद् का अध्यक्ष और अन्य सदस्य नियुक्त किए जा सकेंगे तथा केन्द्रीय परिषद् की बैठकों का समय, स्थान और प्रक्रिया (जिसके अंतर्गत ऐसी बैठकों में गणपूर्ति भी है) वह होगी जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित की जाए ।

11. **केन्द्रीय परिषद् के कृत्य और कर्तव्य** – (1) केन्द्रीय परिषद् निम्नलिखित कृत्यों और कर्तव्यों का पालन और निर्वहन करेगी, अर्थात् :–

(क) केन्द्रीय मूल्यांकन और मानीटरी प्रणाली स्थापित करना ;

(ख) इस अधिनियम के कार्यान्वयन से संबंधित सभी विषयों पर केन्द्रीय सरकार को सलाह देना ;

(ग) समय-समय पर मानीटरी और प्रतितोष तंत्र का पुनर्विलोकन करना तथा अपेक्षित सुधारों की सिफारिश करना ;

(घ) इस अधिनियम के अधीन बनाई गई स्कीमों के संबंध में जानकारी के विस्तृत संभव प्रसार का संवर्धन करना ;

(ङ) इस अधिनियम के कार्यान्वयन को मानीटर करना ;

(च) इस अधिनियम के कार्यान्वयन पर केन्द्रीय सरकार द्वारा संसद् के समक्ष रखे जाने के लिए वार्षिक रिपोर्टें तैयार करना ;

(छ) कोई अन्य कर्तव्य और कृत्य, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा समनुदेशित किए जाएं ।

(2) केन्द्रीय परिषद् को इस अधिनियम के अधीन बनाई गई विभिन्न स्कीमों का मूल्यांकन करने की शक्ति होगी और उस प्रयोजन के लिए ग्रामीण अर्थव्यवस्था और स्कीमों के कार्यान्वयन से संबंधित आंकड़े संगृहीत करेगी या संगृहीत कराएगी ।

12. **राज्य रोजगार गारंटी परिषद्** – (1) राज्य स्तर पर, इस

अधिनियम के कार्यान्वयन का नियमित रूप से मानीटर और पुनर्विलोकन करने के प्रयोजनों के लिए प्रत्येक राज्य सरकार................(राज्य का नाम) राज्य रोजगार गारंटी परिषद् के नाम से एक राज्य परिषद् का गठन करेगी जिसमें एक अध्यक्ष और उतनी संख्या में गैर-सरकारी सदस्य, जो राज्य सरकार द्वारा अवधारित किए जाएं तथा राज्य सरकार द्वारा पंचायती राज्य संस्थाओं, कर्मकार संगठनों और असुविधाग्रस्त समूहों से नामनिर्दिष्ट पंद्रह से अनधिक गैर-सरकारी सदस्य होंगे :

परन्तु इस खंड के अधीन नामनिर्देशित गैर-सरकारी सदस्यों के एक-तिहाई से अन्यून सदस्य महिलाएं होंगी :

परन्तु यह और कि गैर-सरकारी सदस्यों के एक-तिहाई से अन्यून सदस्य अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, अन्य पिछड़े वर्गों और अल्पसंख्यकों के होंगे ।

(2) वे निबन्धन और शर्तें जिनके अधीन रहते हुए राज्य परिषद् का अध्यक्ष और सदस्य नियुक्त किए जा सकेंगे तथा राज्य परिषद् की बैठकों का समय, स्थान और प्रक्रिया (जिसके अन्तर्गत ऐसी बैठकों में गणपूर्ति भी है) वह होगी जो राज्य सरकार द्वारा विहित की जाए ।

(3) राज्य परिषद् के कर्तव्यों और कृत्यों में निम्नलिखित सम्मिलित होंगे –

(क) स्कीम और राज्य में उसके कार्यान्वयन से संबंधित सभी विषयों पर राज्य सरकार को सलाह देना ;

(ख) अधिमानित कार्यों का अवधारण करना ;

(ग) समय-समय पर मानीटरी और प्रतितोष तंत्र का पुनर्विलोकन करना तथा अपेक्षित सुधारों की सिफारिश करना ;

(घ) इस अधिनियम और इसके अधीन स्कीमों के संबंध में जानकारी के विस्तृत संभव प्रसार का समर्थन करना ;

(ङ) राज्य में इस अधिनियम और स्कीमों के कार्यान्वयन को मानीटर करना तथा ऐसे कार्यान्वयन का केन्द्रीय परिषद् के साथ समन्वय करना ;

(च) राज्य सरकार द्वारा राज्य विधान-मंडल के समक्ष रखी जाने वाली वार्षिक रिपोर्टें तैयार करना ;

(छ) कोई अन्य कर्तव्य और कृत्य जो उसे केन्द्रीय परिषद् और राज्य सरकार द्वारा समनुदेशित किया जाए ।

(4) राज्य परिषद् को, राज्य में प्रचालित स्कीमों का मूल्यांकन करने तथा उस प्रयोजन के लिए ग्रामीण अर्थव्यवस्था और स्कीमों तथा कार्यक्रमों के कार्यान्वयन से संबंधित आंकड़े संगृहीत करने या संगृहीत करवाने की शक्ति होगी ।

13. **स्कीमों की योजना और कार्यान्वयन के लिए प्रधान प्राधिकारी** – (1) इस अधिनियम के अधीन बनाई गई स्कीमों की योजना और कार्यान्वयन के लिए जिला, मध्यवर्ती और ग्राम स्तरों पर पंचायतें, प्रधान प्राधिकारी होंगी ।

(2) जिला स्तर पर पंचायतों के निम्नलिखित कृत्य होंगे –

(क) स्कीम के अधीन किसी कार्यक्रम के अंतर्गत कार्यान्वित की जाने वाली परियोजनाओं के ब्लाक अनुसार शेल्फ को अंतिम रूप देना और उसका अनुमोदन करना ;

(ख) ब्लाक स्तर और जिला स्तर पर कार्यान्वित की जाने वाली परियोजनाओं का पर्यवेक्षण और मानीटर करना ; और

(ग) ऐसे अन्य कृत्य करना, जो राज्य परिषद् द्वारा समय-समय पर उसे समनुदेशित किए जाएं ।

(3) मध्यवर्ती स्तर पर पंचायत के निम्नलिखित कृत्य होंगे –

(क) अंतिम अनुमोदन के लिए जिला स्तर पर जिला पंचायत को भेजने के लिए ब्लाक योजना का अनुमोदन करना ;

(ख) ग्राम पंचायत स्तर और ब्लाक स्तर पर कार्यान्वित की जाने वाली परियोजनाओं का पर्यवेक्षण और मानीटर करना ; और

(ग) ऐसे अन्य कृत्य करना, जो राज्य परिषद् द्वारा समय-समय पर उसे समनुदेशित किए जाएं ।

(4) जिला कार्यक्रम समन्वयक, इस अधिनियम और उसके अधीन बनाई गई किसी स्कीम के अधीन उसके कृत्यों का निर्वहन करने में पंचायत की सहायता करेगा ।

14. **जिला कार्यक्रम समन्वयक** – (1) जिला पंचायत के मुख्य कार्यपालक अधिकारी या जिले के कलक्टर या समुचित पंक्ति के किसी अन्य जिला स्तर के अधिकारी को, जिसका राज्य सरकार विनिश्चय करे, जिले में स्कीम के कार्यान्वयन के लिए जिला कार्यक्रम समन्वयक के रूप में पदाभिहित किया जाएगा ।

(2) जिला कार्यक्रम समन्वयक, इस अधिनियम और उसके अधीन बनाए गए नियमों के उपबन्धों के अनुसार जिले में स्कीम के कार्यान्वयन के लिए उत्तरदायी होगा ।

(3) जिला कार्यक्रम समन्वयक के निम्नलिखित कृत्य होंगे –

(क) इस अधिनियम और उसके अधीन बनाई गई किसी स्कीम के अधीन उसके कृत्यों के निर्वहन में जिला पंचायत की सहायता करना ;

(ख) ब्लाक द्वारा तैयार की गई योजनाओं और जिला स्तर पर पंचायत द्वारा अनुमोदित की जाने वाली परियोजनाओं के शेल्फ में सम्मिलित करने के लिए अन्य कार्यान्वयन अभिकरणों से प्राप्त परियोजना प्रस्तावों का समेकन करना ;

(ग) आवश्यक मंजूरी और प्रशासनिक अनापत्ति, जहां कहीं आवश्यक हो, प्रदान करना ;

(घ) यह सुनिश्चित करने के लिए कि आवेदकों को इस अधिनियम के अधीन उनकी हकदारी के अनुसार नियोजन उपलब्ध कराए जा रहे हैं, अपनी अधिकारिता के भीतर कृत्य कर रहे कार्यक्रम अधिकारियों और कार्यान्वयन अभिकरणों के साथ समन्वय करना ;

(ङ) कार्यक्रम अधिकारियों के कार्यपालन का पुनर्विलोकन, मानीटर और पर्यवेक्षण करना ;

(च) चल रहे कार्य का नियतकालिक निरीक्षण करना ; और

(छ) आवेदकों की शिकायतों को दूर करना ।

(4) राज्य सरकार, ऐसी प्रशासनिक और वित्तीय शक्तियों का जिला कार्यक्रम समन्वयक को प्रत्यायोजन करेगी जो इस अधिनियम के अधीन उसके कृत्यों को कार्यान्वित करने हेतु उसे समर्थ बनाने के लिए अपेक्षित हों ।

(5) धारा 15 की उपधारा (1) के अधीन नियुक्त कार्यक्रम अधिकारी और जिले के भीतर कृत्य कर रहे राज्य सरकार, स्थानीय प्राधिकरणों तथा निकायों के सभी अन्य अधिकारी, इस अधिनियम तथा तद्धीन बनाई गई स्कीमों के अधीन उसके कृत्यों को कार्यान्वित करने में जिला कार्यक्रम समन्वयक की सहायता करने के लिए उत्तरदायी होंगे ।

(6) जिला कार्यक्रम समन्वयक, आगामी वित्तीय वर्ष के लिए श्रम बजट प्रत्येक वर्ष के दिसंबर मास में तैयार करेगा जिसमें जिले में अकुशल शारीरिक कार्य के लिए पूर्वानुमानित मांग और स्कीम के अंतर्गत आने वाले कार्यों में श्रमिकों को लगाने की योजना के ब्यौरे होंगे और उसे जिला पंचायत की स्थायी समिति को प्रस्तुत करेगा ।

15. **कार्यक्रम अधिकारी** – (1) मध्यवर्ती स्तर पर प्रत्येक पंचायत के लिए, राज्य सरकार किसी व्यक्ति को, जो ब्लाक विकास अधिकारी से नीचे की पंक्ति का न हो, ऐसी अर्हताओं और अनुभव के साथ जैसी कि राज्य सरकार द्वारा अवधारित की जाएं, मध्यवर्ती स्तर पर पंचायत के लिए कार्यक्रम अधिकारी के रूप में नियुक्त करेगी ।

(2) कार्यक्रम अधिकारी, इस अधिनियम और उसके अधीन बनाई गई किसी स्कीम के अधीन मध्यवर्ती स्तर पर पंचायत को उसके कृत्यों का निर्वहन करने में सहायता करेगा ।

(3) कार्यक्रम अधिकारी अपनी अधिकारिता के अधीन क्षेत्र में परियोजनाओं से उद्भूत नियोजन अवसरों के साथ नियोजन की मांग का मेल करने के लिए उत्तरदायी होगा ।

(4) कार्यक्रम अधिकारी, ग्राम पंचायतों द्वारा तैयार किए गए परियोजना प्रस्तावों और मध्यवर्ती पंचायतों से प्राप्त प्रस्तावों का समेकन करके अपनी अधिकारिता के अधीन ब्लाक के लिए एक योजना तैयार करेगा ।

(5) कार्यक्रम अधिकारी के कृत्यों में निम्नलिखित सम्मिलित होंगे –

(क) ब्लाक के भीतर ग्राम पंचायतों और अन्य कार्यान्वयन अभिकरणों द्वारा कार्यान्वित की जाने वाली परियोजनाओं को मानीटर करना ;

(ख) पात्र गृहस्थियों को बेकारी भत्ता मंजूर करना और उसका संदाय सुनिश्चित करना ;

(ग) ब्लाक के भीतर स्कीम के किसी कार्यक्रम के अधीन नियोजित सभी श्रमिकों को मजदूरी का तुरंत और उचित संदाय सुनिश्चित करना ;

(घ) यह सुनिश्चित करना कि ग्राम सभा द्वारा ग्राम पंचायत की अधिकारिता के भीतर सभी कार्यों की नियमित सामाजिक संपरीक्षा की जा रही है और यह कि सामाजिक संपरीक्षा में उठाए गए आक्षेपों पर अनुवर्ती कार्रवाई की जा रही है ;

(ङ) सभी शिकायतों को तत्परता से निपटाना जो ब्लाक के भीतर स्कीम के कार्यान्वयन के संबंध में उत्पन्न हों ; और

(च) कोई अन्य कार्य करना जो जिला कार्यक्रम समन्वयक या राज्य सरकार द्वारा उसे समनुदेशित किया जाए ।

(6) कार्यक्रम अधिकारी, जिला कार्यक्रम समन्वयक के निदेशन, नियंत्रण और अधीक्षण के अधीन कृत्य करेगा ।

(7) राज्य सरकार, आदेश द्वारा निदेश दे सकेगी कि किसी कार्यक्रम अधिकारी के सभी या किन्हीं कृत्यों का ग्राम पंचायत या किसी स्थानीय प्राधिकारी द्वारा निर्वहन किया जाएगा ।

16. **ग्राम पंचायतों के उत्तरदायित्व** – (1) ग्राम पंचायत, ग्राम सभा और वार्ड सभाओं की सिफारिशों के अनुसार किसी स्कीम के अधीन ग्राम पंचायत क्षेत्र में कार्यान्वयन के लिए ली जाने वाली परियोजना की पहचान और ऐसे कार्य के निष्पादन और पर्यवेक्षण के लिए उत्तरदायी होगी ।

(2) कोई ग्राम पंचायत, ग्राम पंचायत के क्षेत्र के भीतर किसी स्कीम के अधीन किसी परियोजना को जिसे कार्यक्रम अधिकारी द्वारा मंजूर किया

जाए, ले सकेगी ।

(3) प्रत्येक ग्राम पंचायत, ग्राम पंचायत और वार्ड सभाओं की सिफारिश पर विचार करने के पश्चात् एक विकास योजना तैयार करेगी और स्कीम के अधीन जब कभी कार्य की मांग उत्पन्न होती है, किए जाने वाले संभव कार्यों का एक शेल्फ रखेगी ।

(4) ग्राम पंचायत, परियोजनाओं के विकास के लिए जिसके अंतर्गत उस वर्ष के प्रारंभ से जिसमें इसे निष्पादित किया जाना प्रस्तावित है, की संवीक्षा और प्रारंभिक पूर्वानुमोदन के लिए कार्यक्रम अधिकारी को विभिन्न कार्यों के बीच अग्रता का क्रम सम्मिलित है, अपने प्रस्तावों को अग्रेषित करेगी ।

(5) कार्यक्रम अधिकारी, ग्राम पंचायत के माध्यम से कार्यान्वित की जाने वाली किसी स्कीम के अधीन उसकी लागत के अनुसार कम से कम पचास प्रतिशत कार्य को आबंटित करेगा ।

(6) कार्यक्रम अधिकारी, प्रत्येक ग्राम पंचायत को निम्नलिखित का प्रदाय करेगा, –

(क) उसके द्वारा निष्पादित किए जाने वाले स्वीकृत कार्य के लिए मस्टर रोल ; और

(ख) ग्राम पंचायत के निवासियों को अन्यत्र उपलब्ध नियोजन के अवसरों की एक सूची ।

(7) ग्राम पंचायत आवेदकों के बीच नियोजन के अवसरों का आबंटन करेगी तथा कार्य के लिए उनसे रिपोर्ट करने के लिए कहेगी ।

(8) किसी स्कीम के अधीन किसी ग्राम पंचायत द्वारा आरंभ किया गया कार्य अपेक्षित तकनीकी मानकों और मापमानों को पूरा करेगा ।

17. **ग्राम सभा द्वारा कार्य की सामाजिक संपरीक्षा** – (1) ग्राम सभा, ग्राम पंचायत के भीतर कार्य के निष्पादन को मानीटर करेगी ।

(2) ग्राम सभा, ग्राम पंचायत के भीतर आरंभ की गई स्कीम के अधीन सभी परियोजनाओं की नियमित सामाजिक संपरीक्षा करेगी ।

(3) ग्राम पंचायत, सभी सुसंगत दस्तावेज, जिनके अन्तर्गत मस्टर रोल, बिल, वाउचर माप पुस्तिकाएं, मंजूरी आदेशों की प्रतियां और अन्य संबंधित लेखा बहियां और कागजपत्र भी हैं, सामाजिक संपरीक्षा करने के प्रयोजन के लिए ग्राम सभा को उपलब्ध कराएगी ।

18. **स्कीम के कार्यान्वयन में राज्य सरकारों के उत्तरदायित्व** – राज्य सरकार जिला कार्यक्रम समन्वयक और कार्यक्रम अधिकारियों को ऐसे अनिवार्य कर्मचारिवृन्द और तकनीकी सहायता, जो स्कीमों के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए आवश्यक हों, उपलब्ध कराएगी ।

19. **शिकायत दूर करने हेतु तंत्र** – राज्य सरकार स्कीम के कार्यान्वयन की बाबत किसी व्यक्ति द्वारा की गई किसी शिकायत के निपटान के लिए, नियमों द्वारा ब्लाक स्तर और जिला स्तर पर शिकायत दूर करने हेतु समुचित तंत्र अवधारित करेगी और ऐसी शिकायतों के निपटारे के लिए प्रक्रिया अधिकथित करेगी ।

अध्याय 5

राष्ट्रीय और राज्य रोजगार गारंटी निधियों की स्थापना और संपरीक्षा

20. **राष्ट्रीय रोजगार गारंटी निधि** – (1) केन्द्रीय सरकार, इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए, अधिसूचना द्वारा, राष्ट्रीय रोजगार गारंटी निधि के नाम से ज्ञात एक निधि स्थापित करेगी ।

(2) केन्द्रीय सरकार, संसद् द्वारा विधि द्वारा इस निमित्त किए गए सम्यक् विनियोग के पश्चात् अनुदान या उधार के रूप में ऐसी धनराशि, जिसे केन्द्रीय सरकार राष्ट्रीय निधि के लिए आवश्यक समझे, जमा कर सकेगी ।

(3) राष्ट्रीय निधि के खाते में जमा रकम का ऐसी रीति से और ऐसी शर्तों और परिसीमाओं के अधीन रहते हुए, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित की जाएं, उपयोग किया जाएगा ।

21. **राज्य रोजगार गारंटी निधि** – (1) राज्य सरकार, स्कीम के कार्यान्वयन के प्रयोजनों के लिए, अधिसूचना द्वारा, राज्य रोजगार गारंटी निधि के नाम से ज्ञात एक निधि स्थापित करेगी ।

(2) राज्य निधि के खाते में जमा रकम, ऐसी रीति से और ऐसी शर्तों

और परिसीमाओं के अधीन रहते हुए, जो इस अधिनियम और उसके अधीन बनाई गई स्कीमों के कार्यान्वयन के प्रयोजनों के लिए राज्य सरकार द्वारा विहित की जाएं और इस अधिनियम के कार्यान्वयन के संबंध में प्रशासनिक खर्चों को पूरा करने के लिए, व्यय की जाएगी ।

(3) राज्य निधि, राज्य सरकार की ओर से ऐसी रीति में और ऐसे प्राधिकारी द्वारा, जो राज्य सरकार द्वारा विहित किया जाए, धारित और प्रशासित की जाएगी ।

22. **वित्तपोषण पैटर्न** – (1) ऐसे नियमों के, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा इस निमित्त बनाए जाएं, अधीन रहते हुए, केन्द्रीय सरकार निम्नलिखित की लागत को पूरा करेगी, अर्थात् :–

(क) स्कीम के अधीन अकुशल शारीरिक कार्य के लिए मजदूरी के संदाय के लिए अपेक्षित रकम ;

(ख) स्कीम की सामग्री लागत के तीन-चौथाई तक रकम, जिसके अंतर्गत अनुसूची 2 के उपबंधों के अधीन रहते हुए कुशल और अर्धकुशल कर्मकारों को मजदूरी का संदाय भी है ;

(ग) स्कीम की कुल लागत का ऐसा प्रतिशत, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा प्रशासनिक खर्चों के प्रति अवधारित किया जाए, जिसके अंतर्गत कार्यक्रम अधिकारियों और उनके सहायक कर्मचारिवृन्द के वेतन और भत्ते, केन्द्रीय परिषद् के प्रशासनिक खर्च, अनुसूची 2 के अधीन दी जाने वाली सुविधाएं और ऐसी अन्य मद भी हैं, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विनिश्चित की जाएं ।

(2) राज्य सरकार निम्नलिखित की लागत को पूरा करेगी, अर्थात् :–

(क) स्कीम के अंतर्गत संदेय बेकारी भत्ते की लागत ;

(ख) स्कीम की सामग्री लागत का एक चौथाई, जिसके अंतर्गत अनुसूची 2 के अधीन रहते हुए कुशल और अर्धकुशल कर्मकारों की मजदूरी का संदाय भी है ;

(ग) राज्य परिषद् के प्रशासनिक खर्च ।

23. **पारदर्शिता और उत्तरदायित्व** – (1) जिला कार्यक्रम समन्वयक

और जिले के सभी कार्यान्वयन अभिकरण, किसी स्कीम के कार्यान्वयन के प्रयोजन के लिए उनके व्ययन पर रखी गई निधि के उचित उपयोग और प्रबंध के लिए उत्तरदायी होंगे ।

(2) राज्य सरकार, इस अधिनियम के उपबंधों और उसके अधीन बनाई गई स्कीमों के कार्यान्वयन के संबंध में श्रमिकों के नियोजन और उपगत व्यय की समुचित बहियां और लेखा रखने की रीति विहित कर सकेगी ।

(3) राज्य सरकार, नियमों द्वारा, स्कीमों और स्कीमों के अधीन कार्यक्रमों के उचित निष्पादन के लिए और स्कीमों के कार्यान्वयन में सभी स्तरों पर पारदर्शिता और दायित्व सुनिश्चित करने के लिए, की जाने वाली व्यवस्थाओं को अवधारित कर सकेगी ।

(4) नकद रूप में मजदूरी और बेकारी भत्ते के सभी संदाय, सीधे संबद्ध व्यक्ति को और पूर्व घोषित तारीखों पर समुदाय के स्वतंत्र व्यक्तियों की उपस्थिति में किए जाएंगे ।

(5) यदि ग्राम पंचायत द्वारा किसी स्कीम के कार्यान्वयन से संबंधित कोई विवाद या शिकायत उत्पन्न होती है तो वह मामला कार्यक्रम अधिकारी को निर्देशित किया जाएगा ।

(6) कार्यक्रम अधिकारी प्रत्येक शिकायत की उसके द्वारा रखे शिकायत रजिस्टर में प्रविष्टि करेगा और विवादों तथा शिकायतों को उसकी प्राप्ति से सात दिन के भीतर निपटाएगा और यदि वे ऐसे मामले से संबंधित है जिसे किसी अन्य प्राधिकारी द्वारा सुलझाया जाना है तो वे उसे शिकायतकर्ता को सूचना देते हुए, ऐसे प्राधिकारी को अग्रेषित करेगा ।

24. **लेखाओं की संपरीक्षा** – (1) केन्द्रीय सरकार, भारत के नियंत्रक और महालेखा परीक्षक के परामर्श से, स्कीमों के लेखाओं की सभी स्तरों पर संपरीक्षा के लिए समुचित व्यवस्थाएं विहित कर सकेगी ।

(2) स्कीम के लेखा ऐसे प्ररूप में और ऐसी रीति से जो राज्य सरकार द्वारा विहित की जाए, रखे जाएंगे ।

क्रमशः अगामी अंक में ....